1998 से निरंतर प्रकाशित

ISSN 2581-446X

वर्ष-7, अंक-2, 3, अक्टूबर-नवम्बर 2023 - दिसम्बर-जनवरी 2024 संयुक्तांक, ₹50/-

RNI. No. MPHIN/2017/73838

'कला समय' पाठकों के विश्वास और भरोसे का 27 वाँ वर्ष...

# कला समय

कला, संस्कृति, साहित्य एवं समसामयिक द्वैमासिक पत्रिका

## ॥ श्री रामलला विराजमान ॥

श्री राम पर एकाग्र विशेषांक

संपादक : भँवरलाल श्रीवास

# कला समय प्रकाशन

कथेतर गद्य में नई विधा स्थापित करने वाली पहली पुस्तक

## छोटे मुँह छोटी सी बात

### लेखक : संतोष तिवारी

इसी पुस्तक से–

1. सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की विचारधारा का एक अंग चिकित्सकीय राष्ट्रवाद भी था। इसी अवधारणा के अन्तर्गत आयुर्वेद का नवजागरण हुआ।
(आयुर्वेद संस्थान भोपाल का शिलान्यास)
2. हिन्दी पत्रकारिता की कहानी भारतीय राष्ट्रीयता की कहानी भी है जिसे जुगल किशोर सुकुल के ''उदन्त मार्तण्ड'' से लेकर गांधीजी के हरिजन और नवजीवन तक के पुष्ट किया। राजेन्द्र माथुर की पत्रकारिता भी विशुद्ध राष्ट्रवाद को समर्पित थी।
(राजेन्द्र माथुर स्मृति पत्रकारिता फैलोशिप)
3. अभी लोग इस रास्ते से ना जाने का तरीका ढूँढते हैं, भविष्य में यहीं से जायें इसका बहाना ढूंढेंगे। आज लोग यहाँ से निकलने की भूल नहीं करते कल वे यहाँ आकर सब भूल जाना चाहेंगे। अभी जो इस जगह से परेशान होते हैं आने वाले समय में वे इसे देखकर हैरान होंगे।
(व्ही.आई.पी. रोड, भोपाल का शिलान्यास)
4. प्राणी मात्र अस्तित्व चाहता है और इसी के साथ न्याय भी चाहता है। ये दोनों इच्छायें आपस में गुंथी हुई हैं– अनुस्यूत है, शेर अपने नवजात शावक की रक्षा जी–जान से करता है मगर उसे ज़िन्दा रखने के लिये हिरण के बच्चे का शिकार करता है, अपने लिए न्याय कि शावक को कोई न मारे मगर हिरण के बच्चे के लिए यह सोच नहीं। यही वृत्ति मनुष्य में भी है, डाकू नहीं चाहता कि उसके घर चोरी हो। स्वयं के लिए न्याय मगर दूसरों के लिए परवाह नहीं। यहीं से नियम, कानून, अदालत और वकीलों की शुरुआत होती है।
(राष्ट्रीय विधि संस्थान, भोपाल का शुभारंभ)
5. अपने में थोड़ी सी भी शक्ति के आभास से हम उछलने लगते हैं, उबलने लगते हैं। परहित के प्रति उदासीन होकर छोटे बने रहते हैं और निजहित के लिए विराट और विकराल रूप धारण कर लेते हैं। यह पवन पुत्र के चरित्र के ठीक विपरीत है।
(संकटमोचन हनुमान मंदिर, करौंद कला, भोपाल का उद्घाटन)
6. शास्त्रों के मत में कर्म ही बन्धन का कारण है– उसी के कारण आत्मा शरीर के बन्धन में आ जाती है। इसी तर्ज़ पर कह सकते हैं कि अवांछनीय कर्म के कारण ही शरीर जेल के बन्धन में आ जाता है।
(केन्द्रीय जेल, भोपाल का उद्घाटन)

शुभेच्छु

## मेसर्स विजय कुमार मिश्रा

**कंस्ट्रक्शन प्रा. लि., द्वारिकानगर, रीवा (म.प्र.)**

0755-2562294, 9425678058 kalasamayprakashan@gmail.com
कार्यालय: जे-191, मंगल भवन, ई-6
महावीर नगर, अरेरा कॉलोनी, भोपाल - 462016 (म.प्र.)

RNI NO. MPHIN/2017/73838

**1998 से निरंतर प्रकाशित**

**देश की सर्वश्रेष्ठ एक मात्र सांस्कृतिक पत्रिका**

कला समय पत्रिका वेबसाइट पर उपलब्ध

**www.kalasamaymagazine.com**

ISSN 2581-446X

(पंजीयन पूर्व प्रकाशित अंक, वर्ष सम्मिलित)

**(वर्ष : 20+07=27) पूर्णांक-125,126**

**वर्ष-7, अंक-2, 3, अक्टूबर-नवम्बर 2023 - दिसम्बर-जनवरी 2024 संयुक्तांक, मूल्य : ₹50/-**

माधवराव सप्रे समाचार पत्र संग्रहालय एवं शोध संस्थान, भोपाल म.प्र. द्वारा 'रामेश्वर गुरु सम्मान' से पुरस्कृत
श्री भारतेन्दु समिति कोटा (राज.) द्वारा 'साहित्यश्री' सम्मान एवं
साहित्य मण्डल श्री नाथद्वारा (राज.) द्वारा 'सम्पादक रत्न' सम्मान से सम्मानित
म.प्र. हिन्दी साहित्य सम्मेलन भोपाल (म.प्र.) द्वारा उर्मिला तिवारी स्मृति 'सप्तपर्णी सम्मान' से पुरस्कृत
इन्टरनेशनल ध्रुवपद-धाम ट्रस्ट, जयपुर (राज.) द्वारा 'लाइफ टाइम अचीवमेंट' सम्मान

# कला समय

**कला, संस्कृति, साहित्य एवं समसामयिक द्वैमासिक पत्रिका**

**संरक्षक**

नर्मदा प्रसाद उपाध्याय

डॉ. महेन्द्र भानावत

श्यामसुंदर दुबे

कैलाशचन्द्र घनश्याम पाण्डेय

महेश श्रीवास्तव

**परामर्श**

लक्ष्मीनारायण पयोधि

डॉ. नारायण व्यास

प्रो. सज्जनलाल ब्रह्मभट्ट 'रसरंग'

प्रो. सुधा अग्रवाल

**सांस्कृतिक प्रतिनिधि**

चेतना श्रीवास

**वेबसाइट प्रबंधन**

मयंक अग्रवाल

**कानूनी सलाहकार**

जयंत कुमार मेढ़े (एडवोकेट)

**प्रभु श्री राम के इस विशेषांक की पवित्रता, शुद्धता बनाए रखने में सहयोग करें**

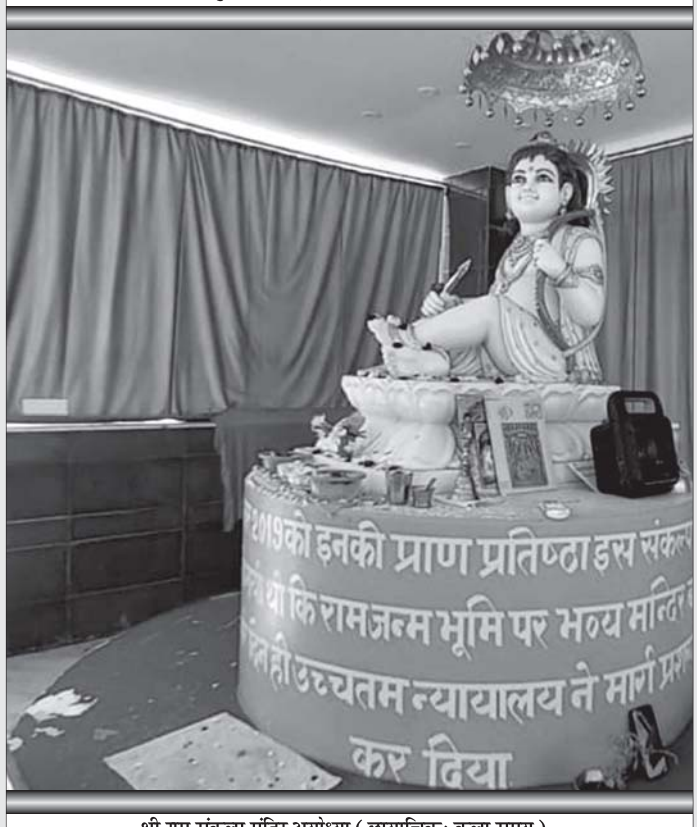


श्री राम संकल्प मंदिर अयोध्या ( छायाचित्र : कला समय )

**संपादक**

भँवरलाल श्रीवास

**सलाहकार संपादक**

डॉ. मुकेश कुमार मिश्रा

**सह संपादक**

डॉ. मधु भट्ट तैलंग

**उप संपादक**

राहुल श्रीवास

सुन्दरलाल प्रजापति

**संपादक मंडल**

डॉ. बिनय षडंगी राजाराम

**साहित्य**

अरुण तिवारी

**समसामयिक**

हरीश श्रीवास

**कला, संस्कृति**

नरिन्दर कौर

**प्रबंध**

**सदस्यता सहयोग राशि:**

| | | |
|---|---|---|
| वार्षिक | 300 ( व्यक्तिगत ) | 350 ( संस्थागत ) |
| द्वैवार्षिक | 600 ( व्यक्तिगत ) | 700 ( संस्थागत ) |
| चार वर्ष | 1000 ( व्यक्तिगत ) | 1200 ( संस्थागत ) |
| आजीवन ( 15 वर्ष के लिए ) | 10,000 ( व्यक्तिगत ) | 12000 ( संस्थागत ) |

( कृपया सदस्यता शुल्क- ऑनलाईन/ड्राफ्ट/मनीआर्डर द्वारा 'कला समय' के नाम पर उक्त पते पर भेजें )

**विशेष : 'कला समय' की प्रतियाँ साधारण डाक/रजिस्टर्ड बुक-पोस्ट से भेजी जाती हैं यदि कोई महानुभाव रजिस्टर्ड पोस्ट से पत्रिका मंगवाना चाहते हैं तो कृपया वार्षिक डाक खर्च 120/- अतिरिक्त भेजने का कष्ट करें।**

**कार्यालय सम्पर्क :**

**संपादकीय एवं सदस्यता सहयोग**

जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर,
अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.)-462016
फोन : 0755-2562294, मो.- 94256 78058
ई-मेल : kalasamaymagazine@gmail.com
bhanwarlalshrivas@gmail.com
वेबसाइट : **www.kalasamaymagazine.com**

**ऑनलाइन सदस्यता सहयोग सुविधा :**

**'कला समय' का बैंक खाता विवरण**

पंजाब नैशनल बैंक की शाखा अरेरा कॉलोनी भोपाल, म.प्र. **(IFSC : PUNB0093210)** के नाम देय, खाता संख्या **A/No. 09321011000775** में ऑनलाइन राशि जमा कराने के बाद रसीद की फोटोकॉपी अपने पूर्ण पते के साथ हमें भेज दें।

कला समय पत्रिका में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं, यह जरूरी नहीं कि संपादक, प्रकाशक, मुद्रक उनसे सहमत हों। पत्रिका से सम्बन्धित समस्त विवाद, भोपाल न्यायालय के अधीन ही रहेंगे।

सम्पादन, संचालन, प्रबंधन एवं प्रकाशन- अवैतनिक/अव्यवसायिक

विशेष नोट : © सर्वाधिकार सुरक्षित 'कला समय' प्रबंधन यह स्पष्ट करना आवश्यक समझता है कि 'कला समय' में प्रवेशांक फरवरी-मार्च 1998 से लेकर अब तक प्रकाशित होने वाली समस्त सामग्री या सामग्री के अंश के पुनर्प्रकाशन तथा पुनरुत्पादन के सर्वाधिकार कॉपीराइट अधिनियम के अंतर्गत 'कला समय' के पास सुरक्षित हैं। अत: कोई भी व्यक्ति या संस्था 'कला समय' की इस सामग्री या इस सामग्री के अंश का उपयोग प्रबंधन की पूर्वानुमति के बिना न करें।

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वत्वाधिकारी भँवरलाल श्रीवास द्वारा गणेश ग्राफिक्स, 26 बी, देशबन्धु भवन, प्रेस कॉम्पलेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल, म.प्र. से मुद्रित एवं जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कालोनी, भोपाल (म.प्र.)- 462016 से प्रकाशित। संपादक - भँवरलाल श्रीवास

श्रीराम विशेषांक के प्रमुख विद्वान लेखक...

नर्मदा प्रसाद उपाध्याय

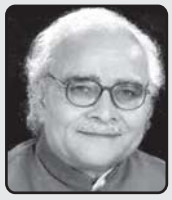
डॉ. राजेन्द्र रंजन चतुर्वेदी

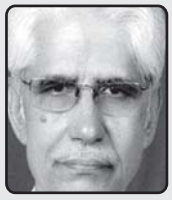
प्रभुदयाल मिश्र

डॉ. श्यामसुंदर दुबे

डॉ. महेन्द्र भानावत

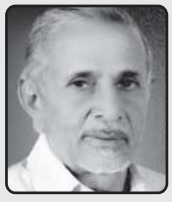
डॉ. भगवानदास पटेल

डॉ. सुमन चौरे

डॉ. मोहन गुप्त

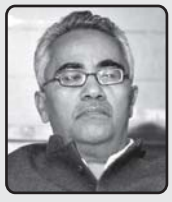
डॉ. कृष्णगोपाल मिश्र

लक्ष्मीनारायण पयोधि

बी .एल . आच्छा

डॉ. सरोज गुप्ता

डॉ. नरेन्द्रकुमार मेहता

गोविंद गुंजन

डॉ. राजरानी शर्मा

डॉ. राजेन्द्र कृष्ण अग्रवाल 'रजक'

अश्विनी कुमार दुबे

चेतन औदिच्य

इस बार


- **संपादकीय**
  प्रभु श्रीराम सत्य के सत्यनारायण हैं !! 05
- **आलेख**
  राम: रूप और स्वरूप / नर्मदा प्रसाद उपाध्याय 07
- **अद्वैत-विमर्श**
  'अद्वैत : एक अप्रतिम भाव बोध' / डॉ. कृष्णगोपाल मिश्र 11
- **आलेख**
  षड्दर्शन: श्री रामचरित मानस का संदर्भ / प्रभुदयाल मिश्र 14
  रामकथा : राजमहल से झोंपड़ी तक / डॉ. राजेन्द्ररंजन चतुर्वेदी 18
- **ललित निबंध**
  अनुभव में उतरा रस विशेष / डॉ. श्यामसुंदर दुबे 23
- **आलेख**
  लोक के रोम रोम में बसी रामलीला / डॉ. सुमन चौरे 25
  भारतीय संस्कृति के प्रतीक राम / डॉ. मोहन गुप्त 30
  श्रीरामनाम की महिमा / डॉ. नरेन्द्रकुमार मेहता 32
  'राम-सीतमानी वारता' का धार्मिक और ऐतिहासिक संदर्भ / डॉ. भगवानदास पटेल 34
  करुणानिधान श्री राम की करुणा का उत्स ! / डॉ. राजरानी शर्मा 38
- **जनजातीय संस्कृति**
  गोण्ड जनजाति की मौखिक परम्परा में राम / लक्ष्मीनारायण पयोधि 42
- **आलेख**
  बहुआयामी राम की अविराम यात्रा / नर्मदा प्रसाद उपाध्याय 45
  थोड़ा नेड़ा बसोनी म्हारा रामरसिया / डॉ. महेन्द्र भानावत 59
  सांस्कृतिक सामाजिक आदर्शों के नियामक राम और रामचरितमानस / बी .एल . आच्छा 71
  राम श्रम को धन से ऊपर मानते थे / गोविंद गुंजन 73
- **संगीत चिन्तन**
  श्रीरामचरितमानस का सांस्कृतिक वैशिष्ट्य / डॉ. राजेन्द्र कृष्ण अग्रवाल 'रजक' 75
- **आलेख**
  'राम की अनकही व्यथा-कथा' / डॉ. कृष्णगोपाल मिश्र 81
  श्रीराम का जीवन आदर्श : वर्तमान समय में प्रासंगिक / डॉ. सरोज गुप्ता 85
- **उपन्यास - अंश**
  राम वन प्रवास / अश्विनी कुमार दुबे 87
- **कला-अक्ष**
  शब्द रंग : कलाओं की आवाजाही / चेतन औदिच्य 90
- **वक्तव्य**
  छोटी-सी, गागर में सागर भरने की कला में तिवारी दक्ष हैं / मनोज श्रीवास्तव 93
- **पुस्तक समीक्षा**
  'काव्य समग्र-गीत' के बहाने सृजन में चिति तत्व पर बात / सोमदत्त शर्मा 96
  घोटुल से बिग बॉस तक का सफर / डॉ. अरूण कुमार वर्मा 99
  अशोक अंजुम की गजलों में जीवन की तल्ख सच्चाइयाँ झाँकती है / अनिरुद्ध सिन्हा 101
- **आयोजन**
  कला समय के 27 वर्ष एक अवलोकन प्रदर्शनी एवं पुस्तक लोकार्पण / बालकृष्ण लोखंडे 102
- **पुण्य - स्मरण** 104



**शब्द संयोजन एवं आकल्पन - गणेश ग्राफिक्स,** भोपाल, 9981984888 | **आवरण एवं अंतिम आवरण चित्र** - साभार | **छायाचित्र** -मनीष सराठे, सुनील सेन, गूगल से साभार | **सहयोग**- धन सिंह, लता श्रीवास | **रेखांकन** : मनोहर काजल **आवरण सज्जा** - मनोज माकोड़े, गणेश ग्राफिक्स

संपादकीय

# प्रभु श्रीराम सत्य के सत्यनारायण हैं!!

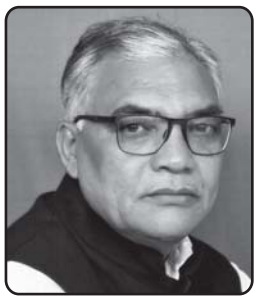

**'बड़ें भाग मानुष तनु पावा। सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा।।'**

मनुष्य अपने निर्मल आचरण व्यवहार एवं समस्त मानवीय प्रयासों द्वारा इहलोक तथा परलोक को सार्थक बनाकर मोक्ष के दुर्लभ द्वार तक पहुँच सकता है, भगवान को प्राप्त कर सकता है, इसलिये मानव-शरीर को श्रेष्ठ कहा गया है। मनुष्य-जीवन की सार्थकता मानवीय आचरण के सम्पादन में एवं व्यवहार में निहित है। मनुष्य-जीवन ही एकमात्र ऐसा जीवन है जो मनुष्यत्व से देवत्व प्राप्त कर सकता है, नर से नारायण बन सकता है। मनुष्य की मनुष्यता त्याग, अहिंसा, तप, सहिष्णुता, सत्य, परहित एवं सदाचरण आदि में निहित है।

प्रभु श्रीराम ने पशु-पक्षी के रूप में मान्यता प्राप्त वानर-भालुओं, गीधों, सुपर्णों को मैत्री के अटूट बन्धन में बाँध, उनकी सामाजिक कुरीतियों और पिछड़ेपन को दूर करने वाले विविध उपायों का मार्ग प्रशस्त कर तत्कालीन मानव समाज की अकल्पनीय सेवा की थी। **'सर्वे भवन्तु सुखिनः'** राम के मन में न हिंसा है, न घृणा और न प्रतिस्पर्धा; फिर भी शस्त्र उनके हाथों में आभूषणों की तरह शोभा देते हैं। फूल-सा व्यक्तित्व होते हुए भी वे श्रेष्ठ योद्धा हैं, शक्ति सम्पन्न हैं। गीता में भगवान श्री कृष्ण कहते हैं- **'रामः शस्त्रभृतामहम्'** शस्त्रधारियों में मैं श्रीराम हूँ!

पंचमहाव्रत- सत्य, अहिंसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह के रूप में प्रतिष्ठित हैं इसमें 'सत्य' महाव्रत पंच महाव्रतों की आधारशिला अथवा ऐसा प्रथम दृढ़ सोपान है, जिस पर आरूढ़ होकर जीव या मनुष्य स्थिरधी अथवा स्थिरमति होकर अन्य महाव्रतों के परिपालन में सहज ही सिद्ध हो जाता है। सत्य के अनुष्ठानकर्ता को शिव और सौन्दर्य सहज ही प्राप्त हो जाता है। उस नित्य सत्य आनन्दमय स्थिति की प्राप्ति भी हो जाती है जिसको **'सत्यं शिवं सुन्दरम्'** कहते हैं। और जिसके पाने के बाद कुछ पाना शेष नहीं रह जाता है। **'सत्यं परं धीमहि'** सत्य की महत्ता स्वयं सिद्ध है। यहाँ सत्य के स्वरूप एवं तत्वार्थ को भी जान लेना चाहिये। सत्य **( सते हितम् )** सत् धातु से ( यत्) प्रत्यय से बनता है। इसका अर्थ सच्चा या ईमानदार है तथा स्वरूप निश्छल अथवा निष्कपट है। **'सत्य'** समस्त सद्गुणें एवं शुचिता तथा कल्याण का प्रतीक है।

मनुस्मृति में नौ गुणों के साथ दसवें गुण सत्य को धर्म के रूप में स्वीकार किया गया है। बृहदाव्यकोपनिषद में मानव को सच्चा मानव बनाने के लिये उस परम सत्ता से प्रार्थना की गयी है कि हे जगदाधार! मुझे ( सही मानव बनने के लिए असत् से सत् की ओर ले चलिये- **'असतो मा सद्गमय'** सदाचार विहीन व्यक्ति को पूर्णत: अपवित्र ही कहा गया है- **'आचारहींन न पुनन्ति वेदाः।'** मनुस्मृति सदाचरण को ही श्रेष्ठ धर्म मानती है। **''आचारः परमो धर्मः।''** मनुस्मृति यह भी स्पष्ट उद्घोष करती है कि समस्त गुणों से हीन होने पर भी सत्यवान् या सदाचारी व्यक्ति ही मनुष्य कहलाने योग्य है एवं वही चिरजीवी होता है। सत्य की महत्ता को स्वीकार करते हुए अथर्ववेद में कहा गया है कि सत्य बोलने वाले व्यक्ति के प्राण लोक में प्रतिष्ठित होते हैं। महाभारत में भी कहा गया है कि सत्य ही स्वर्ग या मुक्ति का सोपान है **'सत्यं स्वर्गस्य सोपानम्'**। सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं है और असत्य या झूठ से बढ़कर कोई पाप नहीं है। तुलसीदास जी ने कहा है कि **'धरमु न दूसर सत्य समाना।'** वाल्मीकीय रामायण में भी सत्य को मानव के कल्याण का परम धर्म कहा गया है- **'आहुः सत्यं हि परमं धर्मं धर्म विदो जनाः।'** सत्य की महत्ता को सर्वोपरि निरूपित करते हुए आदि कवि महर्षि वाल्मीकि ने सत्य को परब्रह्म के पद की प्रतिष्ठा प्रदान की है। सत्यनारायण का स्पष्ट अर्थ है- **'सत्य मेव नारायणः।'** अर्थात सत्य ही नारायण हैं। आप सदा शान्त रहें निर्विकार रहें, सम रहने की चेष्टा करें जगत् के खेल से अपने को प्रभावित न होने दें। आप सदा सुखी रहेंगे। फिर न कुछ बढ़ाने की इच्छा होगी और न घटने पर दु:ख होगा। इस जगत् में हम भगवान के प्रेम में जिमें अर्थात प्रेम की बात करें, प्रेम की बात सुनें, प्रेम के कार्य करें, सपने भी देखें तो प्रेम के ही और अन्त में प्रेममय

**।।श्री रामोत्सव।।**
**सप्तपुरियों में प्रथम श्री अयोध्या धाम में प्रभु श्रीराम के बाल रूप विग्रह की प्राण प्रतिष्ठा के शुभ अवसर पर प्रफुल्लित, श्रद्धावनत 'कला समय'**

भगवान में जाकर हम विलीन हो जायँ। प्राणिमात्रा के परमात्मस्वरूप जानकार उनकी सेवा के लिये किया जाने वाला कर्म शुभ है और इससे विपरीत प्राणियों को दु:ख देने वाला कर्म अशुभ है।

**निर्मल मन जन सो मोहि पावा। मोहि कपट छल छिद्र न भावा।।**

हमारे आदर्श प्रेमघट श्रीराम हैं। संत कबीर के शब्दों में यदि हम श्री राम के ढाई अक्षर के प्रेम गुण को सीख लें, पढ़ लें, आत्मसात् कर लें तो हमारा परम कल्याण सुनिश्चित है- '**ढाई अक्षर प्रेम का पढ़ै सो पंडित होइ।।**' शास्त्र-मर्यादाओं से निबद्ध श्री राम के चरित्र में भारतीय संस्कृति के अनुरूप ही पारिवारिक और सामाजिक जीवन के उच्चतम आदर्श पाये जाते हैं। '**राम-राज्य**' का आदर्श भारतीय संस्कृति का मूलाधार है। आज भी हम उससे प्रेरणा तथा शक्ति लेकर अपने अशान्त एवं अस्थिर जीवन में '**सत्यं शिवं सुन्दरम**' की त्रिवेणी प्रवाहित कर सकते हैं।

प्रभु श्री राम पर केन्द्रित यह महत्वपूर्ण प्रतिष्ठा विशेषांक के लिये हमारे बहुत ही अल्प समय के अनुरोध पर जिन-जिन विद्वानों, लेखकों ने अपना रचनात्मक सहयोग दिया है हम उन सभी के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करते हैं।

''कला समय'' के 27 वर्ष एक अवलोकन'' प्रदर्शनी आयोजित करने हेतु हम बिड़ला संग्रहालय और विशेष रूप से बी.के. लोखंडे के विशेष आभारी हैं। 'कला समय' की यह अनोखी प्रदर्शनी जो कि 21 दिसम्बर 2023 से 03 जनवरी 2024 तक अंतरराष्ट्रीय विश्वरंग महोत्सव की गतिविधियों के अंतर्गत एवं जी.पी. बिड़ला संग्रहालय भोपाल के तत्वावधान में रवींद्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, वनमाली सृजनपीठ, प्रेरणा पत्रिका एवं प्रेरणा पब्लिकेशन, भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण मंडल, कला समय संस्कृति, शिक्षा और समाज सेवा समिति एवं कला समय प्रकाशन के आत्मीय सहयोग से सम्पन्न हुई। हम सभी सहयोगी संस्थाओं के हृदय से आभारी हैं। आशा करते हैं कि भविष्य में भी कला समय पत्रिका को इसी तरह का सहयोग मिलता रहेगा।

नववर्ष एवं 75वाँ गणतंत्र दिवास की हार्दिक शुभकामनाएं।

शुभमस्तु।

**- भँवरलाल श्रीवास**

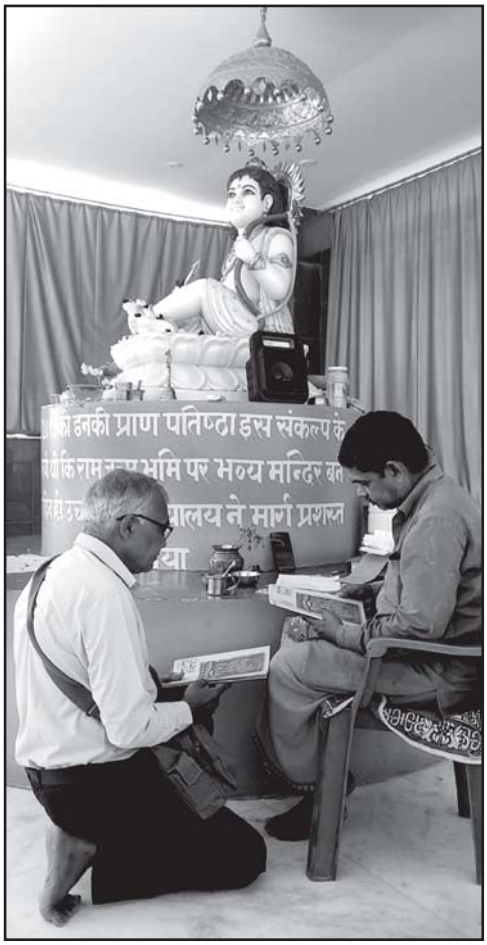

श्री राम मंदिर अयोध्या जहाँ 8 नवम्बर 2019 को ''रामजन्मभूमि पर भव मंदिर बने'' का संकल्प स्थान पर 'कला समय' पत्रिका के साथ संपादक भँवरलाल श्रीवास

आलेख

# राम: रूप और स्वरूप

नर्मदा प्रसाद उपाध्याय

रूप और स्वरूप इन दोनों में मानव और ईश्वर का अंतर है। रूप मानवीय है लेकिन मानव जब राम का स्वरूप धारण कर लेता है तो वह ईश्वर के रूप में पूजनीय हो जाता है। हमारी परम्परा में जिन्हें हम अवतार कहते हैं, वे ऐसे मानव रूप में अवतरित हुए जिनका रूप वास्तव में स्वरूप था। वे दैहिक रूप से भी जितने सुंदर थे उतने ही अपने आराध्य के स्वरूप में भी।

मानवीय दृष्टि की परिधि सीमित होती है किन्तु ऐसे भी महामानव हुए जिनकी अंतर्दृष्टि ने राम के रूप और स्वरूप को अमर शब्दों में बांध दिया। वाल्मीकि और तुलसी जैसे महामानव, महासर्जक इसी कोटि में आते हैं।

वाल्मीकि ने विस्तार से राम के दैहिक और अंतर्निहित महान गुणों का उल्लेख किया है। महर्षि वाल्मीकि के प्रश्नों का उत्तर देते हुए नारद भगवान श्रीराम के गुणों का विस्तार से वर्णन करते हैं।

इक्ष्वाकु वंश में उत्पन्न भगवान श्रीराम नियतात्मा अर्थात दृढ़ चित्त वाले अविचलित हैं। वे महान शक्तिशाली महावीर्य हैं। वे द्युतिमान हैं अर्थात तेजस्वी हैं। उनका पुरुषोचित सौंदर्य कामदेव को लज्जित करने वाला है। वे धैर्य रखने वाले धृतिमान हैं। शोक और हर्ष इन दोनों अवसरों पर वे गंभीर रहते हैं। उनका धैर्य हिमालय की तरह अडिग है। वे वशी हैं अर्थात सबको वश में कर लेते हैं। कोई कितना भी शक्तिशाली क्यों न हो वह राम के समक्ष नहीं ठहरता। वे परम बुद्धिमान और नीतिमान हैं। सुंदर वाणी बोलने वाले वाग्मी हैं। वे श्रीमान हैं अर्थात अप्रतिम शोभा और कांति से सम्पन्न हैं। उनकी वीरता अपूर्व है। विश्व में उनसे बढ़कर कोई दूसरा वीर नहीं है और इस तरह वे शत्रु निबर्हण हैं। वे विपुलांस अर्थात विशाल तथा चौड़े स्कंधों वाले हैं। महाबाहु हैं अर्थात विशाल भुजा वाले हैं। वे अजानुबाहु भी हैं अर्थात उनकी बाहें घुटने से नीचे की ओर आती हैं और उनकी गर्दन शंख के समान है इसलिए वे कम्बुग्रीव: हैं। उनकी ठुड्डी विशाल है जो गौरव का प्रतीक है इसलिए वे महाहनु: हैं। इसी तरह की ठुड्डी हनुमान की भी है और इसीलिए उन्हें हनुमान कहा गया है क्योंकि उनकी हनु विशाल है। राम महोरस्क: हैं अर्थात चौड़ी छाती वाले हैं। वे महेष्वास: हैं अर्थात धनुष का संधान करने वालों में महान। उल्लेखनीय है कि विष्णु सहस्त्रनाम में भी भगवान विष्णु का 183वां नाम महेष्वास: है और व्याख्याकारों का कहना है कि भगवान विष्णु का यह रूप उनके रामावतार में प्रकट हुआ है।

राम वाल्मीकि रामायण के अनुसार गूढ़जत्रु हैं अर्थात उनके कंधे और बांह की संधि कसी हुई है, ढीली नहीं है। वे शत्रुओं अर्थात अरि का दमन करने वाले अरिन्दम: हैं। उनकी शिराएं सुंदर हैं इसलिए वे सुशिरा: हैं। उनका ललाट उन्नत है इसलिए वे सुललाट: हैं। उल्लेखनीय है कि सामुद्रिक शास्त्र में जिसका ललाट उन्नत होता है व जिस पर तीन रेखाएं होती हैं उसे महापुरुष माना जाता है। वे सुविक्रम हैं अर्थात जिनमें अपरिमित पराक्रम है। सुविक्रम इसलिए हैं क्योंकि वे अपने पराक्रम का सही दिशा में प्रयोग करते हैं। वे सम: हैं जिसका आशय है समान। वे सुख के क्षणों में अधीर नहीं होते और न दु:ख के समय अपना धैर्य खोते हैं। उनके शरीर के सभी अंग अपने आदर्श मान के साथ संतुलित हैं। वे इसलिए भी सम: हैं। उन्हें समविभक्ताङ्ग भी कहा गया है।

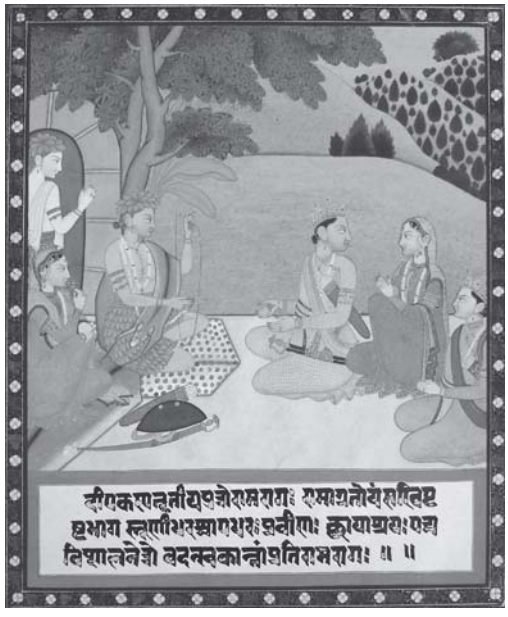

राम स्निग्धवर्णी हैं अर्थात देखने में उनका स्वरूप बड़ा कोमल है। साथ ही वे प्रतापवान हैं अर्थात जिनका ताप प्रखर है। वे पीनवक्षा भी हैं अर्थात उनकी छाती पुष्ट है। वे विशालाक्ष भी कहा गया है अर्थात उनकी आंखें बड़ी-बड़ी हैं। भगवान राम की आंखों की उपमा कमलदल से की गई है। वे लक्ष्मीवान हैं अर्थात उनके सभी अंग शोभा से सम्पन्न हैं। वे विष्णु अवतार हैं इसलिए जगज्जननी जानकी लक्ष्मी हैं। उनके सारे शरीर के लक्षण शुभ हैं इसलिए वे शुभलक्षणा हैं। वे अपने कर्तव्य को अर्थात धर्म को भलीभांति जानते हैं और उसका पालन करते हैं इसलिए धर्मज्ञ हैं और इसी कारण उनकी प्रतिज्ञा सत्य होती हैं इसलिए वे सत्यसन्धश्च हैं। वे प्रजा की भलाई के लिए सदैव तत्पर रहते हैं इसलिए उन्हें '**प्रजानां च हिते रत:**'

कहा गया है। वे यशस्वी हैं क्योंकि उनका यश दिव्य है। ब्रह्मज्ञान से सम्पन्न होने के कारण वाल्मीकि रामायण के भाष्यकार तिलक उन्हें ज्ञान सम्पन्न कहते हैं। वे शुचि: हैं अर्थात पवित्र हैं। चूंकि वे अपने पिता, आचार्य व देवताओं के वश में रहते हैं इसलिए उन्हें वश्य: भी कहा गया है। भक्ति परम्परा की दृष्टि से वे भक्तों के वश में रहते हैं इसलिए वश्य हैं। यही बात भागवत पुराण में भी कही गई है जहां भगवान दुर्वासा से कहते हैं कि मैं स्वतंत्र नहीं हूं, मैं भक्तों के अधीन हूं।

राम समाधिमान् हैं। वाल्मीकि रामायण के एक और टीकाकार जिन्होंने 'रामायण शिरोमणी' नामक वाल्मीकि रामायण की टीका लिखी है के अनुसार वे अपने आश्रितों के पालन के विषय में चिंतन करते रहते हैं और उनका यही चिंता करना उनकी समाधि अवस्था है इसलिए राम समाधिमान् हैं। वे प्रजापतिसम: हैं अर्थात ब्रह्मा के समान प्रजा के स्वामी हैं। प्रजा की उत्पत्ति, पालन और संहार करने में उनके व्यक्तित्व और कृतित्व में ब्रह्मा, विष्णु और महेश के गुण समवेत होते हैं। उन्हें धाता भी कहा गया है अर्थात वे पिता के समान प्रजा का पालन पोषण करते हैं। सभी प्रकार के ऐश्वर्य से सम्पन्न होने के कारण वे श्रीमान हैं। वे रिपुनिषूदन: हैं अर्थात शत्राओं का संहार करने वाले और उनके शत्रु हैं काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद तथा मात्सर्य। वे इन छ: दुर्गुणों के विनाशक हैं।

श्रीराम रक्षिता जीवलोकस्य हैं अर्थात वे जीवलोक की रक्षा करते हैं। उन्हें धर्मस्य परिलक्षिता भी कहा गया है जिसका आशय है वे धर्म की रक्षा करने वाले हैं। साथ ही वे वेदवेदाङ्गतत्त्वज्ञ: हैं अर्थात चारों वेद, ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद – छ: वेदाङ्ग, शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द व ज्योतिष तथा चारों उपवेद – आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद तथा अर्थशास्त्र के तत्वों के ज्ञाता हैं। उन्हें सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञ: भी कहा गया है अर्थात वे सभी शास्त्रों के तत्व को जानते हैं। धनुर्विद्या में वे निष्णात हैं इसलिए 'धनुर्वेदे च निष्ठित: हैं।

राम स्मृतिमान हैं अर्थात वे सभी स्मृति ग्रंथों के जानकार हैं तथा इसलिए भी स्मृतिमान हैं क्योंकि वे अपने भक्तों की पुकार का सदैव स्मरण रखते हैं। प्रत्येक प्रकार की स्फूर्ति से सम्पन्न हैं इसलिए प्रतिभावान हैं। सभी के बीच प्रिय होने से सर्वलोकप्रिय हैं तथा निस्पृह, कोमल और सहज हैं इसलिए साधु हैं। वे उदार हैं। उनका मन कभी संकीर्णता से, कृपणता से भरता नहीं है इसलिए उन्हें अदीनात्मा भी कहा गया है। वे विचक्षण हैं अर्थात विद्वान हैं व सभी लौकिक एवं अलौकिक कार्य करने में कुशल हैं। सभी अच्छे लोग उन तक उसी प्रकार पहुंचना चाहते हैं जैसे नदियां समुद्र में समवेत होने के लिए इच्छुक होती हैं अत: वे सर्वदाभिगत: सद्भि समुद्र इव सिन्धुभि: हैं।

राम आर्य हैं जो सर्वपूज्य हैं साथ ही गति के अर्थ में निरंतर चलने वाले हैं। वे सबके लिए समान हैं। अत: सर्वसम: च एव हैं। इसी तरह वे सदैव प्रिय दिखाई देते हैं इसलिए सदा एकप्रिय दर्शन: हैं। वे सर्वगुण सम्पन्न हैं इसलिए उन्हें स च सर्वगुणोपेत: भी कहा गया है। ऐसे गुणों की संख्या वैशेषिक दर्शन में 24 मानी गई है। ये गुण हैं, रूप, रस, गंध, स्पर्श, संख्या, परिणाम, पृथक्त्व, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व, द्रवत्व, गुरुत्व, स्नेह, शब्द, बुद्धि, सुख, दु:ख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, धर्म, अधर्म और संस्कार।

राम अपनी माँ कौशल्या का आनंद बढ़ाते हैं इसलिए वे कौसल्यानन्दवर्धन: हैं। समुद्र के समान उनके व्यक्तित्व में गहराई है इसलिए वे समुद्र इव गाम्भीर्ये हैं। उनमें अपार धैर्य है इसलिए हिमालय के समान वे धैर्यपूर्वक अडिग बने रहते हैं इसीलिये वे धैर्येण हिमवान् इव हैं। विष्णु के समान वीर होने के कारण उन्हें विष्णुना सदृशो वीर्ये कहा गया है। चन्द्रमा के समान सौम्य दर्शन वाले हैं इसलिए सोमवत्प्रियदर्शन: हैं। लेकिन जब वे शत्रुओं पर कुपित होते हैं तो उनका क्रोध अग्नि के समान होता है इसलिए उनके क्रोध को कालाग्निसदृश: कहा गया है। क्षमा के वे आगार हैं, धरती प्रत्येक को क्षमा कर देती है इसलिए वे क्षमया पृथिवीसम: हैं। भगवान राम सबको देते हैं और उसके लिए सबकुछ त्याग देते हैं इसलिए वे धनदेन समस्त्यागे हैं और वे धर्म के मूर्त रूप हैं इसलिए वाल्मीकि उन्हें रामो विग्रहवान् धर्म: कहते हैं।

वाल्मीकि रामायण में राम एक विराट व्यक्तित्व के रूप में प्रतिष्ठित हैं। वाल्मीकि ने उनके चरित्र का ऐसा आख्यान किया है जो जीवन का एक सुदृढ़ ढांचा प्रस्तुत करता है। उन्होंने मानवीय विकास की चरम सीमा तक ले जाकर प्रभु राम को एक मानव के रूप में प्रस्तुत किया। वे विराट पुरुष हैं लेकिन मानवीय स्वभाव उनमें आगे है।

वैसे धर्म निराकार होता है किन्तु राम उसके मूर्त स्वरूप हैं। वाल्मीकि ने उनकी देह का वर्णन भी किया है। उन्हें वे त्रिशीर्षवान कहते हैं अर्थात उनके सिर में तीन आवृत्तियां हैं। उनके लम्बे केश हैं। उनके मुख की कोमलता की तुलना वाल्मीकि चन्द्रज्योत्सना और बालचन्द्र से करते हैं। राम विशालाक्ष हैं, उनकी नासिका दीर्घ है तथा कान

सम हैं। उनके अंगूठे में चारों वेदों की प्राप्तिसूचक रेखा रही है इसलिए उन्हें वाल्मीकि 'चतुष्फल' कहते हैं।

राम केन्द्रित विभिन्न ग्रंथों में राम के रूप और स्वरूप को लेकर विस्तार से चर्चा की गई है और उस सबके संबंध में विवरण देना बड़े विस्तार का विषय है। लेकिन आध्यात्म रामायण में वर्णित राम का स्वरूप यदि देखें तो मानो राम हमारे सामने साकार हो जाते हैं। आध्यात्म रामायण के अनुसार राम का रूप इन्द्र नीलमणि की तरह नीली आभा से परिपूर्ण है। उनके कानों में अर्जुन वृक्ष के कच्चे फलों के समान रत्नजड़ित स्वर्ण के आभूषण लटकते हैं। उनके पैरों में मणिमय पायल है तथा कमर में सोने का कमरबंद। उनका ललाट विशाल है तथा बालक राम के ललाट को मोतियों से सजाया गया है। उनके माथे पर पीपल के पत्ते जैसा दीप्तिमान मुकुट है।

आध्यात्म रामायण में राम के बालस्वरूप का विस्तृत वर्णन है।

तुलसी के राम नीलकमल के समान, श्यामवर्ण हैं। तुलसी उनकी छवि का वर्णन करते हुए कहते हैं,

**काम कोटि छबि श्याम सरीरा। नील कंज बारिद गंभीरा।।**
**नअरून चरन पंकज नख जोती। कमल दल्हनि बैठे जनु मोती।।**

रामचरितमानस में धनुष यज्ञ के प्रसंग के संदर्भ में तुलसी राम की उपमा उदित होते हुए सूर्य से करते हैं। कहते हैं,

**उदित उदयगिरि मंच पर रघुवर बाल पतंग।**
**विकसे संत सरोरूह, हरषे लोचन भृंग।।**

गोस्वामी तुलसीदास ने कवितावली में जो राम का रूप गाया है वह जन-जन के कण्ठों में विराजा हुआ है। तुलसी ने माता सीता की उस भंगिमा का वर्णन किया है जिसमें वे अपने हाथ में पहने कंगन में जड़ित नग में प्रभु श्रीराम की मनमोहक छवि की परछाईं देखती हैं। वे हाथ टिकाकर राम के रूप को ऐसे देखती हैं कि उनकी पलक स्थिर की स्थिर रह जाती है, झपकती तक नहीं। तुलसी ने लिखा,

**राम को रूप निहारति जानकी कंकन के नग की परछाईं।**
**यातै सबै सुधि भूलि गई, कर टेकि रही पल टारत नाहीं।**

तुलसी ने राम के स्वरूप का बड़ा सुंदर वर्णन उनके वनगमन के समय के प्रसंगों को विशेष रूप से उनके चित्रकूट प्रवास के प्रसंग को वर्णित करते हुए चित्रित किया है। इस वर्णन में उनके मानवीय गुणों को भी तुलसी चित्रित कर देते हैं। वे कहते हैं,

**राम सरूप तुम्हार बचन अगोचर बुद्धिपर।**
**अबिगत अकथ अपार नेति नेति नित निगम कह।।**

अर्थात हे राम! आपका स्वरूप वाणी के अगोचर, बुद्धि से परे, अव्यक्त, अकथनीय और अपार है। वेद निरंतर उसका 'नेति-नेति' कहकर वर्णन करते हैं। तथा

**जगु पेखन तुम्ह देखनिहारे। बिधि हरि संभु नचावनिहारे।**
**तेउ न जानहिं मरमु तुम्हारा। औरु तुम्हहि को जाननिहारा।।**

'हे राम! जगत दृश्य है, आप उसके देखने वाले हैं। आप ब्रह्मा, विष्णु और शंकर को भी नचाने वाले हैं। जब वे भी आपके मर्म को नहीं जानते, तब और कौन आपको जानने वाला है?'

**सोइ जानइ जेहि देहु जनाई। जानत तुम्हहि तुम्हइ होइ जाई।**
**तुम्हरिहि कृपाँ तुम्हहि रघुनंदन। जानहिं भगत भगत उर चंदन।।**

अर्थात वही आपको जानता है, जिसे आप जना देते हैं और जानते ही वह आपका ही स्वरूप बन जाता है। हे रघुनंदन! हे भक्तों के हृदय को शीतल करने वाले चंदन! आपकी ही कृपा से भक्त आपको जान पाते हैं। वे आगे कहते हैं,

**चिदानंदमय देह तुम्हारी। बिगत बिकार जान अधिकारी।**
**नर तनु धरेहु संत सुर काजा। कहहु करहु जस प्राकृत राजा।।**

अर्थात आपकी देह चिदानन्दमय है (यह प्रकृतिजन्य पंच महाभूतों की बनी हुई कर्म बंधनयुक्त, त्रिदेह विशिष्ट मायिक नहीं है) और (उत्पत्ति-नाश, वृद्धि-क्षय आदि) सब विकारों से रहित है, इस रहस्य को अधिकारी पुरुष ही जानते हैं। आपने देवता और संतों के कार्य के लिए (दिव्य) नर शरीर धारण किया है और प्राकृत (प्रकृति के तत्वों से निर्मित देह वाले, साधारण) राजाओं की तरह से कहते और करते हैं।

तुलसी ने राम का ऐसा चरित्र भी प्रस्तुत किया जो हताश और निराश जाति के अंतर्मन के अंधकार को समाप्त कर आशा के आलोक को लेकर उपस्थित हुआ। उन्होंने कहा,

**कुपथ कुतर्क कुचाली कलि, कपट दंभ पाखंड।**
**देहन राम गुणग्राम इमि, ईंधन अनल प्रचंड।।**

तुलसी के समय में ही व उसके बाद के काल में जिसे रीतिकाल भी कहा जाता है, राम के स्वरूप के बारे में अनेक ग्रंथ लिखे गए। इनमें आचार्य केशवदास की रामचन्द्रिका प्रमुख है जिसमें उन्होंने राम के अवतारी स्वरूप को तो यथावत रखा लेकिन उनका पांडित्य प्रदर्शन स्पष्ट हुआ। उन्होंने लिखा,

**जागति जाकी ज्योति जग एक रूप स्वच्छंद।**
**रामचन्द्र की चंद्रिका बरणत हौं बहु छंद।।**

राम के रूप और स्वरूप को रीतिकालीन कवियों ने जिस ढंग से वर्णित किया उसके कारण उस समय के विलासी राजाओं के समक्ष, राम के कृतित्व में समाए त्याग का जो आदर्श प्रस्तुत होना था वह नहीं हुआ और कवि का चमत्कार प्रदर्शन प्रमुख हो गया और यही कारण है कि रामलीला के ऐसे स्वरूप भी प्रस्तुत हुए जिसमें राम का प्रखर व्यक्तित्व पूरी तरह सामने नहीं आ पाया।

आधुनिक युग में मैथिलीशरण गुप्त से लेकर निराला तक ने राम के स्वरूप को चित्रित किया। प्रजा हितैषी के रूप में 'साकेत' में मैथिलीशरण गुप्त ने लिखा,

**वही हो जो तुम्हें हो इष्ट मन में,**
**बने नूतन अयोध्या नाथ वन में।**
**भले ही दैव का बल दैव जाने,**
**पुरुष जो है न क्यों पुरुषार्थ माने।**

निराला ने राम के तेजस्वी स्वरूप को प्रतिष्ठित किया। उनकी पंक्तियां हैं,

**कहती थीं माता मुझे सदा राजीवनयन**
**दो नील कमल हैं शेष अभी, यह पुरश्चरण**
**पूरा करता हूं देकर मातः एक नयन।**

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ने अपने समय को स्वर दिया तथा दशरथनंदन को साम्राज्यवाद के नाशक के रूप में प्रस्तुत करते हुए लिखा,

**है साम्राज्यवाद का नाशक,**
**दशरथ-नंदन राम सदा,**
**है भौतिकता-वाद विनाशक,**
**जन-मन-रंजक राम सदा।**

इस संदर्भ में विस्तार से चर्चा की जा सकती है। लेकिन आधुनिक काल के कवियों ने राम के मानवीय पक्ष को ही स्पष्ट किया है।

यह राम के चरित्र की ही विशेषता है कि प्रत्येक युग ने उन्हें अपने परिप्रेक्ष्य में देखा और उसी परिप्रेक्ष्य के अनुरूप उनके रूप और स्वरूप को शब्द दिए।

प्रख्यात ललित निबंधकार कुबेरनाथ राय राम के स्वरूप को इन शब्दों में अभिव्यक्त करते हैं, ''ऐसे थे रामचन्द्र। उनका रूप दूर्वादल श्याम था। चेहरा, हंसते हुए नीलाभ चन्द्रमण्डल की तरह। ऐसा चन्द्रमण्डल जो आदिम रात्रियों के नीलाभ एकांत में उदित हुआ था। आजानुबाहु थे। नेत्र थे सद्यःप्रस्फुटित पद्म-पांखुरियों जैसे ! वे अचानक सामने पड़ जाते तो लगता कि मीठी-मीठी धूप से स्नात प्रसन्न निर्मल दिवस उद्घाटित हो गया।''

कुबेरजी ने विस्तार से राम के स्वरूप को लेकर लिखा है। पंडित विद्यानिवास मिश्र ने राम के संदर्भ में अनेक दृष्टियों से विचार किया है। लेकिन विशेष रूप से उन्होंने राम के लोक चरित्र को उद्घाटित किया है।

भारतीय लोक जनजातीय लोक से सम्पन्न है तथा जनजातियों में राम की छवि उन्होंने अपने परिवेश के अनुरूप रची है। इस संबंध में विस्तार से चर्चा की जा सकती है।

सार रूप में राम के रूप और स्वरूप को लेकर यह कहा जा सकता है कि राम हमारे लोक में प्रतिष्ठित ऐसे विश्वास व्यक्तित्व हैं जिनके रूप और स्वरूप को प्रत्येक युग ने आत्मसात किया है, उनके मानवीय गुणों को आदर्श रूप में स्वीकार किया है। वे ऐसे ईश्वर के रूप में मान्य किए गए हैं जिन्होंने मानवता को परिभाषित किया और यह स्थापित किया कि एक सार्थक मनुष्य किसे कहा जा सकता है। राम के व्यक्तित्व और कृतित्व की यही विशिष्टता राम के अविराम बने रहने का आधार है और यह आधार इतना सशक्त है कि वह युगों-युगों से अपने अडिग रूप में विराजित हैं और राम प्रत्येक युग में अविराम बने हुए हैं।

- लेखक प्रख्यात ललित निबंधकार तथा कलाविद् है।
संपर्क : 85, इन्दिरा गांधी नगर, पुराने आर.टी.ओ. ऑफिस के पास, केसरबाग रोड, इन्दौर-9 (म.प्र.), मो.: 9425092893

## अनुरोध

सभी लेखकों एवं पुस्तक समीक्षकों से निवेदन है कि कला समय के लिए भेजे जाने वाले आलेख अधिकतम 3 पृष्ठ तथा पुस्तक समीक्षा अधिकतम 2 पृष्ठ की ही मान्य होगी।

**-सम्पादक**

# 'अद्वैत : एक अप्रतिम भाव बोध'

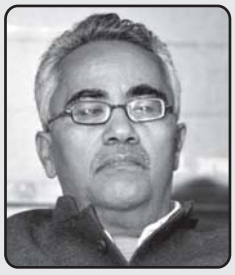

डॉ. कृष्णगोपाल मिश्र

सृष्टि के कण-कण में उस अविनाशी परमसत्ता का दर्शन करना और आत्मसाक्षात्कार द्वारा उसका अनुभव करना ही अद्वैत है। नाम भेद और गुण वैविध्य के कारण भिन्नता की प्रतीति होती रहती है किन्तु विविध संदर्भों में एक ही संज्ञा सबको समेट लेती है। यही समग्रता-बोध अद्वैत है। रस अनेक हैं- मधुर, तिक्त, अम्ल, कषाय आदि किन्तु 'स्वाद' शब्द सबको स्वयं में समेट लेता है। लाल, पीला, काला, हरा, नीला आदि सभी दृश्य-बोध 'रंग' संज्ञा में समाकर एक हैं। चराचर सृष्टि बहुरूपिणी है किन्तु 'जगत' शब्द समस्त विविध रूपों को स्वयं में सहेजे हुए है। 'मनुष्य' संज्ञा के अन्तर्गत हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई, पारसी सब एक रूप हैं। यही एकरूपता अद्वैत-बोध है, जिसकी पुष्टि होने पर जाति-पाँति, धर्म-क्षेत्र, वर्ण-कर्म आदि के सभी 'भेद' मिट जाते हैं, संघर्ष थम जाते हैं, बैर दूर हो जाते हैं और सद्भाव, प्रेम और पारस्परिक सहयोग की उदार भावना पुष्ट होने लगती है। आध्यात्मिक दार्शनिक परम्परा में 'निज' और 'पर' का भेद भूलकर सब में एक ही परमशक्ति का दर्शन अद्वैत कहलाता है।

भारतीय दार्शनिक चिन्तन में अद्वैत के विचार को विशेष महत्व मिला है। अद्वैत सनातन-परम्परा का सर्वस्व है। इसी बोध की पुष्टि के कारण भारतवर्ष सबके कल्याण की कामना करता है। विश्व को बाजार नहीं समझता, अपना परिवार मानता है। 'सर्वे भन्तु सुखिनः' और 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की उदात्त अवधारणा अद्वैत भाव की पुष्टि से ही उपजती है। 'रामचरित मानस' में जब गोस्वामी तुलसीदास लिखते हैं-

**''सीय राममय सब जग जानी।**
**करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।''**

तब 'द्वैत' भाव-बोध के लिए अवकाश ही शेष नहीं रहता। भारतवर्ष के सामाजिक-सांस्कृतिक धरातल पर व्यवहारतः पुष्ट यह भाव-दर्शन विदेशियों-विद्यार्थियों को भी सहज भाव से स्वीकार कर लेता है। शताब्दियों पूर्व पारसियों को और आज रोहिंग्याओं को आश्रय दिया जाना यहाँ की उदार अद्वैत दृष्टि का ही शुभ परिणाम है। 'जियो और जीने दो' का विचार अद्वैत से पुष्ट हुआ है। लाखों भारतीय जीव हत्या कर मांसाहार करते हैं..... यह कटु सत्य है किन्तु सच यह भी है कि अद्वैत भाव से समृद्ध असंख्य भारतीय चीटियों को देखकर उनके लिए आटा छीटते हैं, मछलियों के लिए जल में अनाज डालते हैं, चिड़ियों के पानी रखते हैं। समस्त वानस्पतिक एवं जीव जगत के साथ मनुष्य का यह रागात्मक सम्बंध निश्चय ही 'अद्वैत' के विचार से अनुप्राणित है। मनुष्य जब किसी को अपना समझता है तब उसकी हानि नहीं करता, उसे हानि से बचाने का प्रयत्न करता है। वह जिसे अपने समान समझता है उसे भी कभी कोई कष्ट नहीं देता। यह अद्वैत-बोध से ही लोक में संभव होता है।

भारतीय-मनीषी में अद्वैत-चिन्तन की परम्परा सनातन है। वैदिक-साहित्य बार-बार अद्वैत-बोध का पथ प्रशस्त करता है। उपनिषदों में ब्रह्म और जगत को लेकर अद्वैत को विविध प्रकार से व्याख्यायित किया गया है। एकेश्वरवाद की अवधारणा और समस्त चराचर जगत में उसकी व्याप्ति की मान्यता अद्वैतवाद की ही पुष्टि करती है। भारतीय अध्यात्म दृष्टि के अनुसार 'देवता' अर्थात ब्रह्म, परमेश्वर, सृष्टि का स्रष्टा एक ही है और वही सर्वत्र व्याप्त है, अन्तर्निहित है-

**''एको देवः सर्वभूतेषु गूढ़ः**
**सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।**
**कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासा**
**साक्षी चेता कैवलो निर्गुणश्च।।''**- (ब्रह्मोपनिषद/16)

अर्थात एक ही देव समस्त प्राणियों में छिपा हुआ है। वह सर्वत्र व्याप्त है और समस्त प्राणियों की अन्तरामा है। वही कर्मों का नियामक है और सब में बसा हुआ है। वही साक्षी है, चैतन्य है और प्रकृति प्रदत्त गुणों से विमुक्त है। 'ईशावास्योपनिषद्' में भी यही स्वर इस प्रकार ध्वनित हुआ है-

**''ईशावास्यमिद्म् सर्वं यत्किञ्चजगत्यांजगत।**
**तेन व्यक्तेन भुञ्जीथा, मा गृधः कास्यविद्धनम्।।''**

- (ईशावास्योपनिषद्/01)

अर्थात इस गतिशील जगत में जो कुछ भी है वह सब ईश्वर द्वारा निवसित है। इसलिए उपलब्ध पदार्थों-विषयों का त्यागपूर्ण उपयोग करना ही उचित है। लालच मत करो। यह धन किसका है अर्थात किसी का नहीं है, ईश्वर का ही है और देह के साथ यहीं जगत में छूट जाना है। संसार और ईश्वर के मध्य व्याख्यायित यह अद्वैत दृष्टि सभी प्रकार के सांसारिक संघर्षों की रामबाण औषधि है। यह जीवन-दर्शन लोभ और स्वार्थ की सहज दुर्वृत्तियों का समुचित दमन

कर हिंसा, शोषण एवं उत्पीड़न की भयंकर ज्वालाओं का शमन करता है। इसलिए महत्वपूर्ण है, सनातन है, शाश्वत हे और व्यक्ति एवं समाज दोनों के लिए बड़े काम का है। भारतवर्ष से बाहर की विचार-परम्पराओं में अद्वैत-चिन्तन का यह एकात्मबोध प्राय: दुर्लभ है। वहाँ अपनत्व अथवा अद्वैत का भाव केवल अपने विचार के अनुयायियों तक सीमित है, अत: अल्पमहत्व का है। समूह निशेष तक सीमित हित-चिन्तन विभिन्न समुदायों के मध्य संघर्ष उत्पन्न कर सकता है, समस्त मानवता की रक्षा नहीं कर सकता। जबकि अद्वैत का अप्रतिम भानबोध 'समूह' अथवा 'बहु' के लिए नहीं 'सर्व' के लिए शुभ-दृष्टि देता है, शिव-संकल्प लेता है। कदाचित् अपने इसी नैशिष्ट्य के कारण भारत वर्ष 'जगद्गुरु' है। संसार की अन्य सभ्यताओं से श्रेष्ठ है।

वेदों और उपनिषदों में ब्रह्म की एकरूपता के साथ ही इन्द्र, अग्नि, वरुण आदि अन्य अनेक देवशक्तियों की भी विस्तृत चर्चा हुई है। इस आधार पर प्राय: यह प्रचारित किया जाता रहा है कि वैदिक सनातन धर्म जो आज हिन्दू धर्म का पर्याय है- बहुदेववाद का पोषक है। सीमित विशिष्ट संदर्भों में यह तथ्य एक सीमा तक सत्य भी है किन्तु अन्तत: इस बहुलता की परिणिति भी अद्वैत-बोध प्रेरित एकात्मता में ही पर्यवसित मिलती है। 'रुद्रहृदयोपनिषद्' के अनुसार विष्णु और शिव के द्वैत को अद्वैत में प्रतिपादित किया गया है-

**''ये नमस्यन्ति गोविन्दं ते नमस्यन्ति शंकरम्।**
**येऽर्चयन्ति हरिं भक्त्या तेऽर्चयन्ति वृषध्वजम्।।**
**ये द्विषन्ति विरूपाक्षं ते द्विषन्ति जनार्दनम्।**
**ये रुद्रं नाभिजानन्ति ते न जानन्ति केशवम्।।''**

- (रुद्रहृदयोपनिषद्-56)

वैदिक साहित्य में सर्वत्र निरूपित अद्वैत का यह अप्रतिम भाव-बोध भारतवर्ष के लोकजीवन में भी पग-पग पर व्याप्त मिलता है। लोकोक्तियाँ शास्त्र से सूत्र संचित कर सहज-सुबोध रूप में कथा-प्रसंगों के मध्य अद्वैत-बोध प्रतिष्ठित करती हैं। 'श्रीमद्भागवत्' में वर्णित भक्तप्रवर प्रहलाद की कथा में जब अत्याचारी हिरण्यकशिपु अपने पुत्र प्रहलाद को रामनाम जपने और मृत्युदण्ड देने के लिए तप्त खम्भ के पास लाकर पूछता है कि अब बता तेरा राम कहाँ है। तब प्रहलाद उसे सर्वव्यापी बताते हैं। इस शास्त्रवर्णित प्रसंग को लोककवि ने लोकोक्ति के रूप में इस प्रकार रचा है-

**''मुझ में राम तुझ में राम**
**खम्भ में राम, खड्ग में राम।**
**जित देखूँ तित रामै राम**
**खाली जिव्हा कौने काम।।''**

निम्नांकित लोकोक्ति में भी यही अद्वैत-बोध व्यक्त हुआ है-

**''राम की चिड़ियाँ, राम को खेत।**
**खाओ री चिड़ियों, भर-भर पेट।।''**

'ईशावास्यमिदम् सर्वम्' का उपनिषद सम्मत भाव-बोध इस लोकोक्ति में सहज रेखांकनीय है। प्रकृति से प्राप्त अन्न प्रकृति रूप परमेश्वर का है और प्रकृति के अभिन्न अंग खग-मृग भी उसी परमात्मा की सृष्टि हैं। अत: प्रकृति से प्राप्त जीवन पोषक संसाधनों पर केवल मनुष्य का ही एकाधिकार नहीं है। जीव मात्र उनके उपभोग का सहज अधिकारी हैं। प्रकृति और मनुष्य के साहचर्य का यह बोध अद्वैत दर्शन से ही पुष्ट हो सकता है। आज विश्वस्तर पर जैव-विविधता के संरक्षण को लेकर बड़े-बड़े विचारक, बुद्धिजीवी वैज्ञानिक..... सब चिन्तित हैं। वन्य जीवों और वनस्पतियों की प्रजातियाँ लुप्त हो रही हैं। इस संकट का एक प्रमुख कारण मनुष्य और प्रकृति के मध्य विकसित असाहचर्य-चिन्तन है। यांत्रिक-सभ्यता ने प्रकृति और मनुष्य की अद्वैत पोषित एकात्मता को निगल लिया। उसने प्रकृति को मनुष्य के भौतिक सुखोपभोग का संसाधन निरूपित किया। परिणामत: प्राकृतिक संसाधनों के अनियंत्रित शोषण ने जल, वायु, अन्न आदि जीवन-पोषक तत्वों को विकृत और प्रदूषित कर मनुष्य के स्वास्थ्य और दीर्घजीविता को ही प्रश्नांकित कर दिया है। भारतीय-दर्शन और सांस्कृतिक रीतियाँ-नीतियाँ प्रकृति में देव-दर्शन कर उसे उपास्य एवं मनुष्य को उसका उपासक बनाया। उसके मध्य अद्वैत-भाव पुष्ट कर अति प्राचीनकाल से मनुष्य को इस संकट से बचाती रही हैं और आज भी बचा सकती हैं। शर्त यही है कि हम पश्चिम की उपभेक्तावादी अंधानुकरण भरी दुवृत्तियों का त्यागकर अपनी सनातन-परम्परा में निर्देशित अद्वैत भाव-बोध को अपनी चेतना में पुन: जीवित-जाग्रत करें।

अद्वैत का भाव-बोध मानवीय संबंधों में प्रेम की पूर्णता को पुष्ट करता है। दो मित्रों के मध्य आत्मीयता जब पराकाष्ठा पर पहुँचती है तो एक ही हित दूसरे का भी प्रथम काम्य हो जाता है। दोनों के सुख-दुख अभिन्न बन जाते हैं। एक ही पीड़ा दूसरे के नेत्रों में जल भर देती है तो एक ही सुख दूसरे को भी प्रसन्नता का कारण बन जाता है। सामाजिक जीवन में यह सार्थक-सकारात्मक वृत्ति अद्वैत के पालने में पल कर ही पुष्ट होती है। एक की रक्षा के लिए दूसरे का प्राण हथेली पर रखकर आगे आ जाना मित्राता के धरातल पर अद्वैत के भाव-बोध का चरम उत्कर्ष है। 'रामचरितमानस' में युद्ध के समय क्रुद्ध रावण अपने समक्ष विभीषण को पाकर उसके वध की दुरभिलाषा से उन पर प्रचण्ड प्रहार करता है किन्तु श्रीराम अत्यंत शीघ्रता से मित्रा विभीषण को अपने पीछे छिपाकर स्वयं आगे बढ़कर अपनी छाती पर उस शक्ति का आघात झेल लेते हैं और विभीषण की प्राण-रक्षा करते हैं-

**''तुरत विभीषन पाछे मेला।**
**सन्मुख राम सहेउ सोइ सेला।।''** (रामचरितमानस लंकाकाण्ड-13)

पारिवारिक जीवन में भी जहाँ सम्बन्ध अद्वैत-भाव से समृद्ध होते हैं वहाँ सम्पत्ति के झगड़े नहीं होते। माता कैकेयी अपने पुत्र भरत को कौशल्या नन्दन राम से भिन्न कर अलग-अलग द्वैत भाव से देखती है अत: अपने पुत्र के लिए राज्य और सपत्नी के पुत्र के लिए वनवास का

वरदान माँगती है। माता कौशल्या इस द्वैत-भाव से सर्वथा मुक्त हैं। इसलिए उनके मन में राम और भरत में कोई भेद नहीं। राम के वनगमन के उपरान्त भरत का स्वागत वे उसी वात्सल्य से करती हैं जिससे वे राम को अभिषिक्त करतीं। 'रामचरितमानस' की निम्नांकित पंक्ति इस संदर्भ में दृष्टव्य है-

''**सरल सुभाय मायँ हियँ लाए।**
**अति हित मनहुँ राम फिरि आए।।**''- (अयोध्याकाण्ड-164/1)

पति और पत्नी, नर और नारी.... दो पृथक इकाई हैं किन्तु 'दम्पति' और 'अर्धनारीश्वर'.... शब्द- प्रयोग इनकी अद्वैतता जनित परिपूर्णता के द्योतक हैं। नर और नारी प्रकृति-प्रदत्त क्षमताओं, गुणों आदि के कारण अलग-अलग होने पर अपूर्ण ही हैं। दोनों का अलगाव नयी सृष्टि नहीं रच सकता किन्तु जब तन और मन के स्तर पर दोनों एक हो जाते हैं तब पूर्णता को प्राप्त कर नूतन संतति-सृजन में समर्थ हो जाते हैं। शिव और शक्ति के अर्धनारीश्वर रूप में अद्वैत का भाव बोध इसी प्राकृतिक सत्य को अनावृत करता है। दम्पत्ति में तो न केवल शारीरिक-आत्मिक स्नेहपूरित अद्वैतता है अपितु सम्पत्ति-संसाधन आदि के साथ कर्त्तव्यों और दायित्वों के निर्वाह की भी अद्वैतता है जो पति-पत्नी में से एक के न रहने पर दूसरे द्वारा निर्वहित होती है। भारतीय पारिवारिक-सामाजिक जीवन में संव्याप्त यह अद्वैतता ही सम्पत्तिकाल की सुखानुभूति और विपदवेला की सुदृढ़ संबल है। संगठन के सूत्र अद्वैत-बोध की पुष्टि से सुदृढ़ बनते हैं और एकता का अमर बीज अद्वैत भाव की उर्वर-भूमि में पोषण पाकर परिवार और समाज को शुभ-फल प्रदान करता है। लोक में प्रेम की पुष्टि का आधार 'ममत्व' का विचार हे और ममत्व का श्रृंगार अद्वैत के भावबोध से होता है। अत: अद्वैत का अप्रतिम भावबोध जीव और ब्रह्म की एकता की आध्यात्मिक-दार्शनिक वीथि में ही नहीं प्रत्युत दैनन्दिन जीवन के सुविस्तृत राजपथ पर भी सर्वथा महत्वपूर्ण है।

लेखक वरिष्ठ साहित्यकार हैं।
09-चैतन्य नगर, मालाखेड़ी रोड, नर्मदापुरम्
(म.प्र.)-461001, मो.- 9340944771

1961 में जन्मी स्वामिनी सुप्रभानंदा सरस्वती जी ने 1982 में एसएनडीटी महिला विश्वविद्यालय मुंबई से वाणिज्य में स्नातक की शिक्षा पूर्ण कर अपनी आध्यात्मिक यात्रा प्रारंभ की। इस यात्रा में विभिन्न साधु-संतों, संन्यासियों से ज्ञान प्राप्त करते हुए आपको वर्ष 1990 से अध्यात्म विद्या मंदिर के संस्थापक आचार्य व वेदान्त के प्रकाण्ड विद्वान स्वामी विदितात्मानन्द सरस्वती जी का मार्गदर्शन मिला। स्वामीजी की प्रेरणा से वर्ष 1995 से 1998 तक आपने आर्ष विद्या गुरुकुलम्, अनइकट्टि, कोयंबटूर में आवासीय वेदान्त पाठ्यक्रम में संस्कृत व वेदान्त का गहन अध्ययन किया। वर्ष 2003 में आपको आर्ष विद्या गुरुकुलम् के संस्थापक पूज्य स्वामी दयानंद सरस्वती जी से संन्यास दीक्षा ग्रहण करने का सौभाग्य मिला। 1998 से आप तत्त्वतीर्थ, अहमदाबाद में वेदान्त का शिक्षण व प्रचार-प्रसार कर रही हैं।

**इहैव तैर्जितः सर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः**
**निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्माद् ब्रह्मणि ते स्थिताः।।**
— **श्रीमद्भगवद्गीता** 5.19

जिनका अन्तःकरण समतामें स्थित है, उन्होंने इस जीवित-अवस्था में ही सम्पूर्ण संसार को जीत लिया है; ब्रह्म निर्दोष और सम है, इसलिये वे ब्रह्ममें ही स्थित हैं।

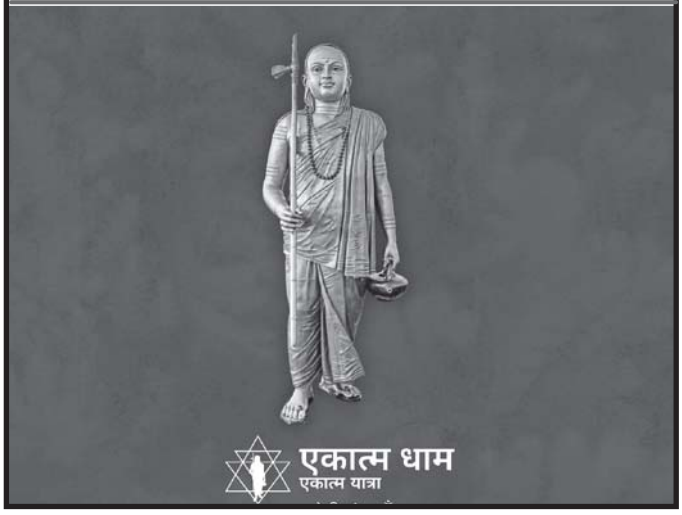

आलेख

# षड्दर्शनः श्री रामचरित मानस का संदर्भ

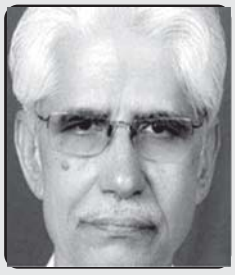

प्रभुदयाल मिश्र

**1. न्याय दर्शन**

इस दर्शन धारा के प्रवर्तक ऋषि अक्षपाद गौतम हैं। उनका 'न्यायसूत्र' इस मत का आदि ग्रंथ है। जिन साधनों से ज्ञेय तत्त्वों का ज्ञान प्राप्त होता है उन्हें 'न्याय' की संज्ञा दी गई– नीयते विविक्षितार्थ अनेन इति न्यायः । न्याय दर्शन में वैशेषिक की ही भांति पदार्थों के तत्वज्ञान से निः श्रेयस की सिद्धि मानी गई है ।

न्याय दर्शन के प्रणेता महर्षि गौतम तर्क की महिमा का अख्यापन करते हैं । उनके अनुसार मुक्तावस्था में भी एक 'आत्मा' को दूसरी से पृथक करने वाला 'मन' भी एक द्रव्य ही है। इस मन से जीव को कभी छुटकारा ही नहीं मिलता। अनादिकाल से एक जीव का अविद्या के कारण जब किसी एक मन के साथ संयोग हो गया तो वह जीव उस मन के साथ-साथ अनंत शरीरों में घूमता है। मुक्ति में भी वही मन उस आत्मा के साथ रहता है। व्यापक होने पर भी इसी मन के साथ सदैव संयोग रखने के कारण वह जीव अव्यापक के समान रहता है। जीवात्मा और परमात्मा इन दोनों में एक प्रकार से कोई सम्बन्ध नहीं है। दोनों ही अपने-अपने क्षेत्र में निरपेक्ष हैं। जीवात्मा अपने अनादि कर्मों के संस्कार से एक शरीर से दूसरे शरीर में प्रवेश करता रहता है। सभी दुखों का नाश होने पर वह मुक्त तो होता है परन्तु उसे मन से छुटकारा नहीं मिलता। मुक्तावस्था और संसारावस्था में मात्र इतना ही तो भेद है कि संसारावस्था में ज्ञान, सुख, आदि गुण होते हैं जबकि मुक्तावस्था में वे नहीं होते।

मुझे वैष्णव भक्ति परंपरा के विशिष्ट द्वैत बोध और मुक्ति के पार के भी पुरुषार्थ का यहाँ इन दो संदर्भों का अर्थ गांभीर्य विचारणीय प्रतीत होता है–

भरत श्रीराम की चरण प्रीति में चारों पुरुषारथों का परित्याग करने को पूर्ण संकल्पित हैं–

**अरथ न धरम न काम रुचि गति न चहउं निरवान**
**जनम जनम रति राम पद यह वरदान न आन ।**

भक्ति की विशिष्ट अद्वैत दर्शन परंपरा की 'पुष्टि मार्ग' की धारा में श्रीमद्भागवत का प्रमाण भी इस प्रकार सुदृष्ट है जो वृत्र द्वारा भगवान के प्रार्थना में प्रकट है–

**न नाकपृष्ठं न च पारमेष्ठ्यं न सार्वभौमं न रसाधिपत्यम्**
**न योगसिद्धीरपुनर्भवं वा समंजस त्वा विरहय्य कांक्षे ।** (6/11/25)

–हे सर्व सौभाग्य निधि हरि, मैं आपको छोड़कर स्वर्ग, ब्रह्मलोक, भूमंडल का साम्राज्य, रसातल का एकछत्र राज्य, योग की सिद्धियाँ– यहाँ तक कि मोक्ष भी नहीं चाहता ।

सारतः मैं यहाँ यही कहना चाहता हूँ कि भारत की अजस्र ज्ञान परंपरा ने जहां वैविध्यता में कुछ छोड़ा नहीं वहीं उसको समग्रता में जिन संस्थाओं और व्यक्तियों ने सँजो कर रखा है उनके प्रति हमारी कितनी कृतज्ञता शेष ही बनी रहती है !

**2.वैशेषिक दर्शन**

वैशेषिक दर्शन के प्रवर्तक महर्षि कणाद अणु विज्ञान के प्रथम आविष्कर्ता हैं । उन्होंने अणु की परिभाषा करते हुए कहा – नित्यं परिमंडलम् (7.1.20) अर्थात् अणु मंडलाकार (spherical) है तथा यह कि वह सनातन है– सदकारणवाननित्यं तस्य कार्यं लिंगम् (4.1.1-2) अर्थात सत तत्व अकारण और सनातन है । अणु इसका प्रमाण है । उनके 373 वैशेषिक सूत्र 10 अध्यायों में संग्रहीत हैं। अपने सूत्र ग्रंथ के अध्याय 4 में उन्होंने अणु की नित्यता पर गहन विचार किया है । अध्याय 2 में उनके द्वारा गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांत का विवेचन किया गया है। उनकी परिभाषा के अनुसार–संयोगाभावे गुरुत्वात पतनम् (5.1.7) अर्थात संयोग का अभाव होने से वस्तु का पतन होता है।

गोस्वामी तुलसीदास संसार में सत् और असत् वस्तुओं के परस्पर संयोग से उत्पन्न होने वाले प्राकृतिक प्रभाव युक्तियुक्त वैज्ञानिकता से इस प्रकार विवर्णित करते हैं–

**धूम कुसंगति कारिख होई। लिखिअ पुरान मंजु मसि सोई**
**सोइ जल अनल अनिल संघाता। होइ जलद जग जीवन दाता**
**ग्रह भेषज जल पवन पट पाइ कूजोग सुजोग**
**होंहि कुबस्तु सुबस्तु जग लखहिं सुलच्छन लोग।**

मानस बाल. 7 क्

उन्होंने इसी प्रकार चंद्रमा के कृष्ण पक्ष में क्षीण और शुक्ल पक्ष में वृद्धिगत होने की सदोषता और निर्दोषता को पूर्ण वैज्ञानिक निरपेक्षता में इस प्रकार समाकलित किया ङ्क

**सम प्रकाश तम पाख दुहुँ नाम भेद बिधि कीन्ह**
**ससि सोषक पोषक समुझि जग जस अपजस दीन्ह ।**

बाल. 7 ख

वैशेषिक दर्शन में जीवन का ध्येय पंच पुरुषार्थ –धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष माना गया है । इस सनातन भारतीय दृष्टि को तुलसी ने मानस में

क्रमशः भरत, शत्रुघ्न, लक्ष्मण और श्री राम के चरित्र के आदर्श से प्रमाणित किया है–

**मुदित अवधपति सकल सुत बधुन्ह समेत निहारि**
**जनु पाए महिपाल मनि क्रियन्ह सहित फल चारि।**

बाल. 325

मानस में इनकी आवृत्ति अनेकशः 1. चारि पदारथ करतल तोरे (बाल 163/7), 2. करतल होहिं पदारथ चारी (बाल. 314/2), 3. प्रमुदित परम पवित्र जनु पाइ पदारथ चारि (बाल. 345), 4.चारि पदारथ भरा भंडारू (अयो. 102/4) इत्यादि हुई है।

यह भी बहुत महत्वपूर्ण है कि कणाद के अनुसार प्रमाण प्रत्यक्ष और अनुमान के दो प्रकार हैं जिनमें अनुमान के अंतर्गत शब्द प्रमाण आता है जिसके अनुसार वेद सत्य के परम प्रमाण हैं–

**तद्वचनादाम्नायस्य ( 10.2.9 )**

तुलसी के राम 'वेदान्त वेद्य' (सुंदरकांड) ही नहीं वेदों से संस्तुत्य और समाराध्य भी हैं–

**जे ब्रह्म अजमद्वैतमनुभवगम्य मन पर ध्यावहीं**
**ते कहहु जानहु नाथ हम तव सगुण जस नित गावहीं।**

उत्तरकांड

धर्म के संबंध में उनका 'यतोभ्युदयानिः श्रेय स सिद्धि धर्मः' अर्थात् जिससे हमारा लोक और परलोक में अभ्युदय की सिद्धि का साधन हो वही धर्म है। धर्म इस तरह वह परम पुरुषार्थ है जो मुक्ति के द्वार तक हमें पहुंचाता है। स्पष्ट है कि ऐसे धर्म में संकीर्णता को कहीं कोई स्थान नहीं है । मानस में धर्म शब्द की आवृति शताधिक बार हुई है। उनके अनुसार 'सत्य' ही परम धर्म है– धरमु न दूसर सत्य समाना। आगम निगम पुरान बखाना ।(अयो. 94/5) उनके अनुसार श्री राम सत्य के ही पर्याय हैं– राम सत्यब्रत धरम रत सब कर सीलु सनेहु। (अयो. 292) स्वयाम्भव मनु जिनकी संहिता मानव जीवन का सर्वांगीण संविधान है, स्वयं– दंपति धरम आचरण नीका । अजहुँ गाव श्रुति जिन्ह के लीका । (बाल 141/2) के रूप में उनके स्वयं के जीवन आदर्श को परिभाषित करती है।

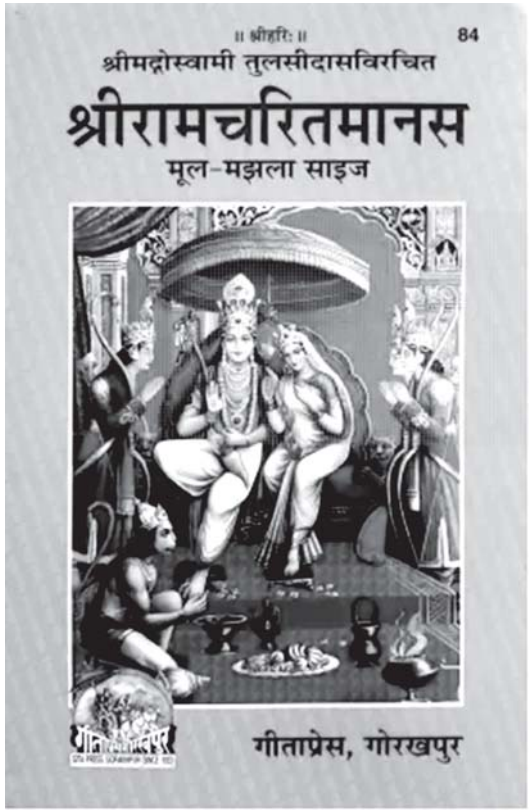


**3. सांख्य दर्शन**

गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने जिनके लिए 'सिद्धानां कपिलो मुनिः' कहा वे ही सांख्य दर्शन के प्रणेता और स्वयं विष्णु के 24 अवतारों में एक कपिल मुनि हैं । वर्तमान की जानकारी के अनुसार वे ईशा पूर्व 700 वर्ष पहले थे। यद्यपि उनके मूल सांख्य सूत्र तो अनुपलब्ध हैं किन्तु 300 वर्ष ईशा पूर्व के उनकी परंपरा के आचार्य ईश्वर कृष्ण शास्त्री की 'सांख्य कारिकाएँ' सुलभ हैं जिससे इस दर्शन सिद्धांत की सम्यक जानकारी प्राप्त होती है।

गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरित मानस के बालकांड में भगवान राम के अवतार के हेतुओं में मनु और सतरूपा के तप के संदर्भ विवरण में उनके पुत्र प्रियवृत की पुत्री देवहूति और उनके पुत्र कपिल का संदर्भ इस प्रकार दिया है–

**' आदिदेव प्रभु दीनदयाला। जठर धरेउ जेहिं कपिल कृपाला**
**सांख्य सास्त्र जिन्ह प्रगट बखाना। तत्व बिचार निपुन भगवाना।'**

(141/4)

श्रीमद्भागवत के तृतीय स्कन्ध के अध्याय 24–33 में विस्तार से भगवान कपिल के अवतार और माता देवहूति को उनके प्रदत्त तत्वज्ञान का विवरण है । इसके परिणाम स्वरूप देवहूति को मोक्ष की प्राप्ति होती है। अपने मूल प्रश्न में देवहूति सांख्य दर्शन के प्रकृति और पुरुष के द्वैत तत्व को जानने का अनुरोध इस प्रकार करती हैं–

**' तं त्वा गताहं शरणं शरण्यं स्वभृत्यसंसारतरोः कुठारम्**
**जिज्ञास्याहं प्रकृतेः पुरुषस्य नमामि सद्धर्मविदां वरिष्ठम्।'**

(1/25/11)

माता देवहूति यहाँ एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह पूछती हैं कि मनुष्य उससे स्वभावतः अभिन्न प्रकृति से कैसे परे जा सकता है तो भगवान का उत्तर है कि जिस प्रकार अरणि अग्नि उत्पन्न कर स्वयं उससे भस्म हो जाती है उसी प्रकार प्रकृति को साधना पूर्वक आत्मा के प्रकाश में तिरोहित हो जाती है ।

रामचरित मानस के बालकांड में जैसे यही तत्वबोध भगवान शिव दोहा क्रमांक 107 से दोहा 120 तक पार्वती जी को प्रदान करते हुए कहते हैं कि प्रकृति प्रधान यह संसार असत् होते हुए भी उसे उसी प्रकार दुख देता रहता है जिस प्रकार स्वप्न में कोई अपने सिर के काट लिए जाने पर तब तक दुखी बना रहता है जब तक कि वह जाग नहीं जाता है।

सांख्य दर्शन की एक महत्वपूर्ण अवधारणा 'सत्कार्यवाद' है। इसका आशय यह है कि इस मत के अनुसार कोई भी सृष्टि अथवा सर्जन 'सत्' से ही संभव है, असत् से नहीं । यह धारणा वर्तमान में भी पूरी तरह से युक्तियुक्त ही है क्योंकि जो है ही नहीं उससे जो कुछ है वह कैसे जन्म ले सकता है। श्रीकृष्ण ने गीता में इसीलिए कहा– **'नासतो विद्यते भावो न**

**भावो विद्यते सत'** (2/16)। इसके अनुसार प्रत्येक कार्य का कारण होना आवश्यक है ।कारण दो प्रकार का होता है –निमित्त और उपादान । ये दोनों प्रकृति और पुरुषसंगक हैं तथा अनादि हैं। गीता में भी श्री कृष्ण ने कहा **'प्रकृतिं पुरुषं चैव विद्यनादी उभावपि'** (13/19)। यह इस दर्शन का द्वैत वाद है जो दो समान सत्ताओं–ऊर्जा और पदार्थ तथा शैव दर्शन में शिव और शक्ति की संज्ञा धारण करते हैं ।

प्रकृति त्रिगुणात्मक है। सत, रजस और तमोगुण रूप के ये गुण प्रकृति में विक्षोभ पैदा करते हैं जिससे इसकी साम्यावस्था अभिव्यक्ति की ओर उन्मुख होती है ।दूसरी ओर चेतन जीव में अपनी चेतना के उन्मीलन की अभीप्सा रहती है ।इस तरह प्रकृति और पुरुष के योग से चेतन प्राणी का जन्म होता है ।

भारतीय षड्दर्शन परंपरा में सांख्य और वेदान्त धाराएं ज्ञान की परमोच्च कक्षाएँ हैं । षडंग वेद के परमाचार्य गोस्वामी तुलसीदास इन दर्शनों का श्रीमद्भगवद्गीता की ही तरह मानस में भक्ति परक ऐसा समाहार प्रदान करते हैं जो व्यवहार के लिए सामान्य जनों को भी सहज ग्राह्य है ।

**जेहि इमि गावहिं बेद बुध जाहि धरहिं मुनि ध्यान**
**सोइ दसरथ सुत भगत हित कोसलपति भगवान।**

(बालकांड 118)

**4. मीमांसा**

या पूर्वमीमांसा दर्शन में वेद के यज्ञपरक वचनों की व्याख्या बड़े विचार के साथ की गयी है। इसके प्रणेता ऋषि जैमिनी हैं। मीमांसा का तत्वसिद्धान्त विलक्षण है। इसकी गणना अनीश्वरवादी दर्शनों में है। किसी विषय पर गहराई से किए गये विचार–विमर्श को मीमांसा कहते हैं (मीमांसनं मींमांसा)। मीमांसा दर्शन में 'धर्म क्या है' इस विषय पर मीमांसा की गई है । इसके अनुसार 'चोदनालक्षणोऽर्थो धर्मः' अर्थात् वेद–वाक्य से लक्षित अर्थ, धर्म है। वेद ने जिन कर्मों को करने के लिये कहा है, उनको करना और जिनको करने से मना किया है, उनको न करना 'धर्म' है। श्रौतसूत्र आदि कर्मकाण्ड के ग्रन्थों के वाक्यों को लेकर मीमांसा में पर्याप्त मात्रा में कर्म मीमांसा की गई है।

मीमांसा का तत्वसिद्धान्त विलक्षण है। आत्मा, ब्रह्म, जगत् आदि का विवेचन इसमें नहीं है। यह केवल वेद वा उसके शब्द की नित्यता का ही प्रतिपादन करता है। इसके अनुसार मन्त्र ही सब कुछ हैं। वे ही देवता हैं; देवताओं की अलग कोई सत्ता नहीं। पूर्व मीमांसा दर्शन के अनुसार–

**कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।**
**एवं त्वयि नान्यथेतोस्ति न कर्म लिप्यते नरे॥**

इस वेदमन्त्र के अनुसार मुमुक्षु जनों को भी कर्म करना चाहिए। वेदविहित कर्म करने से कर्मबंधन स्वतः समाप्त हो जाता है – (कर्मणा त्यज्यते ह्यसौ, तस्मान्मुमुक्षुभिः कार्य नित्यं नैमित्तिकं तथा आदि वचनों के अनुसार भारतीय आस्तिक दर्शनों का मुख्य प्राण मीमांसा दर्शन है। श्रीमद्भागवत के एकादश स्कन्ध अध्याय 27 में उद्धव श्री कृष्ण से उनकी आराधना के 'क्रियायोग' के वर्णन का आग्रह करते हैं. भगवान इसे 'कर्मकांड' के रूप में समाख्यात करते हुए सांगोपांग रीति और बहुत विस्तार से पूजन का विधान बताते हैं। उनके अनसार पूजा की तीन विधियां हैं– वैदिक, तांत्रिक और मिश्रित। किन्तु उन्होंने भगवद्गीता (9–26) की तरह यहां भी कहा है कि' श्रद्धा पूर्वक जल मात्र अर्पित करने से मैं प्रसन्न हो जाता हूँ तब गंध, पुष्प, धूप, दीप, और नैवेद्य आदि वस्तुओं के समर्पण से तो कहना ही क्या '–

**भूर्यप्यभक्तोपहृतं न मे तोषाय कल्पते**
**गन्धो धूपः समुनसो ऽदीपोनादय च किं पुनः।**

(11/27/18)

श्री रामचरित मानस में कर्म मीमांसा, यज्ञादि अनुष्ठान तथा स्वर्दि भोग के प्रसंग यत्र तत्र सर्वत्र विद्यमान हैं । श्री राम का जन्म, विवाह, वनवास और रावण से हुआ महायुद्ध कर्म और कर्मफल की ही सांसारिक विधान की प्रतिष्ठा की स्वीकृति है ।इसमें निशाचरों द्वारा तामसिक यज्ञ के सत्य को भी स्वीकार किया गया है–

**'कहुँ महिष मानुष धेनु खर अज खल निशाचर भक्षहीं'**

सुंदरकांड

यहाँ तककि आततायी मेघनाद के ऐसे ही घोर तामसिक यज्ञ का भगवान राम की आज्ञा से लक्ष्मण, अंगद हनुमान आदि विध्वंस करते हैं–

**'जाइ कपिनह सो देखा बैसा ।आहुति देत रुधिर अरु भैंसा**
**कीन्ह कपिन्ह सब जग्य बिधन्सा ।'** सुंदरकांड 76/1–2

**5. योग दर्शन**

योगदर्शन में **पुरुष** तत्व केन्द्रीय विषय के रूप में प्रस्तुत हुआ है। यद्यपि पुरुष और प्रकृति दोनों की स्वतन्त्र सत्ता मानी गयी है परन्तु तात्विक रूप में पुरुष की सत्ता ही सर्वोच्च है। पुरुष के दो भेद कहे गये हैं । पुरुष को चैतन्य एवं अपरिणामी कहा गया है, किन्तु अविद्या के कारण पुरुष जड़ एवं परिणाम चित्त में स्वयं को आरोपित कर लेता है। पुरुष और चित्त के संयुक्त हो जाने पर विवेक जाता रहता है और पुरुष स्वयं को चित्त रूप में अनुभव करने लगता है। यह अज्ञान ही पुरुष के समस्त दुःखों, क्लेशों का कारण हैं। योग दर्शन का उद्देश्य पुरुष को इस दुःख से, अज्ञान से, मुक्त कराना है। पुरुष का परम लक्ष्य कैवल्य की प्राप्ति है। योग में पुरुष को आत्मा का पर्याय माना गया है। अतः आत्मा, जो कि संख्या में असंख्य है, उसकी कैवल्य प्राप्ति तभी हो सकती है जब चतुर्व्यूह का पुरुषार्थ साधन कर दुःख के त्रिविध रूपों का समाधान कर लिया जाय। दुःख के तीन रूप है– आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक। पुरुषार्थशून्यता इन त्रितापों से ऊपर की अवस्था है। पुरुषार्थशून्यता के पश्चात् ही पुरुष की अपने स्वरूप की स्थिति होती है। योगदर्शन में इसे ही कैवल्य अथवा मोक्ष कहा गया है।

योग का यही दार्शनिक धरातल है: अविद्या के दूर होने पर जो अवस्था होती है उसका वर्णन विभिन्न आचार्यों और विचारकों ने विभिन्न ढंग से किया है। अपने–अपने विचार के अनुसार उन्होंने उसको पृथक नाम भी दिए हैं। कोई उसे कैवल्य कहता है, कोई मोक्ष, कोई निर्वाण।

ऊपर पहुँचकर जिसको जैसा अनुभव हो वह उसे उस प्रकार कहे। वस्तुत: वह अवस्था ऐसी है, यतो वाचो निवर्तते अप्राप्य मनसा सह – जहाँ मन ओर वाणी की पहुँच नहीं है।

पतंजलि ने %पुरुष विशेष% नाम से ईश्वर की सत्ता को भी माना है। योग की साधना की दृष्टि से ईश्वर को मानने, न मानने का विशेष महत्व नहीं है। ईश्वर की सत्ता को मानने वाले और न मानने वाले, दोनों योग में समान रूप से अधिकार रखते हैं।

गीता 18 वें अध्याय के 65-66 श्लोकों में श्री कृष्ण द्वारा जिस 'मैं' के प्रति समर्पण के लिये कहा है उस 'मैं' में समग्र सृष्टि और स्त्रष्टा समाविष्ट तो हैं ही, हमारा अपना वह मैं भी समाविष्ट जिसे अलगकर हम अपनी प्रातिभासिक पहचान को वास्तविक मान बैठे हैं। इस मैं को वे 15 वें अध्याय के श्लोक 15 में समझाते हुए बताते हैं–

**'वेदैश्च सर्वेरहमेव वेद्यो वेदांतकृद्वेदविदेव चाहम्'**

श्रीकृष्ण गीता में बार-बार उसे अपना भक्त और परमप्रिय मानते हैं जो 'सर्वभूत हिते रत:' है। इस प्रकार जब कोई समर्पण भाव से भी भगवान के निकट पहुँचता है तो वह जीव मात्र के हित की कामना करने लगता है।

श्री रामचरित मानस के उत्तरकांड में अयोध्या की प्रजा को समझाते हुए जैसे ईश्वर की इसी विराटता का आख्यापन करते हैं–

**'नर तनु भव बारिधि कहुँ बेरो। सन्मुख मरुत अनुग्रह मेरो।'** 43/ 4

योग की क्षमता और विभूतियों का मानस के अनेक चरित्रों में परम प्रकर्ष ही देखने को मिलता है। भगवान शिव की अखंड समाधि,सती द्वारा योगाग्नि से देह त्याग, श्री वशिष्ठ और विश्वामित्र द्वारा श्री राम और लक्ष्मण को

दुर्लभ योग क्षमताओं का अभिदान, सरभंग ऋषि द्वारा योगाग्नि से देह त्याग ( अस कहि जोग अगिनि तनु जारा । राम कृपा बैकुंठ सिधारा। अयोध्या 7/4) आदि इसके कुछ उदाहरण हैं ।

**6. वेदान्त**

भारतीय परंपरा में ज्ञान के पर्याय वेद हैं। **ऋग्वेद** के 10 मंडलों में 1028 सूक्त और 10600 ऋचाएँ, **सामवेद** के 6 अध्यायों में मंत्र 1875, **यजुर्वेद** के अध्याय 40 में 1975 मंत्र तथा **अथर्ववेद** के 20 कांड में 740 सूक्त और मंत्र 5962 हैं । चारों वेद संहिताओं की कुल मंत्र संख्या 20379 है। श्री वेदव्यास को वेदों के चार भागों में वर्गीकरण का हेतु माना जाता है। उन्होंने इनके परिशिक्षण का दायित्व अपने शिष्यों –ऋग्वेद का वैशम्पायन, यजुर्वेद का सुमंतु, सामवेद का पैल और अथर्ववेद का जैमिन को सौंपा।

इनकी विषयवस्तु के संबंध में संक्षेप में इतनी जानकारी पर्याप्त है कि ऋग्वेद मंत्रात्मक आराधन, यजुर्वेद याज्ञिक अनुष्ठान, सामवेद समाधि युक्त अनुगान और अथर्ववेद राज, समाज, विज्ञान, औषधि, मनस और सृष्टि संचार के विषयों को समेटता है । इसके अतिरिक्त जैसा कि वेदों का उपवेदों में विस्तार हुआ, ऋग्वेद से आयुर्वेद, सामवेद से गांधर्ववेद, यजुर्वेद से धनुर्वेद तथा अथर्ववेद से अर्थशास्त्र का प्रणयन हुआ। यदि वेद के शिरोभाग वेदान्त का सार संदेश एक पंक्ति में समाहित करना है, तो यजुर्वेद 40/1 से निम्नलिखित मंत्र उद्धृत किया जा सकता है –

**ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंचजगत्यां जगत्**
**तेन त्यक्तेन भुन्जीथ: मा गृध: कस्यस्विद्धनम्।**

ईशावास्य के 4 से लेकर 8 तक के पांच मंत्र ईश्वर की 'निखिल धर्म विरुद्ध आश्रयी' विशेषताओं का निरूपण करते हैं। इसके अनुसार ईश्वर देवताओं और मन से भी तीव्रतर गतिशील, भीतर और बाहर सामान रूप से समुपस्थित, अकाय, शुद्ध, कवि, मनीषी, परिभू और स्वयम्भू है। उसे इस रूप में देखने वाले मैं और तू जैसा भेद नहीं रखते. अत: उनके लिए जीवन में किसी प्रकार का शोक या मोह उत्पन्न नहीं होता।

मानस में तुलसी ने ईश्वर की इन विशेषताओं का अनेकश: वर्णन किया है। वह–

बिनु पग चलइ सुनइ बिनु काना, कर बिनु करम करइ विधि नाना ( बाल. 117 3-4) है तथा उसे इस रूप में देखने वाले यही जानते हैं कि–

**मैं सेवक सचराचर रूप स्वामि भगवंत** ( किष्कि. 3)

वैदिक दर्शन के व्याख्याकारों ने इन सिद्धांतों की विस्तृत और गहन व्याख्या की है। सामान्यतया इन्हें भौतिक और अध्यात्म तथा व्यक्त और अव्यक्त धाराओं का प्रतीकार्थी कहा जा सकता है. तुलसी ने भी सृष्टि संरचना में प्रधान ईश्वरीय सामर्थ्य 'माया' को 'विद्या अपर अविद्या दोऊ' (बाल 14/2) भेद वाला माना है। संक्षेपत: यहाँ यह कहना भी आवश्यक है कि उपनिषद् में 'विद्या' और 'सम्भूति' के लिए 'रत' विशेषण प्रयुक्त है। इसका अर्थ यह हुआ कि ज्ञान के प्रति आसक्ति होने पर वह भी बंधनकारी ही होता है। तुलसीदास जी जैसे सार रूप में समझा देते हैं–

**ज्ञान मान जहं एकउ नाहीं, देख ब्रह्म समान जग माहीं**

(आरण्य. 14/4)

औपनिषदिक शब्दावली में ही तुलसी 'ज्ञान पथ' की तुलना कृपाण की धार (उत्त.118/1) से करते हैं। अर्थात ज्ञान के मार्ग में भटकने के पूरे अवसर हैं. किन्तु जब ईश्वर की सर्वव्यापकता किसी की अनुभूति बन जाती है तो यहीं मृत्यु से संतरण के बाद उसकी अमृत में प्रतिष्ठा होती है।

उपनिषद् का मंत्र 15 अन्यथा भी बहुत ख्यात है। इसके अनुसार सत्य का मुख स्वर्ण के ढक्कन में छुपा हुआ है। अत: ऋषि सूर्य से प्रार्थना करता है कि वह सत्य और धर्म के जिज्ञासु को उसे देखने के लिए खोलें। अगले मंत्र सोलह में पुन: सूर्य से अपने रश्मि जाल को समेट लेने की प्रार्थना की गयी है जिससे अंतत: वह (ऋषि) यह समझ सके कि जो परमात्मा उसमें है वह स्वयं भी वही है।

लेखक अध्यक्ष महर्षि अगस्त्य वैदिक संस्थानम्,
35 ईडन गार्डन, चूनाभट्टी, कोलार रोड भोपाल 462016
9425079072

■

आलेख

# रामकथा : राजमहल से झोंपड़ी तक

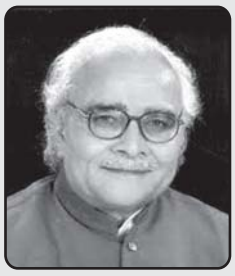

डॉ. राजेन्द्ररंजन चतुर्वेदी

वाल्मीकि ने रामायण जरूर लिखी थी, परन्तु ध्यान देने की बात है कि वाल्मीकि की रामकथा का स्रोत नारद थे। आदिकवि वाल्मीकि ने नारद से प्रश्न किया- कोह्यन्वस्मिन सांप्रतं लोके बलवान्कश्च वीर्यवान? नारद ने उत्तर दिया- इक्ष्वाकुवंश प्रभवो रामो नाम जनैः श्रुतः। नारद ने इन्हें जनैः श्रुतः रामकथा सुनाई और उनके कहने से वाल्मीकि ने- रामायणः गेयकाव्य की रचना की। स्पष्ट है कि वाल्मीकि से पहले लोकजीवन में रामकथा मौजूद थी। रामकथा लोक से शास्त्र में पहुँची थी। आंध्र से लेकर सिंध और पंजाब तक और दरदिस्तान से लेकर मलय-पर्वत तक रामायण की कथा हमारे लोकसाहित्य में रमी हुई है तथा गीतों और कहानियों के रूप में अमर बेल की तरह पनपती रही है! गांव-गांव में राम के गीत आज भी गूंज रहे हैं- जन्म हो, मुंडन हो, तीर्थयात्रा हो, विवाह हो या अन्य कोई मंगल-अवसर हो! रामलीला के आयोजन दूर-दूर तक हो रहे हैं। देश ही नहीं विदेशों में भी!

भिन्न-भिन्न सामाजिक-आर्थिक-भौगोलिक परिस्थियों और आनुवंशिकताओं में एक ही राम की भिन्न-भिन्न कथाएं आज भी प्रचलित हैं। प्रसिद्ध मानवशास्त्री श्यामाचरण दुबे ने भारत के विभिन्न जनपदों-जनजातियों तथा विदेशों में रहने वाले भारतवंशियों के बीच प्रचलित रामकथा के तीन हजार पाठों का उल्लेख किया है। जैनों और बौद्धों की परंपरा में रामकथा के रूप भिन्न-भिन्न हैं। कामिलबुल्के ने भी इस दिशा मे बहुत व्यापक अनुसंधान किया है। वेरियर एल्विन ने 'मिथ्स आफ मिडिल इंडिया' में जनजातियों में प्रचलित रामकथा के प्रसंग संकलित किये हैं। छत्तीसगढ की जनजातियों में जो रामकथा प्रचलित है, उसमें लक्ष्मण संन्यासी के रूप में हैं। श्री वसंतनिर्गुणे के अनुसार-मंडला के गोंडों की रामायनी,जो उनके पुरोहित परधान गाते हैं, पद्मश्री शेख गुलाब ने पचास साल पहले संकलित की थी। जिसे टी आर आई ने प्रकाशित किया है। जनजातियों ने राम कथा को अपनी तरह से स्वीकार किया। वहां न वाल्मीकि हैं और न तुलसी। कथा क्रम भी वैसा नहीं है, जैसा हम लोगों ने सुना है या लिखा है। राम को उन्होंने अपने अनुसार ढाल लिया है। अपनी अनुश्रुतियों में बांध लिया है। भले ही लक्ष्मण को उन्होंने नायक माना हो। पर कथा का नाम रामायनी ही रखा है। सब टाईटल में उन्होंने स्पष्ट भी किया लक्ष्मण की सत परीक्षा। यह गोंडी रामायण है। इसमें लक्ष्मण के पांच विवाहों का वर्णन है। सीता सदैव आतुर रहती है कि देवर लक्ष्मण का विवाह टिक जाय। पर लक्ष्मण के सत के आगे सब बेकार जाता है। मध्यप्रदेश की एक जनजाति की रामकथा में तो लक्ष्मण की सतपरीक्षा (अग्निपरीक्षा) होती है। यूरोप में जो 'टू ब्रदर्स' की लोककथा है, वह वाचिकपरंपरा के प्रवाह में वहां पहुँची? या यह संयोग है ?या विश्वमानव की संवेदनाओं की समानता है ?

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने रामकथा की लोकस्वीकृति के संबंध में लिखा था कि- 'रामायण का बीज-भाव करुणा है, जिसका संकेत क्रोंच को मारने वाले निषाद के प्रति वाल्मीकि के वचन द्वारा पहले ही अभिव्यक्त हो जाता है! बालकांड में भी रावण द्वारा पीडित लोक की दारुणदशा का वर्णन है! हाँ, सीता- हरण के बाद उसमें आत्मगौरव और दांपत्य -प्रेम का भी योग हो जाता है! ध्यान देने की बात है कि यह आत्मगौरव और दांपत्य-प्रेम उस विराट मंगलोन्मुखी गति में समन्वित हो जाता है! यदि राक्षसराज पर चढ़ाई का मूल कारण केवल आत्मगौरव और दांपत्य -प्रेम ही होता तब राम के कालाग्नि सदृशक्रोध में काव्य का वह लोकोत्तर सौन्दर्य नहीं होता! लोक के प्रति करुणा न होती तो रामायण लोकमंगल की विधायक कैसे हो जाती? लोकहृदय उसे क्यों स्वीकार करता? लोक पीड़ा-मुक्त हुआ, विघ्नबाधा से मुक्त हुआ, और रामराज्य में लोक के प्रति प्रेम का प्रवर्तन हुआ, प्रजा के अधिकाधिक सुख का विधान हुआ तब उसे रामराज्य के रूप में लोक की स्वीकृति मिली।'

इस विषय में पंडित विद्यानिवास मिश्र का मत है कि- 'रामकथा का प्रसार भारत और एशिया के अन्य देशों में जिन कारणों से हुआ, उनमें दो बहुत प्रमुख लगते हैं, एक तो रामचरित की उदात्त मानवीयता, जिसके अंतर्गत एक साथ कई बातें आती हैं-पिता की प्रतिज्ञा की रक्षा के लिए कठिन वनवास का अंगीकार, एकपत्नीव्रत, ऋषियों के प्रति आदर और श्रद्धा की भावना, उनकी रक्षा के लिए अपने बूते पर घोर संकल्प लेने की क्षमता, स्नेह भरा भायप, निषाद-कोल-किरातों के साथ घनी आत्मीयता, जंगली ऋक्ष और वानर जातियों में आत्मविश्वास पैदा करके उनकी सहायता से आसुरी शक्तियों को पराजित करनेवाला पराक्रम, शरणागत के लिए दया के स्थान पर मैत्री की भावना, वीरता के साथ- साथ अत्यधिक सौम्यता व निरभिमानता और कर्तव्य की कठोरता के साथ-साथ अद्भुत मृदुता। इन गुणों के प्रतिमान के रूप में राम का चरित्र बड़ा ही आकर्षक बन गया है। उनसे संबद्ध कथा के मूल ढाँचे को

रखते हुए अनेक रूपांतर हो गए हैं। जैनों और बौद्धों ने रामकथा का एक रूप लिया, जिसमें उनके विवेक और धैर्य पर अधिक बल है। प्रत्येक प्रदेश और क्षेत्र में रामकथा में नई-नई रंगतें आईं, पर एक बात सब जगह एक सी है- राम ने पिता के सत्य का निर्वाह करने के लिए वनवास स्वीकारा और भरत के लाख मनाने पर भी चौदह वर्ष की अवधि तक अयोध्या आने के लिए सहमत नहीं हुए। एक प्रकार से वनवासी राम ही अपने लोकरंजक और लोकरक्षक रूप से जनभावना के आराध्य बने ।राम से पहले जटाजूट बाँधनेवाले तपस्वी तो बहुत हुए और किसी विशेष उद्देश्य के लिए तप करनेवाले राजा भी बहुत हुए; उनको भी भारतीय जनता ने सम्मान दिया, क्योंकि सुख का त्याग करना भारतीय जीवन में एक महनीय जीवन- मूल्य रहा है। और दूसरों को सुख देने के लिए कष्टपूर्ण साधना के जीवन का वरण तो और बड़ा जीवन-मूल्य माना जाता रहा है; एक प्रकार से वही सबसे बड़ा पुरुषार्थ, मानव जीवन का चरम लक्ष्य माना जाता रहा है। परंतु वनवासी राम की एक अलग धज है। वे जटाजूट बाँधकर भी, वन का अभावों और कष्टों से भरा जीवन जीकर भी धनुर्धर हैं। वे कोलों-किरातों के बराबर होकर भी असहाय और निरुपाय नहीं हैं, असहायों और निरुपायों के रक्षक हैं। वे छोटे से भूखंड के राजा नहीं, एक विशाल मनोराज्य के राजा हैं। पिता के सत्य के लिए तप का वरण और दुर्बलों की रक्षा के लिए शस्त्र का वरण- ये दोनों बातें एक साथ पहले किसी एक व्यक्ति में नहीं दिखीं ये सबसे पहले राम में ही दिखीं। उनके बाद युधिष्ठिर में। सत्य के धुरंधर होते हुए भी युधिष्ठिर राम न हो सके, क्योंकि वन में रहते हुए उन्होंने कोई रावण नहीं मारा या उन्हें कोई मारने को रावण नहीं मिला। वनवासी राम ने धर्म के रथ पर सवार होकर विजय-यात्रा की, यही बात लोक चेतना में ऐसी बसी कि वह देवताओं से बड़े हो गए। देवता असुरों से डरते थे, पर राम नहीं। राम दूसरे आदमियों से भिन्न सिर्फ इस माने में थे कि दूसरे आदमी विपत्ति में देवता की गुहार लगाते हैं और राम की गुहार देवता लगाते हैं। हाँ, राम स्वयं अपने साथ लेते हैं ऐसे मनुष्यों को, जो अपने को दीन और हीन माने बैठे हैं। इसीलिए राम से साधारण आदमी का इतना गहरा और इतने लंबे अरसे का लगाव है। (लोक और लोक का स्वर से)

राम अर्थात मनुष्य की विराटता, मनुष्य की करुणा! इसीलिये भारत के लोकसाहित्य का सबसे बडा नायक राम है, लोकमंगल का सबसे बडा प्रतीक है - मंगलभवन अमंगलहारी। लोकमानस के लिए राम इतिहास से बड़ा सत्य हैं ! उस ऐतिहासिक-दृष्टि को जो घटनाओं को देशकाल में बाँधती है , लोकमानस ने कभी महत्त्व नहीं दिया ! सूत्र के रूप में कहें तो -लोकहृदय की आस्था का ही एक नाम राम है। डाक्टर राममनोहर लोहिया ने लोक की आस्था को नमन करते हुए लिखा है कि मैं यह नहीं जानना चाहता हूँ कि राम थे कि नहीं थे। यह भी नहीं जानना चाहता कि वे परमेश्वर थे या दशरथनंदन! लेकिन भारत की करोड़ों- करोड़ों जनता जिस रामके नाम के सहारे अपना सुख- दु:ख, जीवन -मरण सबकुछ सहन कर लेती है । अपने सब को जिस राम में समर्पित और विसर्जित कर देती है; ''मेरी आस्था उन करोड़ों करोड़ों भारत-वासियों में है'' लोकमानस में राम केवल इतिहास का ही सत्य नहीं हैं , राम चिन्तनप्रणाली का भी सत्य हैं। समाजशास्त्र और राजनीति [रामराज्य] का भी सत्य हैं। भावना का सत्य हैं। साहित्य और कला का भी सत्य हैं। लोकमानस में राम की जो अवधारणा है , उसमें सर्वभूत-हित प्रतिष्ठित है। मंगलभवन अमंगलहारी। भावना के सत्य के रूप में, चिन्तन के सत्य के रूप में, विश्वास के सत्य के रूप में राम लोकमानस में प्रतिष्ठित हैं। प्रतिष्ठा के इस अनुष्ठान में परिनिष्ठित साहित्य ने स्वस्तिवाचन किया है और लोक की सहेलियों ने मंगलगीत गाया है। समग्र भारतीयलोकसाहित्य में सबसे बडा नायक राम है। लोकमानस में राम समाज की मर्यादा और आचरण की कसौटी हैं, सौन्दर्य के प्रतिमान और विश्वास का बल हैं। व्यक्तिजीवन के अन्तिम अनुष्ठान में राम नाम के सत्य की उद्घोषणा मात्र औपचारिकता नहीं है, मनुष्य-जीवन की युगयुगीन यात्रा के पुन:पुन: परीक्षित और अनुभूत सत्य की उद्घोषणा है।

लोकजीवन को राम इतने प्रिय क्यों हैं? राम जैसा विशाल हृदय कौन है? राम जैसा धीर-उदात्त कौन है? लोकाराधन के लिए राम ने सीता को वनवास दिया और स्वयं ने तापसजीवन का वरण कर लिया! वे धरती पर चटाई बिछा कर सोते थे। राजोचित वैभव-विलास उनके जीवन से विदा होकर वनोवास के लिए चला गया! वे कितने निरीह हो चुके थे। अन्त में उन्होंने जलसमाधि का वरण किया! कालपुरुष का मिलने आना तो एक व्याज ही था। राम पूर्णकाम थे, जीवन के सरोकार पूरे कर चुके थे। भरत उसी समय उत्तर दिशा से लौट कर आये थे। राम ने भरत से विमर्श किया, भरत विचलित भी हुए। राम सरयू तट पर जाकर जल का स्पर्श करते हैं, जल की परिक्रमा करते हैं और योगेनान्ते तनुत्यजां। फिर राम को किसी ने नहीं देखा। शरीर को संकल्प पूर्वक त्याग दिया। वे लोकाराधन के लिए जिये किन्तु किन्तु लोक ने इस बात को लेकर राजा राम को

कितनी-कितनी तरह से कोसा है कि राम उस वेदना को सम्हाल नहीं पाते ! वन में सीता के गर्भ से लव और कुश का जन्म होता है , नाई संदेश ले कर जाता है, तब उससे कहा जाता है कि >>> मां कौशल्या को पुत्रजन्म का संदेश देना, मां कैकेयी और मां सुमित्रा को पुत्रजन्म का संदेश देना, यह मंगल-संदेश लक्ष्मण को देना और भरत, शत्रुघ्न को भी पुत्रजन्म का शुभसंदेश देना, किन्तु देखो, राम से कुछ मत कहना ! राम एक तालाब पर दतुअन कर रहे हैं, लक्ष्मण उधर आते हैं , उनका मुख प्रसन्नता से खिला हुआ है ! राम पूछते हैं कि आज तो कुछ विशेष बात है ! क्या नयी बात है ? लक्ष्मण कहते हैं कि मेरी भाभी ने दो पुत्रों को जन्म दिया है ! आपको नहीं मालूम ? रात को नाई आया था ? अरे ! सबको समाचार सुनाया और मुझे इस संवाद से वंचित कर दिया ? हाय, मैं इतना अकेला हूं ? राम के हाथ से दतुअन गिर जाती है और आंसुओं की धारा बहने लगती है ! कमरबंद भीग जाता है। राम अपने को सम्हाल नहीं पाते !कैसी विडंबना है कि राम के पुत्र अपने पिता का नाम नहीं जानते।

सीतावनवास को लेकर लोकमानस में कैसा पश्चात्ताप है कि सम्हाले नहीं सम्हल पाता ! बडे विचित्र अन्तर्द्वन्द्व हैं। लोककहानी ही तो है कि >> धोबी अपनी पत्नी से कह रहा था कि- मैं कोई राजा राम नहीं हूं कि रावण के घर में इतने दिनों तक रह कर आयी सीता को अपने महलों में उसी आदर के साथ बुला लिया ! उल्लेखनीय है कि लोकजीवन में कहीं कहीं यह प्रथा है कि विवाह के पहले कन्याएँ आँचल पसारकर धोबिन से सुहाग माँगती हैं और धोबिन बहुत मनावन के बाद एक चुटकी सिंदूर देती है। धोबिन का यह आदर इसलिए है कि धोबी के दुर्वचन से एक धोबिन के घर से निकाले जाने पर सीता जैसी सुहागिन का बनवास हो गया। इसलिए धोबिन को प्रसन्न करना अपने सुहाग को कायम रखने के लिए बहुत आवश्यक माना जाता है।

सीता वनवास-प्रसंग को लेकर धोबी-प्रसंग से भिन्न एक कथागीत ननद का भी है, जिसमें ननद पूछती है >> रामन दसखत लिख देउ भौजी हतए कौन उन्हारे ? और भी कई तरह के गीत हैं, जिनमें राम ने सीता को लोक-अपवाद के कारण त्याग दिया । आचार्य वासुदेव शरण अग्रवाल ने अपना अनुभव बतलाया था कि -1944 की जून में मैं गाँव गया था, दौलतपुर गाँव की बापुरी मड़ैया में नितान्त अनपढ़ और अत्यन्त वृद्ध खचेडू ने कुरु जनपद में प्रचलित रामायणी कहानी का एक रूप सुनाया ,उसे सुन कर मन में लोक के प्रति श्रद्धा का संचार हुआ ! इस कहानी में सीता भौजाई के सुखी जीवन में ननद शान्ता कुरस का कारण बनी है ! राम-लक्ष्मण वन में आखेट के लिए गए हैं। पीछे शान्ता ने सीता से निहोरा किया कि रावण का कुछ हाल सुनाओ । सीता उसे टालती है । पर उसके विशेष आग्रह पर और राम से भाई की सौगन्ध खाने पर सीता रावण को लिखने के लिये तैयार हो जाती है। लिपी-पुती भीत पर सीता रावण को लिखने लगी। सब आकृति लिखकर पूरी हो गई। उसी समय राम के वन से लोटने की सूचना आई । सीता घबड़ाकर उठ भागी भागने में सवण की जंघा पर रंग का एक डोव गिर गया। यही सीता के लिये काल हो गया । राम आए। शान्ता ने कहा- भाई, रावण को सीता ने देखा है। राम ने सीता के लिखे हुए रावण को देखा। जाँध देखकर उनका मन भी डोल गया।

इससे जान पड़ता है कि लोक की दृष्टि राम के राजमहल और दौलतपुर की झौंपड़ी के मानवी हृदयों को एक से बट्टों से तोलने की अभ्यस्त है ! लोकगीतों की हिरनी भी कौशल्या को शाप देती है। भोजपुरी और अवध-जनपद का एक सोहर-गीत है-छापक पेड छिउलिया त पतवन गहवर हो

**छापक पेड़ छिउलिया त पतवन गहवर रे।**
**अरे रामा तेहि तर ठाढ़ी हिरानियाँ तो मन अति अनमन रे।**
**चरतै-चरत हिरना हरिनी से पूछ्इ हो।**
**हरिनी की तोर चरहा झुरान की पानी बिनु मुरझिव रे।**
**नाहीं, मोर चरहा झुरान न पानी बिनु मुरझिंव रे।**
**हरिना, आजु राजा जी के छ्ठ्ठी, तुहैं मारि डरिहैं हो।**
**मचियै बैठी कौसिल्या रानी, हरिनी अरज करै हो।**
**रानी मसुवा तौ सिझय रसोइयाँ, खलरिया हमै देतिब हो।**
**पेड़वा त टंगतिब खलरिया त हेरि फेरि चितइब हो।**
**रानी मन आपन समझाइत हरिन जनु जीतई हो।**
**जाहु हिरनी घर अपने, खलरिया नाहीं देबइ हो।**
**हरिनी, खलरी से खंझड़ी मढ़इबै तौ राम मोर खेलिहैं हो।**
**जब जब बाजै खंझडिया सबद सुनि अनकइ हो।**
**हरिनी ठाढी ढेकुलिया के नीचे, हरिन कै बिसूरइ हो।**

राम की छटी पुजती है,शिकारी हरिण का शिकार खेलने जाते हैं,हरिणी कौशल्या से आकर विनती करती है-हरिण को छोड दो,मुझे मार डालो। परंतु हरिण मारा ही जाता है। हरिणी फिर आती है,चमडा तो मुझे दे देना। कौशल्या कहती हैं -'जाहु हरिनी घर अपने खलरिया ना देइबि हो हरिनी खलरी के खंझडी मढ़ाइब राम मोरा खेलिहन हो।' चमडे की खंजडी बन गयी। खंजडी बजती है तो हरिणी आंसू बहाती है, कौशल्या को शाप देती है - तुम्हें भी ऐसा ही पतिवियोग होगा। इसे आप संयोग कह लीजिये कि वह सोने का ही हिरन था , जिसके कारण सीता का हरण हुआ और दु:खों का क्रम बन गया !

भारत में भूमि की पहचान राम के चरित से जुड़ी हुई है ! एक ओर अयोध्या से लेकर श्रीलंका तक की धरती पर अनुश्रुतियों के रूप में राम का चरित लिखा हुआ है तो दूसरी ओर भारत की कितनी जनजातियाँ हैं , जो किसी न किसी रूप में राम के जीवन से जुड़ी हुई हैं ! राम विंध्य को पार करके दंडकवन में पंहुचे। एक ओर यहाँ पर रावण के शासन-सूत्र से जुड़े हुए लोग हैं- ख्रर, दूषण, त्रिशिरा, मारीच, शूर्पनखा आदि, तो दूसरी ओर वानर-सभ्यता का केन्द्र किष्किन्धा भी है। गृद्ध-गणगोत्र (टोटम) के जटायु, सम्पाति आदि भी हैं। काक [टोटम] भी यहां थे !

जयन्त , जिसने सीता के प्रति अभद्रता की थी ! दंडकवन में ही अगस्त्य हैं, सुतीक्ष्ण हैं तो शबरी और शरभंग भी हैं , शंबूक भी यहाँ है। कितने प्रकार के तपस्वी मुनि हैं- बालखिल्य, वैखानस, पत्राहार, सलिलाहार, वायुभक्ष , आकाशनिलय ! शंबूक ने तो पेड़ से उलटे लटक कर तप किया था। यहीं ऋष्यमूक-पर्वत था, किन्तु बाली को शाप था ,वह वहां नहीं जा सकता था ! सुग्रीव यहीं शरण लेकर रह रहा था ! सीताहरण इसी वन में हुआ था !सुग्रीव से मित्रता भी यहीं हुई ! जब सुग्रीव ने हनुमान को दक्षिण-दिशा में जाकर सीता को खोजने को कहा तब उन्होंने कहा था कि यहाँ से आगे चल कर तुम्हें गोदावरी-नदी मिलेगी ,आन्ध्र ,चोल ,पुंड्र , पांड्य और केरल के इलाके भी मिलेंगे।

भारत के बाहर के अनेक देशों [लाओस, तिब्बत, इण्डोनेसिया, थाईलैंड, वियतनाम, बालीद्वीप, जावा , कंबोडिया आदि] में रामकथा की अपनी-अपनी लिखित और वाचिक-परंपरा हैं, जो भिन्न-भिन्न संस्कृतियों में ढली-पली हैं ।

रामलीला का मंचन अनेक देशों में होता है। इन कथाओं को लेकर समय-समय पर विभिन्न लेख धर्मयुग, साप्ताहिक-हिन्दुस्तान, राष्ट्रभाषा परिषद पटना की परिषत्पत्रिका में प्रकाशित होते रहे हैं तथा इन्दिरागांधी राष्ट्रीय कलाकेन्द्र ने भी इनका संकलन -संपादन कराया है। ध्यान देने की बात है कि गोस्वामी तुलसीदास ने भी कहा था कि रामकथा के असंख्य रूप प्रचलित हैं -रामायन सत कोटि अपारा। भारत के बाहर की इन विभिन्न रामकथाओं में वाल्मीकि-रामायण के प्रसंगों को पहचाना जा सकता है, भले ही उन पात्रों और स्थानों के नाम भिन्न-भिन्न हैं। उन देशों की रामकथा में वहाँ की लोककथाएं घुलमिल गयी हैं। उनके अभिप्राय या मोटिफ़,कथा-तन्तु भिन्न हैं। उनके बौद्ध-प्रभाव को देखते हुए यह भी कहा जा सकता है कि ये कथा भारत से बौद्ध-कथाओं के साथ घुल-मिल कर गयी हैं ।

थाईलैंड में राजा बोरोमकोत की रचनाओं में राम कथा का प्रसंग है। वहाँ के कवि तासकिन ने थाई भाषा में रामकथा लिखी थी। थाईलैंड में राम कथा पर आधारित अनेक कृतियाँ हैं , जिन में एक रचना का नाम 'रामकियेन' है। 'रामकियन' थाईलैंड में रामायण का एक सर्वाधिक प्रचलित स्वरूप है। प्राचीन समय में थाईलैंड की राजधानी 'अयुत्या' का नाम भी श्रीराम की राजधानी अयोध्या के नाम पर रखा गया था। 'रामकियन' के मुताबिक थाईलैंड के राजा स्वयं को राम के वंशज मानते थे।

'रामकियेन' में अनेक प्रसंग ऐसे हैं , जो हमारे लिए बिलकुल नये हैं , जैसे-विभीषण पुत्री वेंजकाया द्वारा सीता का स्वांग रचाना । इंद्र ने जो नगर बनवाया ,उसका नाम अयुताया रखा था, क्योंकि वहाँ अजदह, युक्खर, ताहा और याका नामक ऋषि तपस्या कर रहे थे। इन्द्र ने इन ऋषियों के नाम के पहले अक्षर जोड़ कर यह नाम बनाया था। अयुताया नगरी के राजा का नाम था-सम्राट अनोमतन ,उसका विवाह मैनीगैसौर्न नामक एक अपूर्व सुंदरी से हुआ, उनके बेटा हुआ अच्छवन। उसका विवाह थेपबसौर्न नामक सुंदरी से हुआ, उनके बेटे हुए राजा दशरथ।

लंका द्वीप पर नीलकल नामक काला पहाड़ था, विश्वकर्मा ने उस द्वीप पर नगर का निर्माण किया, ब्रह्मा के चचेरे भाई तदप्रौम उसके राजा बने। उनके पुत्र का नाम लसेतियन था। आगे चल कर वह लंका का राजा बना। उसके पाँच रानियाँ थीं। पाँचों रानियों से पाँच पुत्र उत्पन्न हुए जिनके नाम कुपेरन (कुबेर), तपरसुन, अक्रथद, मारन और तोत्सकान (दशकंठ) थे। कालांतर में रचदा के गर्भ से कुंपकान (कुंभकर्ण), पिपेक (विभीषण), तूत (दूषण), खौर्न (खर) और त्रिसियन (त्रिसिरा) नामक पाँच पुत्र और सम्मनखा (सूपंणखा) नामक एक पुत्री उत्पन्न हुई। इस प्रकार 'रामकियेन' की रामकथा में विचित्र कथाएं हैं । सीता को वनवास तो दिया जाता है किंतु अन्त में शिव की कृपा से सीता और राम का पुनर्मिलन हो जाता है ।

इंडोनेशिया के नब्बे प्रतिशत निवासी मुसलमान हैं, फिर भी उनकी संस्कृति पर रामकथा का गहरा प्रभाव है। फादर कामिल बुल्के ने 1982 ई. में लिखा था कि 'पैंतीस वर्ष पहले मेरे एक मित्र ने जावा के किसी गाँव में एक मुस्लिम शिक्षक को रामायण पढ़ते देखकर पूछा था कि -आप रामायण क्यों पढ़ते है ? उत्तर मिला, 'मैं और- अच्छा मनुष्य बनने के लिए रामायण पढ़ता हूँ।' रामकथा पर आधारित जावा की प्राचीनतम कृति 'रामायण काकावीन' है जो नौवीं शताब्दी की रचना है।इंडोनेशिया में काकविन का अर्थ महाकाव्य है ।

रामायण महाकाव्य पर आधारित कंबोडियाई महाकाव्य 'रिमकर' जिसे 'रामकरती' भी कहा जाता है, जो रामायण पर आधारित कंबोडियाई महाकाव्य है। जिसका शाब्दिक अर्थ हिन्दी में 'राम की महिमा' या 'राम कीर्ति' है।

'लाओस में लाओ' का अर्थ है -'विशाल' अथवा 'भव्य'। लाओ जाति के लोग अपने को भारतवंशी मानते हैं। कलिंग पर अशोक के आक्रमण के समय दक्षिण भारत के बहुत से लोग असम-मणिपुर मार्ग से हिन्दचीन चले गये थे। लाओस के निवासी उन्हीं लोगों के वंशज हैं। लाओस में रामकथा पर आधारित कई रचनाएँ हैं , जिनमें मुख्य रूप से फ्रलक-फ्रलाम (रामजातक), ख्वाय थोरफी, पोम्मचक (ब्रह्म चक्र) और लंकानाई के नाम उल्लेखनीय हैं। 'राम जातक' के नाम से विख्यात 'फ्रलक फ्रलाम' की लोकप्रियता का रहस्य उसके नाम के अर्थ 'प्रिय लक्ष्मण प्रिय राम' में समाहित है। 'रामजातक' लाओस की संस्कृति का कोश है ।

राम जातक दो भागों में विभक्त है। इसके प्रथम भाग में दशरथ पुत्री चंदा और दूसरे भाग में रावण तनया सीता के अपहरण और उद्धार की कथा है। लुमलु विरुलह की पत्नी महालिका के गर्भ से जो पुत्र उत्पन्न हुआ, जन्म के समय ही उसके हाथ में धनुष और तलवार थी। उसका नाम राफनासुअन (रावण) रखा गया। महालिका ने दो अन्य पुत्रों को भी जन्म

दिया जिनके नाम इंदहजीत (इंद्रजीत) और बिक-बी (विभीषण) थे। बाल्यावस्था में ही रावण ने दशरथ पुत्री चंदा का अपहरण कर लिया। जातक कथाओं की तरह इसके अंत में बुद्ध कहते हैं कि पूर्वजन्म में वे ही राम थे और देवदत्त रावण था।

तिब्बत के लोग प्राचीनकाल से वाल्मीकि रामायण की मुख्य कथा से परिचित थे। तिब्बती रामायण की छह प्रतियाँ तुन-हुआंग नामक स्थल से प्राप्त हुई हैं। तिब्बत की सबसे प्रामाणिक रामकथा किरंस-पुंस-पा की है। किरंस-पुंस-पा की राम कथा के आरंभ में कहा गया है कि शिव को प्रसन्न करने के लिए रावण अपने दस सिर महादेव के लिए समर्पित करता है और वे महादेव की कृपा से पुन: लग जाते हैं । रावण के घर एक कन्या का जन्म होता है, किंतु भविष्यवक्ता कहते हैं कि लंका में उसके रहने से राक्षसों का विनाश हो सकता है। इसलिए उसे तांबे के कलश में बंद कर जल में बिसरा दिया जाता है। वह कन्या एक कृषक को मिलती है। वह उसका नाम रौल-रेंड-मा रख देता है। उसका विवाह राम से होता है, तब उसका नाम सीता रख दिया जाता है। तिब्बती रामकथा में राम का नाम रामन है । रामन ने रावण और अन्य राक्षसों का वध कर दिया। इस पाप के कारण वे कलियुग में बुद्ध के रूप में अवतरित हुए। तिब्बती रामकथा में स्वर्ण-मृग का प्रसंग है ,वानरी सेना है, हनुमान शिव के पुत्र हैं, त्रिनेत्र धारी हैं, वे अशोक वाटिका के वृक्षों को उखाड़ते हैं। दशग्रीव की बहन का नाम स्ला-वियड-मा है। बाली का नाम बब्ले है।

वियतनाम में रामायण से जुड़े विभिन्न प्रसंगों के गायन और नाट्यमंचन की परंपरा है। प्राचीनकाल में वियतनाम चंपा नगर के नाम से जाना जाता था, जहां हिंदू राजवंश का शासन था। वियतनाम के त्रा-किउ नामक स्थल से प्राप्त एक शिला लेख में महर्षि वाल्मीकि का स्पष्ट उल्लेख मिलता है।

बाली द्वीप में रामकथा पर आधारित रचनाओं में 'सेरतकांड', 'रामकेलिंग' और 'सेरी राम' का नाम उल्लेखनीय है। जावा में रामायण काकावीन की रचना कावी भाषा में हुई थी काकावीन का अर्थ महाकाव्य है। इस रचना का आरंभ राम जन्म से होता है। विश्वामित्र के साथ राम और लक्ष्मण के प्रस्थान के समय अष्टनेम ऋषि उनकी मंगल कामना करते हैं और दशरथ के राज प्रसाद में हिंदेशिया का वाद्य यंत्र गामलान बजने लगता है। रामायण काकावीन में परशुराम का आगमन विवाह के बाद अयोध्या लौटने के समय वन प्रदेश में होता है। उनका शरीर ताल वृक्ष के समान लंबा है। रामायण काकावीन में ऋष्यमूक पर्वत के पास श्रीराम की भेंट तपस्विनी शबरी से होती है। उसने पेड़ की छाल से अपने शरीर को ढक रखा है। उसका रंग काला है। वह श्रीराम को मधु और फल खाने के लिए देती है।

- लेखक वरिष्ठ साहित्यकार हैं।
संपर्क- 1828 हाउसिंग बोर्ड कालोनी, सेक्टर- 13-12
पानीपत- 132203(हरियाणा), मो.- 9996007186


## 'कला समय' पत्रिका के सदस्यता शुल्क की सूचना

प्रिय पाठकों,

सदस्यों से अनुरोध है कि अपना सदस्यता शुल्क निम्नानुसार भेजकर सहयोग करें। जिन आजीवन (15 वर्षीय) सदस्यों की सदस्यता अवधि के 15 वर्ष पूरे हो चुके हैं, उनसे अनुरोध है कि वे पुन: अपनी आजीवन सदस्यता का नवीनीकरण कराने हेतु 'कला समय' के पक्ष में आजीवन सदस्यता शुल्क भेज कर अनुगृहीत करें।

**सदस्यता शुल्क**

| | | | |
|---|---|---|---|
| **वार्षिक** | : | 300 (व्यक्तिगत) | 350 (संस्थागत) |
| **द्वैवार्षिक** | : | 600 (व्यक्तिगत) | 700 (संस्थागत) |
| **चार वर्ष** | : | 1000 (व्यक्तिगत) | 1200 (संस्थागत) |
| **आजीवन** (15 वर्ष के लिए) | : | 10,000 (व्यक्तिगत) | 12,000 (संस्थागत) |

**( कृपया सदस्यता शुल्क- ऑनलाईन/ड्राफ्ट/मनीआर्डर द्वारा 'कला समय' के नाम पर उक्त पते पर भेजें )**

**विशेष :** 'कला समय' की प्रतियाँ साधारण डाक/रजिस्टर्ड बुक-पोस्ट से भेजी जाती हैं यदि कोई महानुभाव रजिस्टर्ड पोस्ट से पत्रिका मंगवाना चाहते हैं तो कृपया वार्षिक डाक खर्च 120/- अतिरिक्त भेजने का कष्ट करें।

ललित निबंध

# अनुभव में उतरा रस विशेष

डॉ. श्यामसुंदर दुबे

एक बारात में गया था। वैसे तो बारात में जाना मैं अक्सर टालता हूँ। जानता हूँ कि बारात भले आदमियों को तब भी दु:खदायी थी, जब बारात में होना अपने को शतक्रतु शक्र से कम नहीं समझा जाता था और देव-दुर्लभ नट-जात्रा का त्रासद अंत गिरधर की कविता के पश्चातापी अंत से होता था। पूरी कविता यहाँ लिखने की जरूरत नहीं है- बस यही समझ लीजिये कि एक घमासान घटना का अवसान इस कुंडलिया में हमें अवसन्न कर देने वाला है। भूमि पर सोना, भूखों मरना, घर से बाहर निकले कि फिर कोई खबर-दबर लेने वाला नहीं, ब्रेकफास्ट अर्थात् कलेश कब मिलेगा कुछ भी अता-पता नहीं, राम-राम करते, बारात से लौटे- बस यही बहुत था कि लौट आये! गिरधर अंत में कहते हैं- ''बरे जो ईदक-बीदा।'' यह माया-जाल और फैला है- अब अनंत भोज्य पदार्थ हैं- सुख-सुविधाओं का बाजार खुला पड़ा है।

फिर भी बारात नीरस है- निचार झंझटिया मेला है- मुझे पहले की बारातों के कष्ट रसमय लगते थे- और बारात का रागभरा आलाप मेरी जीवन-खंजड़ी पर अनेक दिनों तक गूँजता रहता था। पंगत बैठती-षट्रस व्यंजन परोसे जाते- और नवरस में सनी गारियाँ सुमुखियाँ के अधर पुटों से निस्रत होतीं तो मन डँवाडौल होने लगता-देह हुलफुला उठती-तभी कोई कहता, ''भाई! यहाँ 'राम रस' तो परोसा ही नहीं गया, तो रस आविद्ध मन का सपना-सा टूटता-इतने रसों के बीच यह 'रामरस' क्या है? परोसने वाला नया था- नहीं जानता था कि 'रामरस' क्या होता है। तभी कोई कहता 'नमक' लाओ जी! यही 'रामरस' है। जिस पाक शाला को, जिन रससिक्त व्यंजनों को रसोई कहा गया है, वे सब अपने-अपने स्वाद में भले अलग हों किंतु जब वे 'रामरस मय' हो जाते हैं तब, रसोई रस स्रोत बन जाती है।''

इतना आल-जाल, सब्जी-दाल, तिल-तंडुल रोटी-पराँठा सब 'रामरस' बिना अलौने हैं। वे सब 'रामरस' से ही सलौने बनते हैं। चुटकी भर सफेद नमक-सेंध नमक जैसा 'रामरस' सलौने राम का वह सौन्दर्य-विस्तार है, जो जीवन के आस्वाद्यमान रसों को लावण्यमय बनाता है। 'राम', रस-व्यंजना के अधिष्ठान हैं- इसीलिए वे ''रसो वै स:'' हैं। यह 'रस' वह 'रस' है - जो निरंतर तृप्तिहीन करता जाता है। इसी मेघर्मेदुर-घनश्याम स्वरूप वाले मेरे राम को लक्षितज कर कविवर बिहारी कहते हैं ''सगुन-सलौने रूप की जौन चख-तृषा बुझाय।'' इस रूप की मस्ती में डूब गया सो पार उतरकर भी पार नहीं उतरता-वह डूब-डूबकर ही अपने को धोता-पछोरता रहता है, विद्यापति एक जनम नहीं कई-कई जनम इसमें डूबकर तृप्त नहीं हो पा रहे हैं, ''जनम अवधि हम रूप निहारिल तऊ न तिरपत भेल।'' यह राम का सलौना स्वरूप जिसके भीतर रम जाता है, वह लावण्य से जगमग हो उठता है। राम वह है, जो उनसे जुड़ा, उन जैसा हो गया- हो क्या गया- राम ने उसे अपना जैसा बना लिया। कोई ऊँचा-नीचा नहीं है- 'रामरस' में! ''प्रभुतरु तर कपि डार पर किये ते आप समान।'' यह भगवत्ता, उस रस-भाव से ही प्राप्त हो सकती है जब राम हमारे रोम-रोम में मिंद जायें- जैसे भोजन में नमक भिंदता है- बिल्कुल इसी तरह शरीर में रसौषधि भिंदती है और शरीर निरुज हो जाता है- जब 'रामरस' अंत:करण में भिंदता है, तब मन की निरूजता अपने-आप आ जाती है।

इस भिंदने की क्रिया को 'फुर' होना भी कहा जाता है, जो स्फुरित का ही अपभ्रंश है। 'रामरस' स्फुरित हो उठे तो जीवन सँवर जाये! सांवरे में- और सांवरे के नाम में यह विशेषता तो है-ही! जिनके जीवन में यह नाम 'फुर' गया- वे सँवर गये। रामचरित को शब्दों में बाँधने के पूर्व संत तुलसीदास ने परमाराध्य शिव से केवल इतना ही वरदान माँगा था- 'तो फुर होय जो कहहुँ मैं भाषा-भनित प्रमाउ।' मेरे गाँव का लोक-मंत्रज्ञ, झाड़-फूँक करता है, अपना गुप्त मंत्र बाँचता है और उसे समाप्त करते-करते कहता है 'फुरे मंत्र ईसुरी वाचा।' मेरा यह मंत्र ईश्वर की वाणी है- जो इस समस्याग्रस्त प्राणी में स्फुरित हो उठे। मंत्र भी औषधि जैसा ही फुरता है- तुलसी जिस मंत्र को अपनी भाषा में ढालते हैं- वह मंत्र ''राम'' इन दो अक्षरों में समाया है- मुझे बचपन में औषधियों के विज्ञापन आकर्षित करते थे- औषधियों का गुण-धर्म कैसा-क्या था- इससे मुझे लेना-देना नहीं था- बस उनके विशेषण पर ही ध्यान अटक जाता था- एक विशेषण था जो सभी विज्ञापनों में सनसनाता रहता था- 'राम बाण'! 'रामबाण' औषधि!

मैं हैरान था कि कोई दवा बाण-जैसी है ही नहीं! फिर औषधि रामबाण कैसे हुई? जब थोड़ा पढ़ने में रमने लगा तो पढ़ाई को प्रमाणित करने की उस समय गाँव में एक ही परीक्षा से गुजरना पड़ता था और वह परीक्षा थी- कि 'रामचरितमानस' पढ़ पाता हूँ कि नहीं! पढ़ ली तो उत्तीर्ण! इस परीक्षा की तैयारी कर रहा था- तब तुलसीदास की अन्य कृतियों से भी परिचित हुआ। मुझे रामबाण औषधि मिल गयी। ''जासु नाम भव-भेषज हरण घोर भय शूल।'' जिसका नाम संसार के भयतापों का हरण करने वाली औषधि है- नाम ही औषधि बन गया- यह औषधि अचूक है- जैसे राम का बाण अचूक है। जैसे औषधि भिंदती है- वैसा बाण भी भिंदता है। लगता, एक जगह - और सारा शरीर पिरा उठता है। राम जब पोर-पोर में पिरा उठें - मीरा जैसे- ''ऐ री! मैं तो दरद दीवानी,

मेरा दरद न बूझे कोय।'' कह उठती है- मुझे तो लगता है- पिराने से ही प्रीति का संबंध है- पिराये बिना जो प्रीत होती है- उसका पानी जल्दी उतर जाता है- वह प्रीत ही नहीं है- दर्द-भिंदता है- तो प्रीति गाढ़ी होती है। अपभ्रंश की कविता की नायिका यही तो कहती है कि जैसे कोरे मिट्टी के घड़े में जनल भिंद जाता है- वैसे ही मेरा प्रियतम इस जीवन घट में भिंद जाये। और 'रस' बन कर ही भिंदा जा सकता है- 'रामरस' जब तक जीवन में इस तरह न भिंदे कि प्राणों में पुलक की झलक बन कर छलक न उठे तब तक लावण्य का चर्वण अतृप्ति दायक नहीं बनता ? अन्यथा देखा, आकर्षित हुए, फिर भूल-भाल गये-आँखें जब मयूर पाँखें बन जातीं हैं, तब ऐसा ही होता है- जब ऊजरी आँख में लावण्यमयी राम की छवि आती है- तब ''ज्यौं-ज्यौं निहारिये नियरे हो नैननि, त्यौं-त्यौं खरी निकसे-सी निकाई।'' यही निकाई है जो अतृप्ति से परिचित कराती है।

जिस 'रामरस' की मैं बात कर रहा हूँ वह जीभ के अनंत रसों से अपने आस्वादन में भिन्न है। रसना, रटना तो उसकी लगा सकती है- उसे उच्चारित कर सकती है, लेकिन उसकी आस्वाद्यमानता को पा ही नहीं सकती है। खूब चिल्लाते रहो- राम-राम! इससे हम राम कहने का पुण्य प्राप्त कर सकते हैं- इस वाचिक बाचलता से, 'रस' नहीं ले सकते हैं, क्योंकि 'रामरस' जीभ का विषय उस रूप में नहीं है- जैसा अन्य पदार्थों का रस है- यह 'रस विशेष' है। गोस्वामी जी लिखते हैं, ''रामकथा जे सुनत अघाहीं। रस विशेष जाना तिन्ह नाँहीं।'' वे 'रस विशेष' की चर्चा करते हैं- यह सुनकर पाया जा सकता है। यह श्रवण का विषय है। यह कर्ण-रसायन है। शौनक इस रसायन में ही परिप्लुत होना चाहते हैं- ''सूताख्याहि कथासारं मम कर्ण रसायनं।'' बोलकर शब्द पराया-सा बन जाता है- और सुनकर शब्द अपना-सा हो जाता है- श्रोता बनना महत्वपूर्ण है- शब्द को सुनकर उसे अपने भीतर उतारकर फिर बोलने में उसकी रसमयता का बोध होता है। यह शब्द को सुनकर उसमें तन्मय होने की प्रक्रिया है- फिर बिना बोले भी शब्द ध्वनित होता रहता है- यह शब्द का रसायन में बदल जाना है। इस रस का आनंद अकेले-अकेले न लिया जाये- इसे बाँटा जाये- जब यह भाव भीतर जागता है- 'कहे बिनु रह्यो न जाये।' तब राम कथा होती है।

इस कथा में तृप्ति का अनुभव नहीं होता, एक अगाध और निरंतर प्यास जगाने वाली यह कथा- इंप्रिय-बोधी अवश्य है- किंतु, है- यह इन्द्रियोत्तर बोध जो देहाध्यास को उत्तीर्ण कर पाया जा सकता है- देह की सीमा में जो रस अनुभव होता हे- वह क्षीण पड़ता-पड़ता तृप्ति में पूर्णविराम पा लेता है। मिष्ठान्न की मिठास भूख के शुरुआती क्षण में जो रस ग्रंथियों में प्रस्रवण करती है- वह अपनी चरम सीमा में श्लथ पड़ने लगती है- और स्वाद फीका पड़ जाता है। यह अलग बात है कि फिर-फिर स्वादैषणा जागती है और ''भोगा: न भुक्त: वयमेव भुक्ता:'' होता है। यह खंडित स्वाद-भ्रम है- जैसे-जैसे इंद्रियाँ असमर्थ होती जाती हैं- वैसे-वैसे देह से हटकर यह भेग-क्षुधा, मन में पैठती जाती है- और मन-शरीर का संघर्ष चलते-चलते मन मुरझाने लगता है- अत: मन को कथा-रस में डुबाकर ही उसकी भौतिक बुभुक्षा का 'रस विशेष' का आग्रही बनाया जा सकता है। अच्छा हो इस 'रस विशेष' को पाने यावज्जीवन साधना की जाये।

इस 'रस विशेष' को पाने वाले हनुमान को 'राम-कथा के रसित' कहा गया है। लंका-विजय के सभी गण-गणाधिपति जब राम के राजा बनने पर अपने-अपने क्षेत्र में वापस लौट जाते हैं- तब हनुमान, रामजी की सेवा में अहर्निशि का अवसर प्राप्त कर लेते हैं। यह राम-कथा का अखंड सामीप्य था, जिसे वे अपने रोम-रोम में समाये हुए थे। इसीलिये उनके पास 'राम रसायन हैं- ''राम रसायन तुम्हरे पासा। सदा रहो रघुपति के दासा।'' वे राम कथा से कभी नहीं अघाते! उनके भीतर राम कथा की व्याकुलता निरंतर है।

रामकथा जहाँ आयोजित होती है, वहाँ हनुमान जी सबसे पहले पहुँचते हैं। उन्हें आसन दिया जाता है। बाद में अन्य देवतागण कथा सुनने आते हैं। यह अखंड और सतत चल रही कथा की बैठकी का प्रारंभिक अनुष्ठान है- मुझे लगता है- देश-देशांतर में कहीं न कहीं राम-कथा हर क्षण सुनी-सुनायी जा रही है। राम कथा को सुनने की एक महाअतृप्ति इस पृथ्वी-मंडल में परिव्याप्त है- राम कथा के बादल उमड़ते-घुमड़ते हैं- रसा का रस-प्लावित करते हैं- फिर-फिर बरसते हैं- फिर भी प्यास शेष है। जो इस प्यास से पीड़ित हैं- वे ही रस विशेष पाने के अधिकारी हैं।

जटाजूट धारी शंभु समाधि में ही इस कथा का विशेष रस लेते रहते हैं- यह कथा उनकी मानस निवासिनी है। शिवा उस विशेष रस में रमना चाहती थीं, जिसमें शंभु रमे थे। वे भी इस कथा में रस-विभोर होती रहती हैं- यह उन पर अविनाशी शंभु की कृपा थी- यह श्रोता-वक्ता की महत्तम जोड़ी थी- दोनों, ''को बड़-छोट कहत अपराधू'' है- इसलिये कथा का यह समाधि-अंतरण था। रसानंद की यह पराकाष्ठा है। जब यह कथा कविता में उलरी तब तुलसी को कहना पड़ा ''शंभु प्रसाद सुमति हिय हुलसी, राम चरित मानस कवि तुलसी।'' ''कवि न होऊँ नहिं चतुर कहाऊँ'' कहने वाले तुलसी ने खुलकर कहा वे कवि हैं- समाधि की कथा वाणी में अवतरित हुई। वह रस विशेष जिस का पान शंकर अखंड रूप से करते हैं- वह तुलसी की वाणी में निषेचित हुआ- और वाणी मंत्र बन गयी। और कथा के आरंभ में ही शिव की बारात चल पड़ी- जहाँ भेजन परोसने वाले 'चतुर सुआरा' हैं- उस भोज्य का रस विशेष होगा ही।

लेखक वरिष्ठ ललित निबंधकार हैं।
श्री चंडी जी वार्ड, डाकघर हटा,
जिला दमोह-470775
मो.- 09977421629

आलेख

# लोक के रोम रोम में बसी रामलीला

डॉ. सुमन चौरे

हमारे समर्थ परिसर में आज फिर एक नया गार्ड आ गया। आये दिन बदलते गार्ड से भी सुरक्षा का ख़तरा ही रहता है। मैंने सोचा उससे उसके ही बारे में मोटी-मोटी जानकारी तो ले ही लूँ, उसका नाम व रहवासी कहाँ का है। प्राय: सिक्युरीटी एजेंसी द्वारा ड्युटी पर भेजे गये गार्ड का नाम तक रहवासी नहीं जानते। मैं उससे मिलने पहुँची, मैं उससे कुछ पूछूँ, इसके पहले ही वह मुझसे पूछने लगा, 'आप कहाँ के हैं मैडमजी ?' मैंने कहा, 'अरे ! मैं तुमसे यह प्रश्न करुँ, पर उलटे तुम ही मुझसे पूछने लगे।' गार्ड ने कहा, 'नहीं मैंडमजी, आपको देखकर मुझे लगा, जैसे आप मेरे ही देस की हो.... ?' मैंने कहा, 'देश मतलब, तुम कोई दूसरे देश से आये हो क्या।' उसने कहा, 'नहीं, मैं तो निमाड़ देस का हूँ। और आपको देखकर ऐसा लगा कि आप भी उधर की ही हो।'

उसने अपने गाँव का नाम बताया। निमाड़ देस सुनकर मैं भी मुस्कुरा दी और गर्व भी महसूस हुआ। मैंने बताया 'भाई, मैं कालमुखी गाँव की हूँ।' वह बड़ी खुशी से झुका और मुझे प्रणाम किया। मैंने कहा, 'भाई पैर क्यों छू रहे हो।' उसने कहा, 'अरे मैडमजी, आपने ऐसे गाँव का नाम लिया कि मेरा मन झुकने को हो गया।'

गार्ड ने आगे कहा, मैडम, 'आपके गाँव तो हम हर साल जाते थे गाड़ी बैल से। आप के गाँव की रामलीला तो आसपास के बीस-बाईस गाँवों में प्रसिद्ध थी। हमारे और आसपास के गाँवों के दस-बारह गाड़ियाँ भर के हम लोग आपके गाँव रामलीला देखने आते थे। इस डर से कि जगो नहीं मिले, तो दिन डूब्या से पहले जाकर, गाड़ी का गोना बिछाकर, जोगो रोकते थे। और जिस दिन हनुमानजी समुद्र पार कर लंका जाते थे, उस दिन की रामलीला देखने, तो हमारे गाँव से मुक्ती बायको (बहुत-सी महिलाएँ) भी आती थीं। आपके गाँव के हनुमान जैसा पाट तो किसी भी गाँव के हनुमान नहीं करते थे। ऐसा लगता था जैसे सच्ची के हनुमान होय।'

'सच्ची के हनुमान होय' जैसे उसके शब्दों में जो आनन्द, जो उत्साह और जो श्रृद्धा थी, मुझे लगा, मैं पहुँच गई मेरे अपने गाँव के रामलीला मैदान में। नदी के किनारे, एक बड़ा-सा मैदान था, वहीं रामलीला होती थी। नदी के उस पार एक बड़ा-सा पीपल का पेड़ और इस पार हनुमानजी का मंदिर था। जिस पर मज़बूत रस्सों का एक सिरा उस पीपल के पेड़ में बाँध देते थे और दूसरा सिरा इस पार हनुमानजी के मंदिर में बाँध दिया जाता था। इन रस्सों पर से हनुमानजी लटक कर इस पार आते थे। अंधेरे में वे रस्से बिल्कुल नहीं दिखाई देते थे। दूर से हमुमानजी की लम्बी-सी ऊँची पूँछ दिखाई देती थी। इस दृश्य को देखकर लोग खूब तालियाँ बजा-बजा कर जयकारे लगाते थे- 'वीर हनुमान की जै'। रात के अंधेरे में वे ऐसे दिखाई देते थे, जैसे उड़कर आ रहे हों। सच में, हमारे गाँव की वह रामलीला और वे हनुमान। हमुमान याद आते हैं माँगीलाल भाई जटाळ्या।

माँगीलाल भाई जटाळ्या को याद करूँ, या राजा दशरथ बनने वाले धनसिंग दाजी को याद करूँ या.....। कितने सरल थे मेरे गाँव के वे रामलीला के पात्र, एक-एक कर सब मेरी आँखों में तैरने लगे। दिन भर लोहे की टूटी-फूटी तराजू से गुड़-नोन तोलने वाले श्रीकिशन सेठ जब रामलीला के पर्दे खुलते ही सफ़ेद झक्क धोती कुरता में खड़े हैं। प्रणाम करते नज़र आते थे, तो वे स्वर्ग से उतरी सरस्वती जी से संवाद करने वाले सूत्रधार ही नज़र आते थे। श्वेत माला धारण की हुई, श्वेत मुकुट पहनी, श्वेत पुष्पों के कंगन धारण करने वाली श्वेत वसना सरस्वतीजी को कोई कभी सुबह सबेरे देखे तो वे 'बाबू काका' किसी की गाय दुहते हुए या किसी काकी भाभी की मदद करते उनका दही बिलोते नज़र आते थे। क्या पात्र, क्या चरित्र, जो रात में निर्मल वसना सरस्वती, वही दिन में निर्मल मना बाबू काका सबका सहयोग करते नज़र आते थे। गाँव में कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं था, कि जिसकी ज़रूरत पर बाबू काका खड़ा न हुआ हो। ऐसा लगता था जैसे सरस्वती उसमें वास कर गई हो।

सरस्वतीजी के साथ विघ्नहर्ता गणेश भी आते थे। सरस्वतीजी को प्रणाम करके सूत्रधार गणपतिजी को निमंत्रित करते थे। स्थूलकाय गजमस्तक गणेशजी बने हमारे राधेश्याम काकाजी नृत्य करते प्रगट होते थे। सूत्रधार प्रार्थना करते थे, हे गणपति महाराज हमारी रामलीला को निर्विघ्न सम्पन्न

करो। राधेश्याम काकाजी बड़े जतन से सन की रस्सी से सूँड बनाते थे। कई दिन पहले ही वे नदी में सनकाठी डाल देते थे, काठी के नरम होने पर रेशे निकालकर रस्सी बनाते थे, फिर रस्सी गूँथ कर सूंड तैयार करते थे। शारीरिक बनावट के कारण वे लम्बोदर का किरदार बखूबी निभाते थे। वे पास के गाँव में पटवारी थे, दिनभर कितने ही व्यस्त क्यों न रहते हों, नौ दिन की रामलीला में प्रारंभ पाट करने के लिए सारे काम निपटाकर वे पूरी तैयारी के साथ मैदान में आ जाते थे।

रामलीला में रात को अपनी तीनों रानियों के साथ राजसी ठाट-बाट में बैठे राजा दशरथ। उनपर पंखा झलते सेवक। सम्मुख हाथ जोड़े खड़े मंत्री सुमन्त। मोहक वेशभूषा, वही तेवर राजा दशरथ के। यज्ञ के लिये ऋषि वशिष्ठजी के चरणों में वंदना करते राजा, विनय एवं गुरु भक्ति का समागम, चेहरे पर रघुकुल शिरोमणि की कान्ति, तेज, अपने पात्र को जीते धनसिंग दाजी सुबह दिन उगे, मुँह झाकळे ही तूअर की काठी से अपनी गोठान, अपने आवार और अपनी गली के कोने तक सफाई कर आते थे। अपनी धोती को घुटने से ऊपर चढ़ाकर, आँगन में पानी भी सींच देते थे। सूर्योदय से पूर्व ही नदी में डुबकी लगाते, मंदिर जाते और घर आकर कभी लड़कों के काम काज में हाथ बँटा लिया, नहीं तो घर के लेकरू नाने, मोठे बच्चों में से किसी को कमर पर, किसी की उँगली पकड़ कर वे ले जाते गाँव के बड़े नीम के नीचे। रात को राजा दशरथ के रूप में सन्तान प्राप्ति के लिए चिन्तित भाव वाला पात्र, यही व्यक्ति है क्या! इसकी कोई कल्पना भी नहीं कर सकता था। क्या भावपूर्ण अभिनय होता था!

रामलीला में प्रकाश-व्यवस्था कैसी होगी, बिजली तो उन दिनों थी ही नहीं। सुखदेव सेठ की मिठाई की दुकान थी। पाँच गाँव हाट-बाज़ार में जाते थे। उनके पास गैस बत्ती (पैट्रोमेक्स) थी। वे बिना किसी के कहे अपनी गैस बत्ती जलाकर जीवन पटेल काका के पास रख देते थे। और पटेल दाजी का पेटी बाजा व गायन शुरु हो जाता-

'येऽऽऽऽ हाऽऽऽ रामचंद्र के वचन सुनाए....।'

जीवन पटेल रामलीला के पूरे स्तम्भ आधार थे। उन्हें पूरी श्रीरामचरितमानस कंठस्थ थी। वे ही सस्वर रामचरितमानस का मंच पर पाठ करते थे। उनके स्वर में, वे सब भाव निहित होते थे, जिस भाव से तुलसीदासजी ने उन चौपाइयों की रचना की थी। बाल भाव में उनके चेहरे पर कोमल कांत छवि नज़र आती थी। विवाह के अवसर की घड़ियों में उनके मुख के भाव आनन्द से ओतप्रोत हो जाते थे। वन गमन और सीता हरण जैसे अवसरों पर उनका कंठ इतना करुण हो उठता था, कि वे स्वयं तो अपने अंगोछे से अपने आंसू पोंछते जाते थे और साथ ही दर्शक भी उनके साथ हिचकियाँ भर-भर के रो पड़ते थे। जैसे उनके कंठ में अभिनय ने जन्स ले लिया हो। जीवन पटेल काका सच में बहुत बड़े कलाकार थे। वे जनक का पाट भी किया करते थे। इस दौरान रामचरितमानस का पाठ काळू सा कुआ वाळा करते थे। वे जनक का अभिनय करते समय वास्तव में विदेह जैसे ही जान पड़ते थे। वैसे भी वे पटेल होते हुए भी बड़े विरागी थे। सफ़ेद धोती, आसमानी कुरता और कंधे पर गमछा, उनका यही वस्त्राभूषण था। जैसे उनकी सादगी जनक के अभिनय करने के लिए बनी हो। त्याग, धैर्य और लगन की वे एक मिसाल रहे। पूरी रामलीला का भार वे अपने स्वयं पर ही लेते थे। सच माने में तो उन दिनों पुरानी पीढ़ी के लोग कम ही साक्षर हुआ करते थे। ऐसी स्थिति में वे महिनों महिनों अभिनयकर्ताओं के साथ परिश्रम करते थे। पात्रों को उनके अपने अभिनय के समय संवाद रटवाना, अभिनय करवाना बहुत बड़ा और कठिन काम था, वो भी लगभग सभी को। नई उम्र के कुछ लोगों को छोड़कर सबके साथ जीवन काका को ज्यादा मेहनत करनी पड़ती थी। उनके घर के बैठक कक्ष, जिसको गाँव की भाषा में कचहरी कहते हैं, वहाँ एक महीने पहले से पात्र चयन और उन पात्रों से अपने संवाद रटवाना एवं पूर्ण अभिनय करवाना जीवन काका का ही काम था। पूरे आयोजन में वे सहयोग राशि की भी कभी चिन्ता नहीं करते थे, बल्कि अवसर पड़ने से अपनी कड़ (अंटी) का पैसा सहर्ष लगा देते थे।

सीता स्वयंवर के पश्चात् सीताजी की विदाई में विदेह जनक भी सदेह जैसे दु:खी हो पड़े थे, वैसा ही जीवन काका का अभिनय होता था, उनके साथ दर्शक भी फफक पड़ते थे और सीताजी भी रो पड़ती थीं। रामलीला के हर पात्र के संवाद जीवन काका को कंठस्थ थे। कोई पात्र बीच में भूल जाय, तो वे बड़ी कुशलता से चौपाई-पाठ करते करते उस पात्र के संवाद बोल देते थे।

कवि हृदय, शांत स्वाभाव के गंगाराम भाई जब परशुराम का पाट करते थे, तो लगता था, जैसा उनका अवतार क्रोध रूपी में ही हुआ हो। कैसे-कैसे पात्र थे, गाँव के वे लोग, क्या आर्थिक स्थिति थी उनकी, घर में आठ व्यक्ति भोजन करने वाले, कभी कम, कभी ज्यादा की आवश्यकता को पूरा करने वाले मेहनतकश संघर्षशील व्यक्ति ही रात में ऐसा आकर्षक अभिनय करते थे, मानों उन्होंने अपने निजी जीवन में भी ऐसे ही जीवन जीया है। क्या मज़ाल कि उनके जीवन के अभाव की एक भी रेखा अभिनय करते समय उनके चेहरे पर दिख जाय।

मधुर मुस्कान वाला, कानों में सोने की मुरकी पहने शांत धीरज मुरारी भाई, जो गाड़ी चलाते हुए धीरे चलने वाले अपने बैलों से भी ज़ोर से नहीं बोलता था, वही मुरारी भाई रात को जब दशमुख लगाकर रावण का पाट करते थे, तो ऐसे गरजते-कड़कते थे, तो ऐसे लगता था क्या सही में रावण भी ऐसा ही रहा होगा? ऐसे कई बार तो रावण भी उनके आगे फीका पड़ता था। तब लगता था, उससे अच्छा तो मुरारी भाई ही लग रहा है। अभिनय की ये कला कहाँ से आई। मुरारी भाई के घर के पिछवाड़े और हमारे घर के पिछवाड़े के बीच एक ही दीवाल थी। घर में छोगीलाल दाजी के तीन बेटे, तीन बहुएँ और कितने ही बच्चे थे पर कभी मुरारी भाई को ज़ोर से बोलते हमने कभी नहीं सुना। वे कहते थे, 'मैं नहीं, दसमुखी मखौटा लगाते ही मेरे अन्दर रावण समा जाता है, वही सब बोलता है, मैं तो ऐसा बोल ही नहीं सकता था।' सचमुच में पात्र जीता है, चरित्र जीता है अभिनयकर्ता के शरीर में। यह आस्था, श्रद्धा और अध्यात्म का एकात्म भाव है। वे कहते थे, 'वहाँ मुरारी थोड़ी रहता है, वहाँ तो यह शरीर रावण बन जाता है।' फिर दुलीचंद भाई बनते थे मन्दोदरी, घूँघट करके अपने

पति रावण को समझाती थीं, 'हे तात्! सीता लौटा दीजिए, नहीं तो अपने परिवार का अशुभ हो जायेगा।' तब रावण इतने ज़ोर से लेकिन गंभीर आवाज़ में क्रोध से चिल्लाता था कि माताओं के पास बैठे बच्चे तक एकदम डर के कारण चित्कार पड़ते थे। वहीं रामलाल काका पीठ पर मटका बाँधकर मंथरा बनकर आते थे, तो लोग लोटपोट हो जाते थे।

रामलीला का मुख्यपात्र बनता था जीवन काका का बड़ा बेटा लखन। यद्यपि वह गोरा था; किन्तु अभिनय और संवाद स्मरण में वह उत्तम था। अत: उसके चेहरे को साँवला दिखाई देने के लिए चेहरे पर कुछ लगाना पड़ता था। जगदीश बनता था लक्ष्मण। शिवजी का धनुष टूटने के कारण परशुरामजी क्रोधित हुए थे। तब लक्ष्मण और परशुरामजी का संवाद सुनते ही बनता था, ऐसा लगता था, जैसे परशुरामजी और लक्ष्मणजी साक्षात् खड़े हों। सीताजी बनता था कोमल । वैसे तो वह साँवला था, इसलिए उसके चेहरे को गोरा करना पड़ता था। उसका शरीर कोमल था और आवाज़ भी बड़ी सुरीली थी और स्वाभाव से शालीन था। इसलिए कई सालों तक वह सीता बनता रहा। जब चारों भाइयों के विवाह हुए तो राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न बनते थे, क्रमश: लखन, जगदीश, भगवान और सखाराम। उर्मिला, माण्डवी और श्रुतकीर्ति तो उन बालकों को बना देते थे, जो थोड़ा बहुत चेहरे पर भाव ला सकें और अपने घर से ही साड़ी, माला, चूड़ियाँ- कंगन आदि श्रृंगार सामग्री ला सकें।

रामलीला में अनेक ऐसे प्रसंग होते थे, जब बड़ी संख्या में अभिनेताओं की आवश्यकता पड़ती थी। अभिनेताओं की बहुत भीड़ लगाने के समय भी बड़ी परीक्षा जैसे ही रहती थी जीवन काका की, जैसे राजा दशरथ के प्राणांत के प्रसंग में बहुत सी रानियाँ और सेविकाओं की आवश्यकता पड़ती थी। जीवन काका अभिनय करने वालों से कहते थे- 'भाई अपने-अपने घर से अपनी साड़ियाँ और वस्त्र लेकर आना।' अभिनय बस इतना ही करना होता था, कि दशरथजी के शरीर के पास बैठकर रोना है और रो-रो कर बोलना है 'हे स्वामी तुम्हारे बिना कैसे रहेंगे।' कीमती जेवर और महँगी साड़ियों की भी ज़रुरत नहीं रहती थी।

सीता स्वयंवर वाले प्रसंग के अवसर पर भी बहुत सारे राजाओं की ज़रुरत होती थी। तब पुष्टे के मुकुट तैयार कर लिए जाते थे। पुष्टे के मुकुट पर लाल, पीली, नीली, सफेद पत्तियाँ चिपका देते थे।

मुकुट, धोती-कुरता, माला आदि पहनाकर लोगों को राजा बना देते थे. राम-भरत मिलाप के समय भी सब अपने-अपने घर से कपड़े, माला आदि पहनकर शामिल हो जाते थे। ऋषि- मुनियों के लिए सन के रेशे और कपास से सफेद बाल बना लेते थे। ऊपर तो उघाड़ा ही रहना होता था। नीचे धोती बाँध ली जाती थी। वो समय ऐसा था, जब साधनों की बड़ी कमी रहती थी; किन्तु जो भी उपलब्ध होता था, उससे ही सार्थक कार्य सम्पन्न हो जाते थे। न तो श्रृंगार के लिए बहुत रंग-रोगन , आभूषण और न पहनने के लिए बहुत वस्त्र, मात्र अभिनय के माध्यम से ही पात्रों में प्राण फूँक दिये जाते थे। भीम सिंग भाई बनते थे विभीषण, उनके स्वयं के पास एक असली सोने की कंठी थी। वे गन्ने की बाड़ी लगाते थे, अत: नगदी पैसा बहुत था उनके पास।

एक बार फिर भीड़ जुटाना रहता था वानरों की। बालक मुँह पर गेरू पोतकर बन्दर बन जाते थे। कुछ बच्चे पुष्टे का मुखौटा बना लेते थे। इस प्रसंग में बड़ा आनन्द आता था। पूरे मंच में रस्सियों से तरबूज, खरबूजों की फाँकें लटका दी जाती थीं। आम भी लटका देते थे। गरमी के मौसम के यही फल थे गाँव में। वैशाख में रामलीला होती थी तबतक सब खेती-बाड़ी के कामकाज से निपट जाते थे। अशोक वाटिका उजाड़ने के दृश्य में पच्चीसों बालक बन्दर बनकर हुप्प-हुप्प करके, उछल-उछलकर फल मुँह से तोड़कर खाते थे। फिर रावण की अशोक वाटिका के प्रहरी आते थे, वे उनसे युद्ध भी करते थे। जराक में मरकर नीचे लेट जाते थे और घड़ी दो घड़ी बाद उठकर दर्शकों में जाकर बैठ जाते थे। ऐसे राम-रावण युद्ध के समय भी भीड़ बना ली जाती थी; वातावरण जीवन्त हो उठता था।

रामलीला के कुछ प्रमुख प्रसंग होते थे जिनकी बड़ी प्रसिद्धि थी। इन प्रसंगों के अवसर पर आसपास के गाँवों के लोग गाड़ी बैल से आते थे। ऐसे प्रसंगों में एक तो धनुष भंग एवं रामसीता विवाह, दूसरा हनुमानजी द्वारा समुद्र लाँघकर लंका पहुँचना। बैठक व्यवस्था तो सब दर्शकों की अपनी-अपनी होती थी। उस समय न बिजली डंडा का चलन था, न ही ज्यादा प्रकाश का साधन। कई लोग अपने-अपने घरों से कंदील लेकर आते थे। वे भी मद्दा (धीमा) करके रख देते थे ताकि दूसरों की आँखों में चुभे नहीं। लोग भर दोपहर में ही अपना बोरा बिछा जाते थे और उसपर पत्थर रख जाते थे। रही बात हमारी , तो हम तो विशेष अतिथियों में रहते थे, आगे हम लोगों के लिए बिछायत रहती थी; किन्तु हम बच्चों को वह आगे का स्थान व वह बैठक कभी भी अच्छी नहीं लगी, क्योंकि उतना अनुशासन रामलीला देखने के लिए कहाँ से लायें। फिर हमारी जहाँ इच्छा होती वहाँ बैठ जाते थे। हमें अपने पास बैठाने में सब को गर्व महसूस होता था। गाँव के जमीनदार की बेटियाँ जो रहे हम।

रामलीला में लोक पूरी तरह रम जाता था। वो केवल ध्यान से देखता और सुनता ही नहीं था बल्कि प्रसंगों के साथ, गुरु महाराज की जय, राजा दशरथ की जय, तीनों माताओं की जय, चारों भैय्यन की जय, सियावर रामचन्द्र की जय, बजरंग बली की जय के जैसे जयकारों से आकाश गुंजायमान हो जाता था। इतना ही नहीं कुछ प्रसंगों पर लोकगीत भी गाए जाते थे। भक्तों का समूह अपने स्थान पर बैठे-बैठे ही गीत गाता था। वन गमन के प्रसंग के समय हम बच्चे तो जीवन पटेल के पास बैठ जाते थे। फिर एक साथ गाते थे-

**राम चल्याऽ वन खऽ माताऽऽ**
**हम भी चली जावाँगाऽ**
**बेटा तू खऽ तीसऽ लगऽगऽ**
**पाणी काँ पावँऽगाऽ**
**लई जावाँगा झारीऽ कळश्याऽ**
**पीताऽ चली जावँगाऽ**
**बेटा तूखऽ भूख लगऽगाऽ**
**भोजनऽ काँ पावँऽगा**
**तोड़ी लेवाँगा वनऽ फळ लग्याऽ**

**खाता चली जावाँगाऽ**
**बेटा तूखऽ नींद आवऽगा**
**सोवणू काँ करऽगाऽ**
**बिछई लेवाँगा सूखा पान्टाऽ**
**भूमिऽ मऽ सूताऽ जावाँगाऽ**
**व्हाँजऽ हमखऽ रामऽ मिलगऽ**
**बाणऽ छोड़ता जावाँगाऽ**
**राक्कसऽ मारताऽ जावाँगाऽ**
**रामऽ खऽ नी छोड़ाँगाऽ...**

भावार्थ: हे माता, रामचन्द्र वन को जा रहे हैं, हम भी उनके साथ चले जायँगे। माता के साथ बच्चों के प्रश्नोत्तर संवाद का गीत है। माता पूछती हैं, हे बेटा तुम्हें प्यास लगेगी तो पानी कैसे पीयोगे? तुमको भूख लगेगी तो भोजन क्या करोगे? नींद आयगी तो कहाँ सोवोगे? माता के प्रश्न को उत्तर में बच्चे कहते हैं, हे माता, हम कलश और झारी (पानी रखने का टोंटी वाला ताँबे या पीतल का लोटा) ले जायँगे। इन्हीं में पानी भरकर कर पीते रहेंगे। वन में जो भी वन-फ़ल लगें होंगे उन्हें तोड़कर खाते रहेंगे। सूखी घास और पत्तों का बिछौना बनाकर भूमि पर ही सो जायँगे। वन में ही रामचन्द्रजी के साथ बाण चलाकर राक्षसों को मार डालेंगे लेकिन रामजी को अकेला नहीं छोड़ेंगे। उन तीनों के साथ ही वन चले जायँगे।

राम के प्रति अगाध श्रद्धा दर्शाते हुए बच्चों के बहुत से गीत हैं। बच्चे अपनी माता को मनाने के बाद रामचन्द्रजी को भी मनाते हैं कि वे बच्चों के साथ में ले चलें। एक ऐसा ही गीत है-

**दुखी मतऽ हुजोऽ रे परभु रामऽ**
**वन मऽ संगात हमऽ भी रह्वाँगाऽ**
**जदऽ सीता मैया राँधणी करऽ गाऽ**
**लकड़ी कण्डा नऽ पाणीऽ हमजऽ भराँगाऽ**
**जदऽ सीता मैया थाळ परोसगाऽ**
**थाळऽ परोसऽ नऽ राम लखनऽ जीमऽ**
**जीमता वीरा नऽ खऽ हमऽ भी देखाँगा**
**मुदित मनऽ हमऽ भी रमाँगा**
**वन मऽ संगातऽ हमऽ भी चलाँगाऽ**

भावार्थ: स्वयं भगवान् राम से प्रार्थना बच्चे करते हैं, हे राम दुखी मत होइए। हे प्रभु हम भी तुम्हारे साथ वन में चलेंगे। जब सीता मैया भोजन बनायँगी, तो हम चूल्हा जलाने के लिए लकड़ी और कण्डा लाकर देंगे। पानी भी हम ही भर कर लायँगे। जब सीता मैया भोजन बनाकर थाल परोसेगी, और आप दोनों भाई राम-लखन भोजन करेंगे, तो आपको देखकर हम आनन्दित होंगे। हम आपके संगात वन में चलेंगे अकेले नहीं जाने देंगे।

लोक रामलीला के माध्यम से राम के जीवन और उनके परिवार का अंग बन जाता है। यह लोक परम्पराओं-संस्कारों का ही प्रभाव है कि बच्चे भी प्रभु राम के साथ वन जाने के लिए अपनी माता से अनुमति माँगते हैं। प्रभु राम को भी बताते हैं कि वे किस तरह घने जल में माता सीता की सहायता कर सकते हैं। उनका मन करता है कि उन्हें अकेले वन में नहीं जाने दें और उनको भोजन करते हुए देखकर आनन्द लूटें।

लंका में हो रहे युद्ध की बीच जब लक्ष्मणजी को शक्ति लगी तो बड़ा ही भावपूर्ण दृश्य उपस्थित हो जाता था। भीलावार की महिलाएँ बड़े की करुण स्वर में गीत गाती थीं। यह गीत प्रभु राम की मन:स्थिति को दर्शा देता है। उनकी सारी जिम्मेदारियों को प्रकट कर देता है। महिलाएँ गाती थीं:

**तुखऽ कुणनऽ मारयो बाणऽ**
**बतई दऽ रे लछमणऽ वीराऽ**
**ओको करुँ धरती सी नासऽ**
**बतई दऽ रे लछमणऽ वीराऽ**
**हाऊँ अजुध्या कसो जाऊँगाऽ**
**थारा बिनऽ कसो हाऊँ रहूँगोऽ**
**माता खऽ काई कऊँगा वातऽ**
**बतई दऽ रे लछमणऽ भाईऽ**
**हाऊँ मह्यल मऽ कसो जाऊँगाऽ**
**माता खऽ काई समझाऊँगाऽ**
**उर्मिला खऽ काई दई समझाऊँगाऽ**
**रड़गऽ सुनैना मातऽ**
**बदई दऽ रे लछमण वीराऽ**
**एकऽ वारी उचाड़ी दऽ... वाचऽ... लछमण वीराऽ**
**बतई दऽ से लछमणऽ वीराऽ...**

भावार्थ: महिलाएँ गातीं हैं, हे मेरे अनुज लक्ष्मण, तुझे किसने बाण मारा है? तू मुझे बता दे, मैं उसका धरती से नाश कर दूँगा। हे भाई, तेरे बिना मैं अयोध्या कैसे जा सकता हूँ? और तेरे बिना मेरा जीवन कटेगा भी कैसे? मैं माता को क्या उत्तर देकर समझाऊँगा? ऊर्मिला के सामने कैसे खड़ा हो सकूँगा। उसे उसकी माता सुनैना (सुनयना) भी तो पूछेगी, कि उसकी बेटी का पति कहाँ है? क्या उत्तर दूँगा मैं? हे भाई, तू एक बार तो आँख खोल और कुछ शब्द तो बोल, तुझे किसने बाण मारा है?

जीवन पटेल के श्रीरामचरितमानस के स्वर जब थमते थे, तो उपस्थित भक्तगणों में से प्रसंगों के अनुरूप लोकगीतों के स्वर गूँज उठते थे। बच्चे अपने भावों में गाते थे, महिलाएँ करुण गीत गाती थीं। रामलीला में सभी रम जाते थे तल्लीनता के साथ।

मैं रामलीला में रम गई, इतनी ही देर में गार्ड मेरे पास आकर बोला, 'जीजी, अब नहीं होती है क्या रामलीला गाँव में, और वो हनुमानजी बनते थे, उनका क्या नाम था?' बहुत देर तक मैडमजी कहने वाला गार्ड एकदम से 'जीजी' बोला। मैं विस्मय में भर गई। हनुमानजी की बात से मेरा मन उदास हो गया, किन्तु मैंने उसकी बात का उत्तर दिया, 'हाँ कालमुखी में अब भी रामलीला होती है, एक नहीं दो-दो होती हैं अब तो। हाँ हनुमानजी बनने वाले भाई का नाम मुझे अच्छे से याद है। हनुमान बनते थे माँगीलाल भाई, जिन्हें लोग माँगीलाल जटाळया कहते थे।'

हमने कभी उनका अकेला सीधा नाम नहीं लिया। हमारी बड़ी ताईजी ने उन्हें राखी-भाई बनाया था। इसलिए पूरे परिवार के बच्चे उन्हें मामा ही कहते थे । माँगीलाल मामा सिर्फ़ हनुमान ही नहीं बनते थे, बल्कि उनके पास ईश्वर की दी हुई एक कला और थी, वे माटी से सुन्दर-सुन्दर मूर्तियाँ बनाते थे। श्री कृष्ण जन्म अष्टमी के अवसर पर वे हर साल नई-नई झाँकियाँ बनाते थे। वे पन्द्रह-बीस दिन पहले से ही इस कार्य में जुट जाते थे। गाँव के ठाकुरजी के मंन्दिर में वे आँगन के एक भाग में परदा लगाकर मूर्तियाँ बनाते थे। मूर्ति निर्माणकाल में सिर्फ़ उनके विश्वासपात्र सहयोगी ही उनके साथ रहते थे। कृष्ण जन्मोत्सव के अवसर पर परदा हटाकर सबके दर्शनार्थ झाँकी खोल देते थे। घास मिट्टी से बनी इतनी सुन्दर प्रतिमा, अद्भुत था सब कुछ। उस समय न तो रंग रोगन मिलते थे, न पेंट पॉलिश, बस प्राकृतिक फूल पत्तियों से ही वे रंग तैयार करते थे। वसुदेवजी जब कृष्णजी को एक टोकनी में सिरपर रखकर यमुना पार ले जा रहे थे, तब उन पर शेषनाग ने अपने फण फैलाकर बालकृष्ण की वृष्टिजल से रक्षा की थी। वहीं यमुनाजी कृष्ण के चरण प्रक्षालन करना चाहती थीं। इस झाँकी को अपनी करामती उँगलियों और चेतना शक्ति से ऐसे सजीव बनाते थे कि दर्शनार्थी देखते ही रह जाते। जबतक कला में डूबकर कलाकृति का निर्माण नहीं होता, तबकर उस कलाकृति में प्राण शून्य रहते हैं। किन्तु माँगीलाल मामा तो अद्भुत चितेरे थे। हर कला उनके अंग-अंग में रच बस गई थी।

रामलीला में हनुमान का अभिनय करने वाले माँगीलाल मामा अपने जीवन में हनुमान मय हो गए थे, रामभक्ति में लिप्त हो गए थे। वे सांसारिक व्यवहार से धीरे-धीरे निर्लिप्त होने लगे थे। पहले तो घर गृहस्थी, खेती बाड़ी का काम करते थे और बाकी समय मंदिर में ठाकुरजी के कार्यों में सहयोग करते थे। धीरे-धीरे उनकी यह स्थिति हो गई कि वे अधिक से अधिक समय मंदिर में ही गुजारते थे। सच तो यह है कि वे मंदिर में पूरे समय रहने लगे थे। खाने-पीने तक की चिन्ता भी नहीं करते थे।

एक बार मंदिर के पुजारी कुछ समय के लिए तीर्थ यात्रा पर गये, तब उन्होंने पूजा-पाठ, पान-प्रसाद का सब काम माँगीलाल मामा पर छोड़ दिया था। शायद, भगवान् ठाकुरजी की यही इच्छा या कृपा थी। वे पूरे समय मंदिर में रहते थे। हनुमानजी की सेवा में इतने लीन हो जाते थे कि उन्हें स्वयं अपनी फिकर भी नहीं रहती थी। उन्होंने हीरापुर के रामदासजी महाराज से कंठी ले ली। संसार के रिश्ते छोड़कर उन्होंने सन्यास ले लिया था। सिर्फ़ 'जै सियाराम' का जाप करते थे। मिलने-जुलने वाले से भी सिर्फ़ जै सियाराम के बाद कुछ नहीं बोलते थे। मैं गाँव गई। अपने बाबूजी (पिताजी) और छोटी बेटी के साथ उनसे मिलने मंदिर गई थी। बड़ी खुशी से उन्होंने कहा, 'छोटे मालिक, भला हुआ आये, मेरी भानजी को लाये...।' वे मेरे पिताजी को छोटा मालिक ही कहते थे, वेसे पूरा गाँव ही यही संबोधन करता रहा। उन्होने मेरे पैर छुए और मेरी बेटी के भी पैर छुए। मैंने उनसे कहा, 'आप तो ठाकुरजी के प्रथम पुजारी हो, सन्यासी हो, फिर हमारे चरण क्यों छुए। यह तो संसार के रिश्ते हैं।' तो उन्होंने कहा, 'संसार के रिश्ते ही इतनी ऊँचाई तक ले जाते हैं। भगवान् ने भी संसार रचकर ही लीलाएँ कीं।' फिर उन्होंने अपने हाथ से शीशी में से मिश्री निकाल कर मुझे, मेरे बाबूजी और बेटी को दी।

हमने भगवान् के दर्शन किए और तत्पश्चात् जाने को हुए उनसे बिदा ली, तो उन्होंने कहा, 'हनुमान स्वामी रक्षा करेंगे। गाँव आया करो। अपने पीयर आया करो, और ठाकुरजी के दर्शन भी किया करो।' कोई किसान दिनभर खेतबाड़ी में काम करे और संध्या को सिर पर घास का पूला (पिण्डी) रखकर लाय। पहले वह गोठान में जाकर सब पशुओं के आगे चारा डाले, फिर परेंडा (पनिहारा) में जाकर मुँह-हाथ धोकर भोजन कर मंदिर चला जाय, न किसी के साथ उठना, न बैठना, न बीड़ी, न तम्बाकू, न चिलम, बस एक ही नशा वीर विक्रम बजरंगी की सेवा का, दर्शन का और यही कारण रहा कि रामलीला में जब वे हनुमान का पाट करते थे, तो लगता था जैसे हनुमानजी उपस्थित हैं। अभिनय करते करते स्वयं वे उसी रुप रंग में समा गये। उन्होंने अपनी उम्र के तीस-पैंतीस साल तक हनुमानजी का पाट रामलीला में किया। फिर स्वयं ने ही हनुमानजी का पाट करना छोड़ दिया, कहते थे, किसका करूँ, किस लिए करूँ। वह तो मुझमें ही समा गया। अभिनय करते-करते वे हनुमानजी में ही रुपान्तरित हो गये थे। यही मेरे गाँव कालमुखी की रामलीला की महिमा थी। सोचते सोचते मैं घर आ गई। गार्ड ने मेरी चेतना को जगा दिया। सत्य ही यह प्रभु राम की कृपा ही है कि रामलीला के पात्र भी साल भर लोक को सद्मार्ग पर चलने और सद्व्यवहार करने की प्रेरणा देते रहते हैं।

लोक के राम एक महान वंश में जन्मे महाप्रतापी राजा नहीं थे, ना ही वे ऐसे भगवान् विष्णु के ऐसे अवतार थे जिनको प्रसन्न करने के लिए कठोर तप और अनुष्ठान किए जायँ। लोक के राम तो लोक में से ही एक हैं, जो उसके हृदय से निकली एक पुकार पर सदैव उपस्थित रहते हैं। लोक के राम में केवल प्रभु राम ही शामिल नहीं हैं अपितु जब भी लोक राम नाम का सुमिरन करता है, तो उसे माता सीता और बजरंगबली सहित पूरा का पूरा राम दरबार उपस्थित दीखता है। एक ऐसा राम दरबार जिसमें सभी शक्तियों के साथ त्रिदेव उपस्थित होते हैं। लोक ने अपने श्वास-प्रश्वास में बसा लिया है राम को। लोक के लिए कण-कण में राम है। लोक के लिए हर हृदय में राम का वास है। लोक की भावनाएँ एकात्म हैं राम से। लोक की इसी अगाध आस्था और श्रद्धा से ही प्रकट होती है रामलीला। अनगिनत सालों से चली आ रही रामलीला की परम्परा को लोक के रोम-रोम में बस गई है।

लेखिका - वरिष्ठ लोक संस्कृतिविद् है।
13, समर्थ परिसर, ई-8 एक्स्टेन्शन, बावड़िया कला,
पोस्ट ऑफ़िस त्रिलंगा, भोपाल - 462039
मो.: 09424440377, 09819549984

■

आलेख

# भारतीय संस्कृति के प्रतीक राम

डॉ. मोहन गुप्त

राम!!

है दुनिया के विश्वकोष में दूसरा कोई शब्द जो इतनी विश्रांति, इतना सुकून और इतनी निर्भयता देता हो। एक ऐसा तत्व, एक ऐसा व्यक्तित्व जो न केवल वर्तमान भारत अपितु प्राचीनकाल के बृहत्तर भारत की सारस्वत चेतना और लोकचेतना में समान रूप से गहरे तक समाया हुआ है मनीषी कहते हैं कि राम वह है जिसमें योगी रमण करते हैं, लेकिन लोक कहता है कि राम वह जो उसमें रमण करता हें जन्म अवसान, हर्ष विषाद, आनन्द, उत्सव, विरह, मिलन सभी अवसरों पर वह राम का स्मरण करता है। कौन है यह राम ?

ऐसा ही प्रश्न भगवती पार्वती ने महादेव जी से किया था और यह जानना चाहा था कि क्या राम वही हैं, जो अवध नरेश के पुत्र हैं या कोई और हैं जो निर्गुण है और जिनकी गति को नहीं जाना जा सकता है। इस पर देवाधिदेव महादेव ने बड़े स्पष्ट शब्दों में कहा था –

**सब-कर परम प्रकासक जोई। राम अनादि अवधपति सोई।**
**जगत प्रकास्य, प्रकासक रामू। मायाधीस ज्ञान-गुन-धामू।**
**जेहि इमि गावहिं वेद बुध, जाहि धरहिं मुनि ध्यान।**
**सोई दसरथ-सुत भगत-हित, कोसल-पति भगवान।।**

(बाल काण्ड, दोहा-118)

इससे यह तो स्पष्ट है कि जो राम समाज के तीनों स्तरों की चेतना में व्याप्त है, नागर चेतना, जनपदीय चेतना और जनजातीय चेतना, वह राम कोई और नहीं अपितु अवध नरेश दशरथ के पुत्र राम ही हैं और ये ही राम निर्गुण, ब्रह्म, सकल लोक नायक भी हैं। प्रश्न यह है कि केवल साहित्य का एक गुणवान नायक होने से जगत् में इतनी व्यापक व्याप्ति किसी की नहीं होती। इस नायक में कुछ ऐसे गुण होना चाहिये जिससे समाज अपना तादात्म्य महसूस करे। राम के साथ कुछ ऐसा ही है। भारत या बृहत्तर भारत ही नहीं, लगभग समूचे विश्व की मानव चेतना में किसी न किसी स्तर पर किसी न किसी कालखण्ड में राम व्याप्त रहा है और है। तो फिर ये क्या गुण हैं जो राम को विश्व की जीवित चेतना के कण-कण से जोड़ते हैं।

वाल्मीकि रामायण में महर्षि वाल्मिक ने देवर्षि नारद से प्रश्न किया था –

**कोन्वस्मिन् साम्प्रतं लोके गुणवान् कश्च वीर्यवान्।**
**धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च सत्यवाक्यो दृढ़व्रतः।।**
**चारित्रेण च को युक्तः सर्वभूतेषु को हितः।**
**विद्वान् कः कः समर्थश्च कश्चैकप्रियदर्शनः।।**
**आत्मवान् को जितक्रोधो द्युतिमान् कोऽनसूयकः।**
**कस्य विभ्यति देवाश्च जातरोषस्य संयुगे।।**

''इस समय कौन ऐसा महानायक है जो गुणवान है, वीर्यवान है, धर्मज्ञ है, कृतज्ञ है, हमेशा सत्य बोलता है, दृढ़व्रत है, चरित्रवान है, सब प्राणियों का जो हित चाहता है, कौन विद्वान् है तथा सर्वथा समर्थ है, प्रियदर्शन है, जितेन्द्रिय है, शोभन है, किसी के प्रति असूया नहीं रखता तथा युद्ध में जिसके क्रुद्ध होने पर देवता भी कांप जाते हैं।''

**और इसके उत्तर में देवर्षि नारद ने कहा था**

**इक्ष्वाकुवंशप्रभवो रामो नाम जनैः श्रुतः**
**नियतात्मा महावीर्यो श्रुतिमान् धृतिमान् वशी।।**
**रक्षिता स्वस्य धर्मस्य स्वजनस्य च रक्षिता।**
**वेदवेदाङ्गतत्वज्ञो धनुर्वेदे च निष्ठितः।।**
**सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञः स्मृतिमान् प्रतिभानवान्।**
**सर्वलोकप्रियः साधुरदीनात्मा विचक्षणः।**
**स चसर्वगुणोपेतः कौसल्यानन्दवर्धनः।**
**समुद्र इव गाम्भीर्ये धैर्येण हिमवानिव।।**

(वा. रा., बालकाण्ड प्रथम सर्ग, श्लोक 8, 14, 15, 17 )

''इक्ष्वाकु वंश में उत्पन्न राम नाम के विश्व विश्रुत महानायक है, जो महाबली सर्वशास्त्रज्ञ, धैर्यवान, बुद्धिमान, नीतिमान, वागमी तथा शत्रुओं का विनाश करने वाले हैं, सर्वथा सुन्दर शरीर, धर्मज्ञ, सत्यसंध, हमेशा प्रजा के हित में रहने वाले हैं, वेद-वेदांगों के तत्व को जानते हैं, धर्नुवेद में प्रवीण हैं, सभी शास्त्रों के ज्ञाता हैं, प्रतिभा सम्पन्न हैं, गाम्भीर्य में समुद्र के समान हैं

और धैर्य में हिमालय के समान हैं।'' संक्षेप में, राम एक विग्रहवान् धर्म हैं।

रामायण की कथा प्राय: सर्वविदित है। किस प्रकार राम ने विमाता की इच्छा का पालन करते हुए लोक के व्यापक हित में अपने सम्पूर्ण राज्य को त्याग कर पत्नी और भाई सहित वन का आश्रय लिया। गोस्वामी तुलसीदासजी ने लिखा है कि वन जाते समय इतने महनीय राज्य का त्याग करते हुए परिवार और स्वजनों का त्याग करते हुए न उन्हें कोई विषाद हुआ और न किसी प्रकार का हर्ष हुआ। बल्कि अपनी मां से तो वे कहते हैं कि मां वन में तो आनन्द ही आनन्द है और सन्तों तथा मुनियों से मिलन होगा, प्रकृति के उन्मुक्त वातावरण में विचरण करने का मौका मिलेगा। श्री राम का यह त्याग असामान्य था। इसी प्रकार वन में रहते हुए उन्होंने सदा अपनी धर्मपत्नी और भाई का ध्यान रखा। एक पल को भी अपने भाई भरत के प्रति किसी प्रकार का दुर्भाव नहीं हुआ। मुनियों से तो वे मिले ही, लगभग समूचे मध्यभारत की जनजातियों को अपने परिवारजनों की तरह अपनाया। जनजातियों में राम की व्याप्ति का यही मुख्य कारण है। जनजातियों में देवता के रूप में या तो शिव हैं या राम हैं और राम का सम्पूर्ण परिवार। उन्होंने सुग्रीव व बाली के प्रसंग में पीड़ित सुग्रीव का साथ दिया, बलशाली बाली का नहीं। रावण से वैर होने पर भी उनकी यही अभिलाषा रही कि किसी प्रकार हमारा कार्य हो जाये और उसका हित हो जाये। जो व्यक्ति शत्रु का भी हित सोचे, वही राम है। यही तप और त्याग हमारी संस्कृति का प्राण तत्व है। मनुष्य ही नहीं प्राणिमात्र को आत्मसात् कर लेना, यह हमारी संस्कृति का मुख्य स्वर है। संस्कृति शब्द मूलत: भारतीय चिन्तन की उपज नहीं है। यह धर्म का ही एक स्वरूप है और अंग्रेजी शब्द 'कल्चर' के अनुवाद के रूप में इसका प्रयोग हुआ। आचार्य विद्यानिवास मिश्र ने लिखा है कि 'संस्कृति जीवन का सहज छन्द है। हम कैसे दूसरे के साथ समंजस होते हैं, हम कैसे दूसरे के ध्यान से अपने ऊपर संयम करते हैं, कैसे विशाल परिवार की आत्मीयता को आचरण की भाषा देते हैं, यह सब संस्कृति है।' .. 'भारतीय संस्कृति जीवन को व्यापक फलक पर देखती है। इसीलिए उसमें सबको आत्मसात् करने की अद्भुत क्षमता है। इस तथ्य को मिश्र जी गंगा से तुलना करते हुए व्यक्त करते हैं – 'भारतीय संस्कृति सबको आत्मसात् कर जाती है, यह इसकी बहुत बड़ी विशेषता मानते हैं। कितनी जातियाँ यहां घुली-मिलीं, उनकी अलग पहचान नहीं रह गयी। गंगा की धारा में इतनी नदियां मिलीं, सभी गंगा हो गयीं।' भारत में 'संस्कृति' शब्द का प्रचलन बहुत पुराना नहीं हें प्राचीन शब्द 'धर्म' है जो संस्कृति के भाव की भी अभिव्यक्ति करता है। उन्होंने भारतीय संस्कृति को अमृत की संज्ञा दी है और कहा है कि त्याग पूर्वक परार्थ भाव से जीना अमृत है और अहंकार पूर्वक केवल अपने लिये जीना विष है। तप हमारी संस्कृति का प्राणतत्व है जिससे व्यक्ति द्रवित होता है और द्रवित हुए बिना हम अपने स्वरूप को नहीं जान सकते। यह राम ही हैं जो न केवल अपने राज्य के नगरवासियों को, वनवासियों को या पशु-पक्षियों को द्रवित करते हैं लेकिन भवभूति तो कहते हैं भगवान का विषाद् देखकर –

**अपि ग्रावा रोदिति अपि दलति वज्रस्य हृदयम्।**

सीता के विरह में श्रीराम के विषाद को देखकर पत्थर भी द्रवित हो जाते हैं। संस्कृति के छोटे-से-छोटे पक्ष को राम ने अपने आचरण में लिया –

**प्रात:काल उठके रघुनाथा, मात-पिता गुरु नावहिं माथा।**
**या गुरुते पहले जगत्पति जागे राम सुजान।**
**या समय जानहि गुरु आयसु पाई लेन प्रसून चले दोऊ भाई।**

सामाजिक व्यवहार का कैसा भी प्रसंग हो, राम ने हमेशा धर्मानुकूल आचरण किया है। भारत में यह धर्म ही समस्त जीवन का संचालक और नियामक है। यही जीवन का प्राणतत्व और मनुष्य के भीतर रहने वाला समग्र भाव है। मनुष्य, मनुष्य का, मनुष्य और प्रकृति का एक-दूसरे से इस भाव से समृद्ध होना, हम एक-दूसरे के आश्रित है, यही समान भाव है, समता है, सामंजस्य है। भेद को पूरक रूप में ग्रहण करना मनुष्य का स्वभाव है। संस्कृति का संबंध जीवन से है और जीवन को संतुलित कर माधुर्यपूर्ण बना कर मर्यादित कर देना है। राम का समग्र आचरण इसी भाव का उदाहरण है और यही कारण है कि लोक के सभी स्तरों की चेतना में राम गहरे तक व्याप्त हैं। लोक के शोक और हर्ष के समय उन्हें राम का ही स्मरण होता है। लोकगीत इसके सहज उदाहरण हैं –

**राम के भीजें मुकुटवा लखन सिर पटुकवा हो राम**
**मोरी सीता के भीजें सेनुरवा, लवटि घर आवैं हो राम।।**
**भीजै त भीजै पटुकवा, मुकुटवा न भीजइ हो।**
**भीजै त भीजै मुकुटवा, सिंदुरवा न भीजइ हो।**
**आहे सेन्दुरवा के साथै सिया घर कवटइ हो।।**

अथवा गोंड रामायणी का यह उदाहरण देखिये –

**अब आये हवै रामचंदर भैया**
**जब देखे हैं सीता रे माता**
**निकरे हवै लोटा मा पानी धरके**
**धुवाए हवै रामचंदर के गोड़ रे भैया**
**लेजा के बेठारै हवै पलका मा रे भाई**
**विजना लेके पवन डुलाये रहे है सीता**

महर्षि वाल्मीकि ने तो राम को विग्रहवान् अर्थात् शरीरधारी धर्म ही बताया है और संस्कृति धर्म का ही एक अंग है। लोक के संघर्षमय जीवन में किसी भी प्रकार के प्रश्न उठें, कोई भी विषमता आये, राम का चरित्र देख लो, उसे उस प्रश्न का हल मिल जायेगा, जो हमेशा धर्मसम्मत् होगा। विश्व के साहित्य में किसी भी देश का ऐसा कोई महानायक नहीं, जिसका आचरण उस समग्र राष्ट्र के प्राणतत्व से तादात्म्य रखता हो। भारत में केवल राम ही ऐसे महानायक हैं, जो सम्पूर्ण भारतीय तत्व या भारतीय संस्कृति के प्रतीक हैं।

लेखक – पूर्व कुलपति, महर्षि पाणिनि संस्कृत एवं वैदिक विवि उज्जैन हैं।
132, महाश्वेता नगर, उज्जैन 456010 (म.प्र.)
दूरभाष: (0734) 4040568, 9407140010

आलेख

# श्रीरामनाम की महिमा

डॉ. नरेन्द्रकुमार मेहता

भगवान् श्रीराम की कथा भारत में कश्मीर से कन्याकुमारी तक सभी जानते हैं। इनमें से विरले लोग ही श्रीराम की इस कथा का माहात्म्य जानते हैं। श्रीरामनाम की महिमा जो कुछ जानते भी हैं वह पूर्णत: ठीक से जानते भी नहीं है। श्रीरामनाम की महिमा विस्तृत आकाश से भी करोड़ों गुना बड़ी है। देवो के देव महादेवजी ने भी पार्वतीजी को श्रीरामकथा और श्रीराम के चरित्र के बारे में कहा है–

**गिरिजा सुनहु निसद यह कथा। मैं,**
**सब कही मोरि मति जथा।।**
**राम चरित सत कोटि अपारा।**
**श्रुति सारदा न बरनै पारा।।** श्रीरामचरितमानस उत्तरकाण्ड–52 (क)।

शिवजी कहते हैं कि– हे गिरिजा! सुनो, मैंने यह उज्ज्वल कथा, जैसी मेरी बुद्धि थी, वैसी कह डाली। श्रीराम के चरित्र सौ करोड़ अथवा अनगिनत अपार है। श्रुति और सरस्वतीजी भी उसका वर्णन नहीं कर सकते। इतना ही नहीं शिवजी के साथ–साथ पार्वतीजी श्रीरामनाम का ही जप करती हैं आगे यह भी कहा गया है–

**मंगल भवन अमंगल हारी।**
**उमा सहित जेहि जपत पुरारी।।** श्रीरामचरितमानस बाल. 10–1

श्रीराम का नाम कल्याण का भवन है और अमंगलों को पराजित (हराने वाला) है, जिसे पार्वतीजी एवं शिवजी सदा जपा करते हैं। ये दोनों जप करते हैं तो दूसरे देवता और मनुष्य श्रीराम का जप करें तो कौन सी बड़ी बात है? रामनाम की महत्ता–महत्व की अत्यन्त ही ख्याति प्राप्त कथा मैंने बचपन में अपने पिताश्री एवं अनेक सन्तों के सत्संग में सुनी थी कि संत कहते हैं कि संसार के सातों महासागरों की यदि दवात (स्याही का पात्र) बना दिया जाए और एक ऊँचे विशाल पर्वत को कलम बनाकर यदि श्रीगणेशजी जैसे शीघ्र समझकर लिखने वाले व्यक्ति द्वारा रामनाम की महिमा लिखने को दी जाए तो वह कभी भी श्रीरामनाम की पूरी पूरी महिमा का वर्णन नहीं कर सकता है। श्रीरामनाम की जीवन में जब पवित्रता होगी, श्रद्धा होगी तब स्वयं हमारे जीवन में यह रामनाम आ जाता है। इसीलिए गोस्वामी तुलसीदासजी ने कहा है कि–

**दोहा– राम नाम मनि दीप धरु जीह देहरी द्वार।**
**तुलसी भीतर बाहेर हुँ जौं चाहसि उजिआर।।**

श्रीरामचरितमानस बाल दोहा–21

तुलसीदासजी कहते हैं कि यदि तू भीतर और बाहर दोनों ओर उजाला चाहता है तो मुख रूपी द्वार की जीभ रूपी देहली पर रामनाम रूपी मणि–दीपक को रख। श्रीराम जब हमारे हृदय और आचरण में पवित्रता–श्रद्धा होगी तभी श्रीरामनाम के प्रकाश का प्रवेश सम्भव है। अत: हमें अन्दर एवं बाहर की पवित्रता जीवन में रखना चाहिए। श्रीरामनाम की महिमा तथा इस शब्द पर विचार करें तो ज्ञात होगा कि–

**आखर मधुर मनोहर दोऊ। बेरन बिलोचन जन जिय जोऊ।।**
**सुमिरत सुलभ सुखद सब काहु। लोक लाहु परलोक निबाहू।।**

श्रीरामचरितमानस बाल. 20–1

दोनों अक्षर रा और म मधुर तथा मनोहर हैं जो वर्णमाला रूपी शरीर के नेत्र हैं भक्तों के जीवन हैं तथा स्मरण मात्र करने में सबके लिए

सुलभ और सुख देने वाले हैं, इतना ही नहीं जो इस लोक में लाभ और परलोक में भी निर्वाह करते हैं। ये दोनों अक्षर उच्चारण में मधुर और देखने में भी सुन्दर है। सदा स्मरण करने में सबको अत्यन्त ही सुलभ और सुखदायी भी है। रामनाम का प्रभाव इस लोक के साथ ही साथ परलोक तक होता है। श्रीरामनाम की महिमा शिवजी, गणेशजी तथा वाल्मीकिजी ने अच्छी तरह जानी है तथा उनका श्रीराम के साक्षात् अनुभव का अद्भुत प्रभाव भी हुआ है। उन्होंने बताया कि एक श्रीरामनाम भगवान् के लाखों नाम के बराबर है।

श्रीराम के प्रभाव का श्रेष्ठतम उदाहरण हम इस प्रकार देखते हैं–

**हरषे हेतु हेरि हर ही को। किय भूषन तिय भूषन तीको।**
**नाम प्रभाउ जान सिव नीको। कालकूट फलू दीन्ह अमी को।।**

श्रीरामचरितमानस बाल. 19-4

शिवजी ही नहीं अपितु पार्वतीजी भी पति के वचनानुसार सदा रामनाम का जप किया करती हैं। रामनाम के प्रति पार्वतीजी के हृदय की ऐसी प्रीति देखकर श्रीशिवजी हर्षित हो गए और उन्होंने स्त्रियों में भूषणरूप (पतिव्रताओं में शिरोमणि) पार्वतीजी को अपना आभूषण बना लिया अर्थात् उन्हें अपने अंग (शरीर) में धारण करके अर्धांगिनी बना लिया। इस प्रकार शिवजी रामनाम के प्रभाव को अच्छी तरह जानते हैं। जिस प्रकार के फलस्वरूप समुद्रमंथन में निकला कालकूट जहर ने उनको अमृत का फल दिया अर्थात् कालकूट विष भी अमृत बन गया।

**महामन्त्र जोई जपत महेसू। कासीं मुकुति हेतु उपदेसू।।**
**महिमा जासु जान गनराऊ। प्रथम पूजिअत नाम प्रभाऊ।।**
**जान आदिकवि नाम प्रतापू। भयउ सुद्ध करि उलटा जापू।।**
**सहस नाम सम सुनि सिब बानी। जपि जेईं प्रिय संग भवानी।।**

श्रीरामचरितमानस बाल. 19-2-3

रामनाम जो महामन्त्र है जिसे महेश्वर शिवजी जपते हैं और उनके द्वारा जिसका उपदेश काशी में मुक्ति का कारण है तथा जिसकी महिमा को श्रीगणेशजी भी जानते हैं जो इस रामनाम के प्रभाव से सबसे पहले पूजे जाते हैं। आदि कवि वाल्मीकिजी रामनाम के प्रताप को जानते थे जो उलटा नाम (मरा-मरा) जपकर पवित्र हो गए। श्री शिवजी की वाणी को सुनकर कि एक बार रामनाम सहस्त्रनाम के समान है जो कि पार्वतीजी अपने पति के साथ-साथ रामनाम जप निरन्तर जपती रहती है। पुनश्च वाल्मीकिजी के बारे में मानस में वर्णित है-

**उलटा नामु जपत जगु जाना। बालमीकि भए ब्रह्म समाना।।**

श्रीरामचरितमानस अयो. 194-4

जगत जानता है कि उलटा नाम (मरा-मरा) जपते-जपते वाल्मीकिजी ब्रह्म के समान हो गए। श्रीरामनाम की महिमा के बारे में तुलसीदासजी ने पुन: बताया है-

**दोहा- ब्रह्म राम तें नामु बड़ बर दायक बर दानि।**
**रामचरित सत कोटि महं लिय महेस जानि।।**

श्रीरामचरितमानस बाल. दो. 25

**अपतु अजामिलु गजु गनिराऊ। भए मुकुत हरिनाम प्रभाऊ।।**
**कहाँ कहाँ लगिनाम बड़ाई।। रामु न सकहिं नाम गुन गाई।।**

श्रीरामचरितमानस बाल. 26-4

श्रीहरि (श्रीराम) नाम के प्रभाव से नीच अजामिल, गज (गजेन्द्र) और गणिका (वेश्या) भी मुक्ति को प्राप्त हुए। तुलसीदासजी कहते हैं कि मैं नाम की बड़ाई कहाँ तक करूँ राम भी राम के गुणों को गा नहीं सकते। उन्होंने कलियुग के लक्षण बताते हुए हमें इस युग में कैसे रहना है यह भी शिक्षा दी है जिससे हमारे जीवन की उपयोगिता हो सकती है।

**नहिं कलि करम न भगति बिबेकू। राम नाम अवलंबन एकू।।**
**कालनेमि कलि कपट निधानू। नाम सुमति समरथ हनुमानू।।**

श्रीरामचरितमानस बाल. 27-4

तुलसीदासजी ने रामनाम के महत्व को बताते हुए कहा है कि कलियुग में न कर्म है न भक्ति और न शान ही है। रामनाम ही एक आधार है। कपट की खान कलयुग रूपी कालनेमि (राक्षस के माने) के लिए रामनाम ही बुद्धिमान और समर्थ श्री हनुमानजी हैं। इस कलयुग के प्रभाव से हम यदि मुक्त होना चाहते हैं तथा संसार सागर से मुक्त होने का भी यह रामनाम मन्त्र ही है।

**कलिजुग जोग न जग्य न ग्याना। एक आधार राम गुन गाना।।**
**सब भरोस तजि जो भज रामहि। प्रेम समेत गाव गुन ग्रामहि।।**

श्रीरामचरितमानस उत्तरकाण्ड 103-03

कलियुग में न योग और यज्ञ है और न ही ज्ञान ही। रामनाम का गुणगान ही एकमात्र आधार है। अतएव सारे भरोसे (विश्वास को) को त्याग कर जो श्रीरामजी को भजता है और प्रेमसहित उनके गुण समूहों को गाता है वही इस भवसागर से तर जाता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

**राम भालु कपि कटकु बटोरा। सेतु हेतु श्रमु कीन्ह न थोरा।**
**नामु लेत भव सिंधु सुखाहीं। करहु बिचारु सुजन मन माहीं।।**

श्रीरामचरितमानस बाल. 25-2

श्रीरामजी ने तो भालु और बन्दरों की सेना इकट्ठी (बटोरी) और समद्र पर पुल बाँधने के लिए थोड़ा भी परिश्रम किया परन्तु रामनाम लेते ही संसार समुद्र सूख जाता है। सज्जन जन मन में विचार कीजिए (दोनों में कौन बड़ा है) श्रीराम के नाम का गुणगान वेद-पुराण और उपनिषद में बहुत ही सुन्दर बताया गया है-

**राम नाम कर अमित प्रभावा। संत पुरान उपनिषद गावा।।**

श्रीरामचरितमानस बाल. 46-1

सन्तों पुराणों और उपनिषदों ने रामनाम के असीम प्रभाव का गान किया है। यही कारण है कि उनके नाम का प्रभाव बताना आसान नहीं है। जब तक ही हम राममय न हो जाए। सन्तों ने भी श्रीराम के चरित्र को बड़ा ही अनुपम बताया है यथा-

**राम चरित अति अमित मुनीसा। कहि न सकहिं सत कोटि अहीसा।।**

श्रीरामचरितमानस बाल. 105-2

महर्षि याज्ञवल्क्यजी ने मुनि भरद्वाजजी से कहा कि हे मुनिश्वर! रामचरित्र अत्यन्त अपार है। सौ करोड़ शेषजी भी उसे नहीं कह सकते। अरण्यकाण्ड में नारदजी ने रामनाम को सबसे बड़ा नाम बताकर कलियुग में मोक्ष प्राप्ति का सरल साधन निरुपित किया है यथा-

**यद्यपि प्रभु के नाम अनेका। श्रुति कह अधिक एकतें एका।।**
**राम सकल नामन्ह ते अधिका। होउनाथ अघखगगन वधिका।।**

श्रीरामचरितमानस अरण्यकाण्ड 42 (क) 4

यद्यपि प्रभु के अनेकों नाम है और वेद कहते हैं कि वे सब एक से एक बढ़कर है तो भी हे नाथ! रामनाम सब नामों से बढ़कर हों और पाप रूपी पक्षियों के समूह के लिए यह वधिक के समान हो।

लोके नहि स विद्येत यो न राममनुव्रत: ।
वा.रा. अयो. 37-32

संसार में कोई ऐसा पुरुष नहीं है जो श्रीराम का भक्त न हो।

लेखक- 'मानसश्री', मानस शिरोमणि, विद्यावाचस्पति एवं विद्यासागरसीनि. एमआईजी-103, व्यास नगर, ऋषिनगर विस्तार, उज्जैन (म.प्र.) पिनकोड- 456 010
फोन- 0734-2510708, मो. 9424560115

■

आलेख

# 'राम-सीतमानी वारता' का धार्मिक और ऐतिहासिक संदर्भ

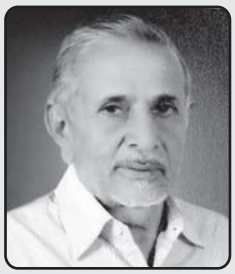

डॉ. भगवानदास पटेल

उत्तर गुजरात के भील प्रदेश में 'रोम सीतमानी वारता (रामकथा), ऋतुचक्रके अनुसार आने वाले भिन्न महीनों में अलग अलग ढंग से गाई और कही जाती है। एक तो भादों (भाद्रपद) माह में 'धूळा (धूला) के ठाकुर के पाट' (महामार्गी पाट) के प्रसंग में तंबूर के साथ गाई और कही जाती है। दूसरे, 'कोबरिया ठाकुर के पाट' (कोळी) के समय सांग (राजस्थानी घेर- डफली से छोटा थाली जैसा चर्मवाद्य) पर रामकथा नृत्य के साथ सिर्फ गाई जाती है। दोनों प्रसंग भीलों के धार्मिक अनुष्ठान के साथ जुड़े हुए हैं। धूळा का पाट चोखा (शुद्ध) और अत्यंत पवित्र अनुष्ठान है जब कि कोबरिया पाट भीलों का मैला (अशुद्ध) धार्मिक अनुष्ठान है। परिणामत: दोनों प्रसंगों पर गाई जाती रोम-सीतमानी वारता का धार्मिक वातावरण भिन्न प्रकार का होता है। रामकथा की मूल घटनाएँ एक जैसी होते हुए भी माह और प्रसंग अलग अलग होने के कारण तत्कालीन धार्मिक वातावरण में बदलाव होता है। इससे लोकसमुदाय की मन:स्थिति में भी परिवर्तन आता है।

भादों मास में नदी-नाले जल से भर जाते हैं। अच्छी फसल से लोग संतृप्त होते हैं। यह सब समृद्धि धूळा के ठाकुर या परमात्मा की असीम कृपा का परिणाम है। अत: भील समुदाय का सामूहिक मन कृतज्ञ भाव से भर उठता है। परिणामस्वरूप भील क्षेत्र में अध्यात्म और भक्ति का वातावरण छाने लगता है। अत: भील लोग, परिवार और मवेशियों के सुख के लिए भादों महीने में पवित्र धूळा के ठाकुर के पाट का अनुष्ठान करते हैं। इस अनुष्ठान के पवित्र होने के कारण पूर्णाहुति के समय पशुबलि चढ़ाई नहीं जाती। धार्मिक विधि-विधान के साथ राम के पूर्वजीवन के शान्तरस से परिपूर्ण प्रसंग पूरी रात साधुमंडली द्वारा तंबूर और मंजीरे की संगत में गाये और कहे जाते हैं।

माघ के महीने की शीतऋतु में कोई खास व्यक्ति से हुए अपराध के निवारण के लिए भील लोग कोबरिया ठाकुर का धार्मिक अनुष्ठान करते हैं। धूळा का ठाकुर शान्त और पवित्र देव है जब कोबरिया ठाकुर मैला (अशुद्ध) और ऋग्वेद के रुद्र जैसा क्रोधी देव है। जो लोग चोरी करते हैं, हराम का लूटते हैं, उनके पीछे ओझा (भूवा) माल वापस लाने के लिए कोबरिया ठाकुर को भेजता है। अत: कोबरिया पाट के अनुष्ठान के समय अपराधी व्यक्ति पर कोबरिया ठाकुर का कोप उतरता है। परिणामत: रोम-सीतमानी वारता के सीताहरण के बाद के 'लंका दहन', 'रावणवध' और 'अमरज्योत' जैसे ओज- वीररस प्रधान बलि के पोषक प्रसंग ओझा-मंडली द्वारा सांग, बंसी और सारंगी पर गाए जाते हैं। इसी तरह एक ही समाज के लोकसमुदाय के चित्त दोनों अलग अलग प्रसंगों में भिन्न मन:स्थिति धारण करते हैं। अत: दोनों प्रसंगों पर गाई जाती मौखिक रामकथा की प्रस्तुति और स्वरूप में काफी अंतर हो जाता है।

धूळा के पाट के समय भक्ति का वातावरण होने से तंबूर पर साधु रामकथा गाता है और कहता है। यह खास करके 'बैठकिए भजन' के रूप में विलंबित स्वर में होती है।

ब्रह्ममुहूर्त में साधुमंडली मंडल की रचना करती है। इसके लिए प्रमुख साधु सवा हाथ का सफेद और लाल कपड़ा गाय के गोबर से लीपी गद्दी (जमीन) पर बिछाता है। सफेद कपड़ा शिव का और लाल कपड़ा शक्ति (पार्वती-उमिया) का प्रतीक होता है। कपड़े पर साँवाँ के दानों से चन्द्र, सूरज, चौरासी साधु, पाँच पांडव, पाड़ोर गाय, वासुकी नाग जैसे धार्मिक प्रतीकों की रचना करता है। तत् पश्चात् सितरी ज्योत (शीतल ज्योति), भंडारी द्वारा भरे जा रहे चूरमे के कुंड़े एवं गुरु-चेला बनाने की क्रिया तथा मंत्रोच्चार के साथ चढ़ाये जाते नारियलों से एक विशेष प्रकार का पवित्र धार्मिक वातावरण निर्मित होता है। साधुमंडली राम के पूर्वजीवन के प्रसंग घटनाओं को शान्त चित्त से खुल कर गाती है।

कोबरिया ठाकुर के पाट के प्रसंग में ब्रह्ममुहूर्त में ओझा गाय के गोबर से लीपी गई गद्दी पर किनखाब का लाल कपड़ा बिछाता है। उस पर लाल चावल (अहुरी) बिछाकर ओझा कोबरिया ठाकुर की प्रतिमाओं को प्रस्थापित करता है। शंखघोष होते ही ओझा अभुआने लगता है। क्रोधी देव कोबरिया ओझा के शरीर में प्रवेश करता है। अत: रामकथा ओझा के आवेश में से आविर्भूत होती है। प्रसाद के रूप में ली गई शराब आवेश को बहलाती है और आवेश क्रोध और दर्प में परिवर्तित होता है। सांग जैसे चर्मवाद्य, सारंगी जैसे तंतुवाद्य, बंसी एवं शंख जैसे सुषिरवाद्य की संगत क्रोध ओर आवेश की सहायक और पोषक बनती है। लोकवाद्यों की संगति से रामकथा नृत्य के साथ द्रुत स्वर धारण करती है। कथा द्रुत एवं आवेशपूर्ण होने से सीताहरण के बाद के लंकादहन, रावणवध, अमरज्योत के साथ राम के उत्तर जीवन के वीररस भरे प्रसंग ओजपूर्ण स्वरों में गाये जाते हैं।

इन प्रसंगों में ब्रह्ममुहूर्त में किए जाते विधि-विधान ज्यादा सहायक होते हैं। पके चावल के मेरु-सुमेरु पर्वतों की रचना, पहाड़ों पर प्रकट की गई दीपमाला, मूच्छित लक्ष्मण के लिए अमरज्योत लेने के लिए हनुमान का मेरुसुमेरु की ओर दौड़ना, पके चावलों का पहाड़ आरोगना, ओझा की देह में आधिभौतिक तत्त्व कोबरिया देव का प्रवेश करना एवं

पीठ पर जंजीर मारना जैसे विशेष धार्मिक वातावरण के बीच रामकथा एक लाक्षणिक नाट्यात्मक रूप धारण करती है। नृत्य एवं संगीत से उसकी प्रस्तुति ज्यादा द्रुत एवं सजीव बनती है।

**उत्तर गुजरात और भारतवर्ष के अन्य आदिवासियों की रामकथा में समानता**

उत्तर गुजरात के खेड़ब्रह्मा और दांता तहसील तथा राजस्थान की कोटड़ा तहसील में बसे भील आदिवासियों में मौखिक रूप में प्रचलित रोम- सीतमानी वारता की तरह भारत के अन्य राज्यों में बसे आदिवासियों में रामकथा प्रचलित होगी। किन्तु भारत की इन अत्यंत पूर्वकालीन जातियों में प्रचलित मौखिक परंपरा की रामकथाओं का किसीने भी तलस्पर्शी क्षेत्रकार्य करके उसका लिखित रूप प्रस्तुत नहीं किया है। अत: ये रामकथाएँ उपलब्ध नहीं होती हैं। हालांकि भारत के अन्य राज्यों में आदिवासियों के बारे में हुए कई समाजशास्त्रीय और नृवंशशास्त्रीय संशोधनों में आवश्यक बातों पर लिखे गये लेखों से मौखिक परंपरा की रामकथा के बहुत से प्रसंग उजागर हुए हैं। इन प्रसंगों से पता चलता है कि गुजरात की भीली रामकथा की तरह भारत के अन्य राज्यों में बसती कई आदिवासी जातियों में भी पारम्परिक मौखिक रामायण के प्रसंग समान रूप से प्रचलित हैं।

सीता की खोज करते समय गिलहरीने राम को सीताहरण करनेवाले रावण का पता दिया। अत: रामने उसकी पीठ पर आशीर्वाद के रूप में अँगुलियों से सोने जैसी रेखाएँ खींची। यह प्रसंग गुजरात और राजस्थान के भीलों की रामकथा की तरह बिहार के बिर्होर, बंगाल के संथाल और छोटानागपुर के असुर आदिवासियों में समान घटना के रूप में प्रचलित है।

दूसरे प्रसंग में बिहोर और असुर आदिवासियों में प्रचलित रामकथा के अंतर्गत बगुलेने सीता का पता नहीं दिया तथा राम और लक्ष्मण का तिरस्कार किया । अत: क्रोधित राम दण्ड स्वरूप उसकी गर्दन खींचकर लंबी करते हैं। भीली रामकथा में 'आवल' (एक जंगली पौधा जिसके सुगंध रहित पीले फूल आते हैं) और 'खाटी नेंबो' (वर्षाऋतु में होती खट्टी बेल) ने सीताहरण का सही पता नहीं दिया और राम का तिरस्कार किया। अत: रामने विवाह के समय मुरझा जानेका शाप दिया ।

हनुमान समुद्र के मध्य में राम द्वारा चलाए गए बाण पर विश्राम करके लंका पहुँचते हैं। यह घटना भीलों की तरह बिर्होर और संथाल आदिवासियों में समान रूप से प्रचलित है।

लक्ष्मण द्वारा रावण को मारने की घटना भील और बिहार आदिवासियों में प्रचलित है। रोम-सीतमानी वारता में रावण के प्राण सूर्य के रथ में स्थित भ्रमर में थे। लक्ष्मण उबलते हुए तेल में भ्रमर को गिराकर रावण का हनन करते हैं। जब कि बिर्होर आदिवासियों में प्रचलित घटना के अनुसार रावण के प्राण उसके महल में रही एक मंजूषा में थे। लक्ष्मण और हनुमान दोनों साथ में मंजूषा खोलकर रावण के प्राण मुक्त कर रावण का वध करते हैं।

वैदिक साहित्य में वर्णित सीता की तरह मध्यप्रदेश की बैगा और भूमिया तथा गुजरात-राजस्थान के भीलों में सीता कृषि की अधिष्ठात्री देवी के साथ संबंध रखती है। बैगा और भूमिया आदिवासियों की कथा के अनुसार सीता की छ: उँगलियाँ थीं; उन्होंने छठ्ठी उँगली काटकर भूमि में रोप दी । कालान्तर में उससे एक बाँस उत्पन्न हुआ जिसकी गाँठों (कांडों) के बीच सब प्रकार के बीज छिपे हुए थे। भील समाज की रामकथा के अनुसार सीता पिता के पास से कन्यादान में सिर्फ फूल-पौधों के बीज ही माँगती है। बीज रोप कर बन में हरा उपवन रचती है। बिर्होर आदिवासियों की रामकथा के अनुसार रावण के बल प्रयोग से बचने हेतु सीता जादू से अपनी देह पर फोड़े उत्पन्न करती है। जबकि भीली रामकथा के अनुसार सीता बलप्रयोग से बचने और सतीत्व का रक्षण करने के लिए नाभि तक पत्थर रखकर उनमें समा जाती है। भीलों की रोम-सीतमा की तरह बैगा और भूमिया आदिवासियों के हनुमान शिव के वीर्य (तेजस) से उत्पन्न हुए थे।

**भीली रामायण एवं वाल्मीकि रामायण की समानता**

लिखित परंपरा की सबसे प्राचीन प्रशिष्ट वाल्मीकि रामायण और अनेक वर्षों से मौखिक परंपरा में स्थित भील समाज की रोम-सीतमानी वारता के कुछ प्रसंग समान हैं।

रोम-सीतमानी वारता में आती इन्द्र और गौतम की पंखुड़ी (प्रसंग) की तरह वाल्मीकीय बालकांड में अहल्या की उत्पत्ति तथा इन्द्र और गौतम के विषय में समान वृत्तांत प्राप्त होता है ।

ब्रह्माने दूसरे प्राणियों से सर्वश्रेष्ठ अंग लेकर एक ऐसी नारी का निर्माण कियाकि जिसमें हल (कुरूपता) का संपूर्ण अभाव था। अत: उसका नाम अहल्या रखा। भीली रामकथा की पंखुड़ी (प्रसंग) में अहल्या को 'हलियादे रोणी' कहा है। इसके अतिरिक्त उसका 'सतनी रोणी' (सत्य की रानी) के रूप में भी उल्लेख हुआ है, जो उसकी निर्मलता का सूचक है। अहल्या को प्राप्त करने की अभिलाषा और रचे षड्यंत्र की कथा समान घटना के रूप में आगे बढ़ती है।

वाल्मीकि के बालकांड के वृत्तांत में अग्नि जैसे तेजस्वी (दीप्यमानं ईव अनलं) गौतम इन्द्र को नपुंसक बनने का शाप देते हैं। इस शाप के परिणामस्वरूप इन्द्र का वृषण भूमि पर गिरा (सर्ग-48)। भीली रामकथा के वर्णन के अनुसार खाई में उतरते इन्द्र पर गौतमने 'अगनपसेरी' (अग्निचादर) झटकी। उसकी इन्द्रियाँ जल गई। वह श्यामवर्ण हो गया। जारकर्म करने के बदले में यहाँ इन्द्र या अहल्या को गौतमऋषि शाप देते नहीं हैं। यहाँ अहल्या उद्धार का प्रसंग इसलिए नहीं है कि भीली रामकथा में राम को क्षत्रियकुमार के अतिरिक्त विष्णु के अवतार स्वरूप नहीं माना गया है। वाल्मीकि के बालकांड के रचनाकाल तक राम को भी विष्णु के अवतार नहीं माना गया है। दोनों रामकथा राम-लक्ष्मण की बाल्यावस्था, धनुर्विद्या या बाललीला के बारे में लगभग मौन हैं।

वाल्मीकि रामायण के अरण्यकांड में लक्ष्मण को स्पष्ट शब्दों में अविवाहित कहा है। रोम-सीतमानी वारता में अविवाहित लक्ष्मणने बन में बारह वर्ष तक ब्रह्मचर्य का पालन किया था। अत: वह रावण को मारने के लिए समर्थ हुआ था।

दोनों रामकथा में सीता स्वयंवर और धनुर्भंग के प्रसंग समान रूप से प्राप्त होते हैं।

वाल्मीकि रामायण के उत्तरकांड (सर्ग-17) में वेदवती की कथा और भीली की पद्मजा सोता (सौतमा) तथा 'दसमाग्रह' की रावण के साथ बैर लेने को कथा में समानता है।

अकंपन रावण के पास जाकर राम द्वारा खर राक्षस के वध की खबर देता है और सीता के सौंदर्य की प्रशंसा करके हरण करने के लिए प्रेरित करता है। यह कार्य भीली रामकथा में दसमाग्रह करता है।

भीली रामकथा की तरह 'आदिरामायण' में शूर्पणखा के विरूपण का प्रसंग नहीं है।

रोम-सीतमानी वारता की तरह आदिरामायण में सीतालक्ष्मण संबंध अत्यंत पूज्यभाव के अतिरिक्त स्वाभाविक मानवीय है। दोनों रामकथा में राम, लक्ष्मण और सीता नि:संकोच बातचीत तथा व्यवहार करते हैं। अरण्यकांड में एक स्थान पर राम लक्ष्मण को आशा करते हैं कि सीता को उठा करके नाव पर चढ़ाया जाय। (सीतां चारोपयान्वक्षं परिगृह्य मनस्विनीय) ।

भीली रामकथा की तरह आदिरामायण में पंचवटी (भीली रामकथा में बन का ही उल्लेख है, पंचवटी का नहीं) में एक ही पर्णशाला बनाने का उल्लेख है; जिस में तीनों साथ में निवास करते हैं।

सीताहरण के समय का वातावरण दोनों कथाओं में समान है। लक्ष्मण सीता के एक ही प्रकार के कटु वचन सुनकर राम की सहायता करने जाता है।

यहाँ राम-लक्ष्मण और हनुमान की येरिया वानर के साथ की गई लड़ाई राम-बालि युद्ध की याद दिलाती है। राम-बालि युद्ध येरिया वानर और हनुमान की लड़ाई का विकसित रूप लगता है। येरिया वानर हनुमान की पत्नी का हरण करता है। राम-लक्ष्मण येरिया वानर के साथ लड़ाई करके हनुमान की पत्नी को छुड़ाते हैं। हनुमान में से सुग्रीव के और येरिया वानर में से बालि के चरित्र का विकास होने की संभावना है।

दोनों रामकथाओं में हनुमान द्वारा सीता की खोज के वर्णन प्राप्त होते हैं। वाल्मीकि रामायण में हनुमानने प्रमुख राक्षसों के महलों में तथा रावण के अंत:पुर में सीता की असफल खोज की थी (सर्ग - 6, 10, 11) । रोम- सीतमानी वारता में हनुमान रावण के बादल-महलों का कोना-कोना छान लेते हैं। किन्तु, कहीं भी सीता के दर्शन नहीं होते हैं। दोनों रामकथा में मुद्रिका अर्पण और लंकादहन के वर्णन में खास अंतर नहीं है।

भीली रामायण की तरह आदिरामायण मंदोदरी विलाप, सीता की अग्निपरीक्षा और पुष्पक विमान की घटना के लिए मौन है। ए. वेबर जैसे विद्वान इन घटनाओं को बाद में प्रविष्ट होने की संभावना को स्वीकारते हैं। वाल्मीकि कृत इस मूल स्रोत में सीतात्याग का करुण प्रसंग नहीं था। रामकथा सुखान्त थी । भीली रामकथा में राम की सेना वैकुंठ से आई गेंद पर सवार होकर लंका में आती है। जाते समय 'जल का योद्धा' (हनुमान पुत्र) अपनी पीठ पर बिठाकर राम की सेना को समुद्र पार करवाता है।

भीली रामकथा में सीता का त्याग अयोध्या में आने के बाद माता कौशल्या और सीता - सास-बहू के झगड़े के कारण होता है। माता के आदेश से राम सीता का त्याग करते हैं। लक्ष्मण सीता को बन में छोड़ आता है। बाघ सीता को धर्म की बहन बनाकर सप्तर्षि के आश्रम में छोड़ आता है। सीता वहाँ ऋषि के आश्रय में रहती है। राम सीता की खोज बन में दो घोड़ों को भेजकर करते हैं। वाल्मीकीय रामायण के उत्तरकांड में वर्णित अश्वमेध यज्ञ का प्रसंग भीली रामकथा के दो घोड़ों के प्रसंग में से विकसित होने की संभावना है। दो घोड़ों के प्रसंग के अंत में राम का अपने परिवार के साथ पुनर्मिलन होता है। सीता अयोध्या के लोकसमुदाय के बीच पूरे सम्मान के साथ गृहप्रवेश करती है।

यहाँ ताडका, मंथरा, शूर्पणखा, विश्वामित्र, बालि, सुग्रीव, अंगद, मारीच, सुबाहु, अकंपन, मेघनाद जैसे शक्तिशाली चरित्रों की विशिष्ट सृष्टि नहीं है । यहाँ जटायु-रावण तथा राम-रावण युद्ध का कविकल्पना प्रचुर भयानक और अद्भुत वर्णन नहीं है। दशरथ का पुत्रेष्टि यज्ञ और राम का अश्वमेध यज्ञ भी नहीं है।

**परवर्ती रामकथा और भीली रामकथा की समानता**

वाल्मीकि रामायण की तरह पूर्व-अग्नि एशिया तक फैलो लिखित परंपरा की रामायणों में भी भीली रामकथा के कुछ प्रसंग समान रूप में पाए जाते हैं।

थाईलैन्ड की 'रामकियेन' और 'सेरीराम' के अपने पाठ में पद्मजा सीता को रावण पद्म पर बैठी हुई देखता है और अपने वहाँ ले जाता है। एक लक्षणज्ञ मंत्री रावण को सावधान करता है कि यह कन्या उसके मृत्यु का कारण बनेगी। यह सुनकर रावण सीता को समुद्र में फेंकने का आदेश देता है। कन्या बच जाती है और जनक को मिलती है। रोम-सीतमानी वारता में ज्योतिषी रावण का सीता के साथ गृहसंसार चलाने का भविष्य कथन करते हैं। अत: रावण सीता की हत्या करने का आदेश देता है। किन्तु, सैनिक उसको पलने के साथ नदी में बहा देते हैं- जो जनक को प्राप्त होती है। ई. 800-100 में लिखी गुणभद्र की जैन रामायण 'उत्तरपुराण' में भी ऐसा प्रसंग प्राप्त होता है। उत्तरपुराण में कुँवरी का भविष्य देखते हुए ज्योतिषी रावण को कहते हैं कि यह कन्या तुम्हारा नाश करेगी। अत: भयभीत रावण कन्या को अज्ञात स्थान में छोड़ आने का आदेश देता है। मारीचि कुँवरी को मंजूषा में बंद करके मिथिला की सीमा में गड्ढेमें गाड़ आता है। जो कन्या जनक को प्राप्त होती है।

16वीं शताब्दी में रचित एकनाथ के भावार्थ रामायण के अरण्यकांड के आठवें अध्याय के अनुसार राम किसी एक दिन सीता को लक्ष्मण के संरक्षण में छोड़कर बाहर जाते हैं। सीता को निद्रा आ जाती है। सीता के कपड़े अस्तव्यस्त हो जाते हैं। अत: उसकी देह अर्ध अनावृत हो जाती है। साधना में लीन लक्ष्मण उस ओर ध्यान नहीं देता। वापिस आए राम लक्ष्मण को पूछते हैं, ''स्त्री का रूप देखकर किसका मन स्थिर रह सकता है?'' लक्ष्मण उत्तर देता है, ''रामभक्त का मन इससे प्रभावित नहीं होता।''

भीली रामकथा के अनुसार राम जब वनफल लेने जाते हैं तब कुटिया रचते समय श्रमित हुए सीता और लक्ष्मण देह पर सागौन के पत्ते ओढ़कर निद्राधीन होते हैं। पवन से पत्ते उड़ जाते हैं और दोनों अर्ध अनावृत हो जाते हैं। राम आते हैं। दोनों को अर्ध अनावृत देखकर कुपित

राम लक्ष्मण को मारने के लिए उद्धत होते हैं। पैरों की आहट से जाग्रत सीता ज्ञान की वाणी से राम को समझाती है, ''तू एक हाथ से ताली बजा और एक लकड़ी से आग जला।'' राम के दोनों प्रयत्न असफल रहते हैं तब सीता कहती है, ''राम, एक हाथ से ताली नहीं बजती; एक लकड़ी से आग नहीं जलती; उसी तरह एक देह से कुछ नहीं होता! संशय छोड़ और कुआँ खोदने का काम कर ।''

मैरावण चरितम् के अनुसार लंकादहन के बाद समुद्र में स्नान करते हनुमान का श्वेद पीने से मछली गर्भवती हुई। अत: हनुमान से एक पुत्र उत्पन्न हुआ ।एसी घटना भीली रामकथा में हनुमान जब समुद्र लांघते हैं तब घटित होती है। मध्य समुद्र में हनुमान थक जाते हैं। राम बाण चलाते हैं। हनुमान बाण पर विश्राम करते हैं। फिर समुद्र लांघते समय वीर्य (तेजस) समुद्र में गिरता है। हनुमान का वीर्य एक मछली पीती है। अत: 'जल का योद्धा' (मकरध्वज) उत्पन्न होता है। मैरावण चरितम् में वह मत्स्यराज के रूप में पहचाना जाता है।

कथासरित्सागर (सोमदेव कृत 11वीं शताब्दी), रामकियेन (थाइलैन्ड- सियाम रामायण 17 वीं शताब्दी) और मौखिक परंपरा की भीली रामायण में पलने में बालक नहीं मिलने से ऋषि कुश नामक घास में से मंत्र द्वारा वालक उत्पन्न करते हैं। कुश में से बालक उत्पन्न करने की घटना में कथासरितसागर में वाल्मीकि का उल्लेख है जब भीली में सप्तषि (सात ऋषि) का उल्लेख है।

14वीं शताब्दी में रचित 'शिवमहापुराण' की शतरुद्रसंहिता (अध्याय- 20) के अनुसार विष्णु को मोहिनी रूप में देखकर शिव का वीर्यपतन हुआ। सप्तर्षिने इस वीर्य को गौतमपुत्री अंजना के कान में प्रविष्ट किया । अत: अंजनाने हनुमान को जन्म दिया। एसी ही घटना यहाँ भीली रोम-सीतमानी वारता की पंखुड़ी-2 में पाई जाती है। अकाल के बाद वृष्टि होते ही भगवान और शिव पृथ्वी की प्रदक्षिणा को निकलते हैं। एक-दूसरे की परीक्षा लेने की इच्छा से भगवान नारी का रूप लेते हैं। सौंदर्यशालिनी त्री को वन में अकेली देखकर शिव कामासकत हो जाते हैं और शिष्या बनाने के बहाने वीर्य अंजना के कान में प्रविष्ट करते हैं। अत: हनुमान का जन्म होता है।

**भीली रामकथा का ऐतिहासिक संदर्भ**

लिखित परंपरा की प्रशिष्ट वाल्मीकि रामायण और परवर्ती लिखित रामकथा की सामग्री के साथ तुलनात्मक विहंगावलोकन करते हैं तब हम 'रोम- सीतमानी वारता' के थोड़े-बहुत प्रसंगों और घटनाओं का सादृश्य भारत से आरंभ कर पूर्व-अग्नि एशिया तक फैली रामकथाओं में देख सकते हैं।

भील, संथाल, बैगा, भूमिया और असुर जैसी भारतीय प्राचीन आदिवासी जातियों में प्रचलित मौखिक लोक परंपरा को रामकथा के अल्प मात्रा में हुए संशोधन भी इतना तो साधार निर्देश करते हैं कि वाल्मीकि द्वारा ई. पूर्व दूसरी- तीसरी शताब्दी में रचित लिखित परंपरा को रामायण से भी पहले रामकथा के रोम-सीतमानी वारता जैसे दूसरे मौखिक परंपरा के लोकाख्यान और लोकमहाकाव्य भारत के भिन्न भिन्न प्रदेशों में प्रचलित थे। ये लोकाख्यान और लोकमहाकाव्य आज तक आदिवासियों के वर्तमान जीवन में मैले-पवित्र धार्मिक अनुष्ठान और विधि-विधानों के साथ जुड़े होने के कारण मंत्रों की भाँति उनके स्वरूप में भी परिवर्तन नहीं आया है। वाल्मीकि के आदिरामायण और भीलों की रोम-सीतमानी वारता के बहुत से घटना-प्रसंगों की समानता के आधार पर हम अनुमान कर सकते हैं कि वाल्मीकि लोक में प्रचलित मौखिक परंपरा की रामायण और 'इन्द्र और गौतम' जैसे आख्यानों और महाकाव्यों से परिचित होंगे । उन्होंने अपनी लिखित परंपरा की आदिरामायण में बहुत से प्रसंग-घटनाओं का विनियोग किया होगा। रामायण के दक्षिणात्य पाठ में ऐसा उल्लेख मिलता है कि नारद के पास से कथावस्तु सुनकर वाल्मीकिने रामकथा का संशोधन (अन्वेषण) किया (व्यक्तमन्वेषते भयो यवर्त्तिम)। बालकांड के चतुर्थ सर्ग के आधार पर कामिल बुल्के लिखते हैं कि, 'वाल्मीकि का आदिरामायण कुशीलवों (गायकों) द्वारा पहले जनता में लोकप्रियता प्राप्त करने लगा, और बाद में राज-दरबारों में उसका प्रवेश हुआ।' यह अनुमान भी उस समय लोक में प्रचलित मौखिक परंपरा की रामकथा और आख्यानों की ओर अँगुलिनिर्देश करता है ।

वैदिक साहित्य में आख्यान, इतिहास तथा पुराण प्राप्त होते हैं। धार्मिक संस्कारों तथा यज्ञों के अवसर पर %ऐतिहासिक% तथा 'पौराणिक' आख्यान कहते थे । आख्यानों में गद्य के साथ जो पद्य होता तो उसे गाथा कहा जाता था । गाथा साहित्य के रचयिता तथा रक्षक सूत थे। इसके अलावा दूसरे अन्य गायक (कुशीलव) गाथा एवं गीतों का प्रचार करते थे ।

भील समाज में मैले-पवित्र धार्मिक अनुष्ठानों के समय मंत्र और आख्यानों का गान-कथन करने का काम उनके साधु और ओझा वैदिकयुग के पौराणिक की भाँति ही करते हैं।

भील भारत की पूर्वकालीन (प्राचीन) जातियों में महत्त्व की प्रजाति मानी जाती है।

भीलों की 10 हजार वर्ष पूर्वकालीन धार्मिक पूजा विधि और इस समय गाई और कही जाती 'सृष्टि रचना की कथा', 'कूर्म-मच्छ' जैसी अवतार कथाएँ और 'गोतमरखी नं इन्दर' जैसी कृषि संबंधित कथाओं का प्रभाव उनके सामाजिक एवं धार्मिक जीवन में वर्तमान में भी उतना ही प्रबल है।

ऐसे संजोगों में अनेक वर्षों से प्राणों की तरह जतन की गई 'रोम- सीतमानी वारता' का मूल्य कई गुना बढ़ जाता है तथा भविष्य की रामकथा के मूलगामी और तलस्पर्शी संशोधन की एक नई एवं ठोस दिशा खोल सकती है।

लेखक- वरिष्ठ लोक संस्कृतिविद् हैं।
304, मिथिला अपार्टमेंट, सविता एन्क्लेव के सामने,
जजिस बंगला चार रास्ता, वोड़कदेव,
अहमदाबाद-380015
मोबा. 9428109579

■

आलेख

# करुणानिधान श्री राम की करुणा का उत्स!

डॉ. राजरानी शर्मा

करुणाकर, करुणानिधि, करुणासागर, अकारणकरुणावरुणालय श्री राम के अवतार का मूल प्रयोजन केवल और केवल करुणा है। करुणानिधि, परात्पर ब्रह्म, शुद्ध सच्चिदानंदघन श्री राम असुरों का संहार भी जिस प्रयोजन से करते हैं , वह है विप्र, धेनु, सुर और संत हित लीन्ह मनुज अवतार। जिस प्रयोजन से धरा धाम पर अवतार लेते हैं उसके मूल में करुणा, करुणा और करुणा ही तो है। 'जिनकी भृकुटि विलास सृष्टि लय होई' उनके लिये अकरणीय कुछ नहीं। वे तो 'कर्तुं अकर्तुं अन्यथा कर्तुं शक्य' हैं। लोकाभिरामं रणरंगधीर कारुण्यरूपं करुणाकरतं है। करुणा ही जिनका पर्याय है। आदिकवि बाल्मीकि जिन्हें...

**रामो विग्रहवान धर्म:**

कहते हैं और धर्म को परिभाषित करते हुये, मानसकार लिखते हैं'! धरम न दूसर सत्य समाना। आगम निगम पुरान बखाना। राम सत्यसंध हैं, रघुकुल रीति के परिपालन में प्राणोत्सर्ग कर देने वाले दशरथ के उत्तराधिकारी हैं। वचन पालन और सत्य निर्वहण के उत्स में आर्त जन के प्रति गहरी करुणा छिपी है। आदर्श भी और मर्यादा पुरुषोत्तम का भाव भी अद्भुत प्रेम है। प्रेम जिस त्याग से पोषित होता है उस त्याग के मूल में भी करुणा ही तो है लेकिन विचारणीय प्रश्न यह है कि इस परम प्रकाशक, चित्तोद्धारक, करुणा के उत्स या स्रोत में कौन है ? किसके गुणों के, भावों के सूक्ष्म अवलोकन में प्रभु द्रवित हो जाते हैं, भक्त के दु:ख को सुनकर देखकर करुणार्द्र हो जाते हैं, वे ये ही आर्त जन हैं, निष्काम प्रेमी भक्त हैं, जिज्ञासु भक्त हैं, अर्थार्थी भक्त हैं । सबसे अधिक भोले, सहज सरल, तरल भक्त हैं। मानस की कथा में आदि से अंत तक प्रभु श्रीराम इसी सात्विक सी, अनमोल सी, सहज और दुर्निवार करुणा के वशीभूत होकर समस्त अवतार कार्य संपन्न करते हैं ।

संतजन विप्रजन, ऋषि – मुनिजन ही नहीं सुमन्त्र , निषाद , सुग्रीव , सदृश गृहस्थ जन पारदर्शी अंतस्तल वाले, अश्रु विगलित कंठ, गद्गद गिरा , और प्रभु चर्चा से नयन बह नीरावाली स्थिति के भक्त रामचरितमानस में पदे – पदे रामकथा के आभूषण से सज जाते हैं । 'निर्मल मन जन सो मोहि भावा' का पुण्य उद्घोष करने वाले मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम, करुणा के प्रेम जाल में कैसे न विद्ध हों। भक्तवत्सलता प्रभु का सहज स्वभाव है और यह भक्तवात्सल्य करुणा, त्याग, और स्नेह का ही प्रतिफलन है। कबीर जिस आर्त्त – मधुर भाव से कहते हैं न हरि जननी मैं बालक तोरा। काहे न अवगुन बक्सहु मोरा॥ उसी आर्त्त भाव से–

'हरि तुम हरो जन की पीर। द्रौपदी की लाज राखी तुम बढ़ायौ चीर' कहकर मीरा बाई ने हरि से करुणा का अगाध संबंध बाँध लिया । विनय पत्रिका में तुलसी ने भी 'तोहि मोहि नाते अनेक मानिये जो भावै' कहकर नेह की डोर को करुणा सागर प्रभु के हाथों सौंप ही तो दिया है। हरि पीर हरते भी हैं , और हेरते भी हैं । तभी तो आर्त भाव से तुलसी किसी करुण कथा के बीच अपनी बात हरि के सम्मुख पहुँचाने का विनम्र अनुरोध अंबा जगदंबा जानकी जी से करते हैं...

**''कबहुँक अंब अवसर पाइ।**
**मेरिऔ सुधि द्यायबी कछु करुण कथा चलाइ॥''**

उक्त विनय सीताजी से करने वाले तुलसी मानस में ऐसे अवसरों को सहज ही रामकथा के करुणमधुर दिव्य प्रसंगों में बुन देते हैं । एक से एक करुणामय प्रसंग भक्तों के उरपुर , उरालय और हृदयनिकेत में बसने वाले प्रभु के करुण – कटाक्ष पाने की कामना से ही मानस के मानस की वेदना मानस के संवाद चतुष्टय में 'घाट मनोहर चारि' के हर सोपान पर छाई है।

श्री राम शक्ति , शील और सौंदर्य के साक्षात विग्रह हैं ; किन्तु श्रीराम की पूरी शक्ति अपने करुणाशील मन के संकेतों पर चलने में चरितार्थ होती है और यही करुणा श्रीराम के 'कोटि मनोज लजावनिहारे' सौन्दर्य की उत्स बनती हैं । कामदेव या मनोभव में केवल दैहिक सौंदर्य है और श्रीराम में करुणाकलित सौन्दर्य इसलिये उपमान के गुणों की गिनती तो संभव ही नहीं उपमेय ही अलौकिकता , दिव्यता और सहज करुणा ही भारी पड़ती है । बात तुलना की कदापि नहीं , ये तो केवल तुलसी ने जो यत्र – तत्र ये कामदेव की तुलना का विशेषण दिया है , उसका छोटा सा तर्क है , क्योंकि 'लजावनिहारे' की सौंदर्य शक्ति को करुणामयी दृष्टि ने मंत्रावेष्टित कर लिया है इसलिये सौंदर्य अनगिनत राशि का प्रतीक बन उठा है ।'जायँ जहाँ जहाँ बंधु दोउ तहँ तहँ परमानंद।'

यही कारण है कि रामकथा के सर्वोत्कृष्ट काव्य रामचरितमानस में श्रीराम के शौर्य से अधिक करुणानिधि, करुणासागर और करुणाकर , करुणामय , करुणानयन , करुनाऐन की अनुगूँज सर्वत्र व्याप्त है । सर्वशक्तिसंपन्न में शौर्य तो होगा ही पर ये शौर्य जब करुणा से मिलता है तो श्रीराम के उस रूप का प्रत्यक्ष होता है जो 'वल्कल वेष विशेष उदासी । चौदह बरस राम वनवासी॥' के रूप में 'जन मन रंजन, भव भय भंजन' करता आबाल वृद्ध नर – नारी को अभय प्रदान करता है । श्रीराम उद्घोष करते हैं कि

**निसिचर हीन करौं महि भुज उठाय पन कीन्ह ।**
**सकल मुनिन्ह के आश्रमन्हि जाय जाय सुख दीन्ह॥**

जो विभीषण के माध्यम से ये आश्वस्ति देते हैं –'तुम सारिखे संत प्रिय मोरे । धरऊँ देह नहिं आन निहोरे॥' जो अपने अवतार कार्य का

एक मात्र प्रयोजन स्वयं स्पष्ट कर देते हैं । ऐसे श्रीराम का अवतरण लोकरक्षण से अधिक लोकरंजन है , इसमें कदापि संदेह नहीं । रावण , कुंभकर्ण तो हरि के द्वारपाल ( जय विजय ) ही तो रहे हैं; उनका अंत करने में श्रीराम को चौदह वर्ष वनवास की आवश्यकता क्या रही होगी !

श्रीराम ने अपने वनवास के चौदह वर्षों में से सीता हरण से लेकर राम – रावण युद्ध तक का समय निकाल दें तो शेष समय श्रीराम ने केवल और केवल करुणानिधि बन कर अनंत करुणा कृपा के कार्य संपन्न करते हुये किये हैं। यद्यपि वनवास के अंतिम चरण में भी श्रीराम ने अनेकानेक करुणाकार्य संपन्न किये। सुग्रीव से मित्रता, बालि वध, सुग्रीव को अभय प्रदान करना, जटायु की क्रिया निज करों से करना, शबरी से भेंट कर करुणा करना, विभीषण की शरणागति स्वीकार करना, शत्रु के भाई विभीषण पर सहज विश्वास करके करुणावश मित्र बनाना और लंकेश कह कर स्वागत करना, नितान्त अभय कर देना और समुद्र को अविनय के लिये क्षमा कर देना जैसे कार्यों के दिव्य दीप पग – पग पर अलौकिक किन्तु मानव मर्यादित रूप में जगमगा रहे हैं। ये सब प्रसंग श्रीराम के करुणानिधान, सुजान शील, स्नेह जानने वाले और प्रणतपाल होने का ही सहज उद्घोष है।

**प्रभु तरु तर कपि डार पर ते किये आपु समान।**
**तुलसी कहूँ न राम से साहिब सील निधान॥'**

श्रीराम का शील करुणा का पर्याय है। करुणा तो देखिये जब किष्किंधाकांड में शिवजी पार्वती जी से कहते हैं–

**बानर कटक उमा मैं देखा । सो मूरख जो करन चह लेखा॥**
**अस कपि एक न सेना माहीं । राम कुसल पूछी जेहि नाहीं॥**

लेखा नहीं किया जा सकता क्योंकि अठारह पद्म तो यूथपति हैं । और करुणासागर राम ने सबकी कुशल पूछी हैं , कृपा का ऐसा विराट रूप जो हृत्तंत्री को झकझोर दे, 'भृकुटि विलास सृष्टि लय होई' के लिये कहा जाता है और सेवक ही यह आश्वस्ति प्रभु की ओर रावण को दे देता है–

**'मिलत कृपा तुम पर प्रभु करहीं। उर अपराध न एकहु धरहीं।'**
**'राम कृपा बल पाइ कपिंदा। भये पच्छजुत मनहुँ गिरिंदा॥'**

रावण दूत शुक रावण से कहता है 'अस कपि एक न सेना माहीं । जो न तुम्हहिं जीतै रन माहीं॥' क्योंकि श्रीराम के कृपा कटाक्ष प्रसाद मिला है । श्रीराम रणधीर तो हैं ही ; साक्षात् करुणायतन हैं । संपूर्ण रामचरितमानस में शताधिक आवृतियों में तुलसी ने यह सत्य पुष्ट किया है । वस्तुत: ये करुणा ही श्रीराम की शक्ति है । करुणा ही श्रीराम का सौंदर्य है और शील तो करुणा से बड़ा कुछ हो ही नहीं सकता ।

**सर्व सर्वगत सर्व उरालय । बससि सदा हम कहँ प्रतिपालय॥**

कहकर तुलसी पुष्टि यानी कृपा का प्रमाण देते हैं । जीवन जीने योग्य इसलिये ही है कि हृदय प्रभु धाम है । 'पोषणं तदनुग्रह' कहकर महाप्रभु वल्लभाचार्य जी ने जिस कृपा के सिद्धांत और प्रभु स्वभाव की व्याख्या की है, यह वही करुणा ही तो है। पोषण ही अनुग्रह है और अनुग्रह ही कृपा है ; करुणा से बढ़कर और कृपा क्या होगी ?

तभी तो तुलसी कह उठते हैं

**मोरि सुधारिहि सो सब भाँती।**
**जासु कृपा नहिं कृपा अघाती॥**

और ये भी कि...

ये कृपा करुणा सहज है ; हमारे किसी कृत्य का प्रतिफलन नहीं है । भक्तिपथगामी को इससे बड़ी आश्वस्ति क्या होगी–

**'कोमल चित अति दीन दयाला। कारण बिनु रघुनाथ कृपाला।।'**

सच तो ये है कि चौदह वर्ष की पुण्य अवधि प्रभु के शौर्य से अधिक अहैतुकी – कृपा करुणा के दृश्यों से ओत – प्रोत है । मानस में हर पृष्ठ पर प्रभु की करुणा से द्रवित छंद , सोरठा , चौपाई और दोहों की मर्मस्पर्शी छटा मन के आह्लाद में अलौकिक रस घोलती दृष्टिगत होती है । सकल मुनि द्रवित भाव से कह उठते हैं –

**अस्तुति करहिं सकल मुनि वृंदा । जयति प्रनत हित करुनाकंदा॥**

क्योंकि करुणावतार का रूप ही ऐसा भुवनभावन है –

जो प्रगट करुनाकंद , सोभा वृंद अग जग मोहई।

प्रभु की कृपा विलोकनि को सब आतुर भाव से चाहते हैं...

'अब नाथ करि करुना बिलोकहु , देहु जो वर माँगऊँ' कहकर मनु शतरूपा ने प्रभु को प्रसन्न कर लिया ।

प्रभु करुणा की पराकाष्ठा हैं । एक सुंदर प्रयोग देखिये...

**अंगद वचन विनीत सुनि रघुपति करुनासींव।**
**प्रभु उठाइ उर लायउ सजल नयन राजीव॥**

और भी...

**तब अनुजहि समझावा रघुपति करुनासींव।**
**भय देखाइ लै आवहु तात सखा सुग्रीव॥**

करुणाकर के सजल नयन की पावन मोहिनी छटा किसके चित्त को प्रासादिक न बना देगी....

**भाव बस्य भगवान सुखनिधान करुनाभवन।**
**तजि ममता मद मान भजिए सदा सीतारवन॥**

सीतारवन को भजने से ही वांछित परिणाम आयेंगे जिससे भक्तवांछा कल्पतरु की छाँह मिलेगी।

**प्रनत कल्पतरु करुनापुंजा। उपजइ प्रीति राम पद कंजा**

प्रभु को बारंबार बिनु हेत सनेही कहने वाले तुलसी को दृढ़ विश्वास है....

**कबहुँक करि करुना नर देही । देत ईस बिनु हेत सनेही॥**

त्रिभुवन वंद्य श्रीराम की स्तुतियों का सौंदर्य तो करुणा कि बिना अधूरा है....

**'रघुबीर करुनासिंधु आरत बंधु जन रच्छक हरे।'**

एवं ... **'ब्रह्मादि संकर सेव्य राम नमामि करुना कोमलं'**

प्रभु 'अजमद्वैतनुभवगम्य' और 'करुनायतन' भी हैं

सेतु बंध के समय जिन्हें निहारने का लोभ जलचरवृंद भी संवरण न कर सके....

'देखन कहँ प्रभु करुनाकंदा । प्रगट भये सब जलचरवृंदा॥'

राम प्रभु चलते हैं तो आसपास करुणा उमगती है। वनगमन के समय तो मानो अवध में करुणा का एकछत्र राज्य हो गया...

**–'हय गय कोटिन्ह केलि मृग । पुरपसु चातक मोर।'**
**पिक रथांग सुत सारिका। सारस हंस चकोर'**

जहाँ तहँ चित्र लिखे से काढ़े

राम को वनगमन का दुख नहीं प्रजा की पीर की पीड़ा है....

**रघुपति प्रजा प्रेमबस देखी । सदय हृदयँ दुख भयउ विसेषी ॥**
**करुनामय रघुनाथ गोसाईं । वेगि पाइअहि पीर पराई ॥**
और सुमंत्र से कह उठते हैं 'खोज मारि रथ हाँकहु ताता । आन उपाय बनइ नहिं बाता'
वनगमन के अंतिम प्रयास स्वरूप कि पिता के कहने पर सीता न जायँ प्रभु के साथ....
**'पितु सँदेस सुनि कृपानिधाना । सियहि दीन्ह सिख कोटिविधाना'**
लेकिन सीता जी ने भी प्रभु की करुणा को ढाल बना कर अपनी बात रखी...
**प्रभु करुणामय परम विवेकी । तनु तजि रहइ छाँह किमि छेकी!**
**कहकर आत्मरक्षा की ।**
**'प्राननाथ करुनायतन सुंदर सुखद सुजान ।**
**तुम्ह बिनु रघुकुल कुमुद विधु, सुरपुर नरक समान ॥'**
तुलसी ने कृपा से मंडित न जाने कितने पदबंध रचे हैं कृपाधाम को देखिये...
**'वरदायक प्रनतारति भंजन । कृपासिंधु सेवक मन रंजन ॥'**
———
**सुनत विभीषन वचन राम के । हरषि गहे पद कृपाधाम के ॥**
कृपाधाम ही तो करुणा कर सकते हैं सो तुलसी लिखते हैं
**अवधि अंब प्रिय परिजन मीना । तुम करुणाकर धरम धुरीना ॥**
भरत जी की आतुरता करुनासागर के बिना कैसे व्यक्त हो सकती है...
**'जेहि विधि प्रभु प्रसन्न मन होई । करुनासागर कीजिअ सोई ॥**
जब चरणपादुका मिल जाती हैं तो भरत जी का संतोष देखें
**चरनपीठ करुनानिधान के । जनु जुग जामिक प्रजा प्रान के ॥**
बहुत सुखद है, सार्थक हैं समस्त विशेषण किन्तु –'करनाऐन' तो अद्भुत है....
**वेद वचन मुनि मन अगम ते प्रभु करुना ऐन ।**
**वचन किरातन्ह के सुनत जिमि पितु बालक बैन ॥**
क्या ही सुखद पितृत्व और लोकरक्षक का भाव है । इसी प्रकार विश्व विश्रुत केवट संवाद में भी भावुक कर देने वाली मुद्रा में तुलसी सोरठा लिखते हैं....
**सुनि केवट के बैन, प्रेम लपेटे अटपटे ।**
**बिहसे करुना ऐन चितइं जानकी लखन तन ॥**

अहोभाव के साथ अनेकानेक विशेषणों की सटीक प्रयुक्ति भावदशा को परिपक्व करती हुई, अद्भुत रसवर्षण करती है। राम के करुनानिधान विशेषण की विशिष्ट ही गाथा है... जगज्जननी पार्वती जी ने वरदान में सायास कहा... !
**'मन जाहि राँचेहु मिलहि सो वर सहज सुंदर साँवरौ**
**करुनानिधान सुजान शील सनेह जानत रावरौ ॥'**

'जनकसुता जगज्जननि जानकी, अतिसय प्रिय करुनानिधान की' ने यह विशेषता अन्तस्तल में बसा ली और हनुमान जी को भी अपना परिचय देने कि लिये कहना पडा...
रामदूत मैं मातु जानकी, सत्य सपथ करुनानिधान की ॥
आगे भी अनन्य भक्ति के संदर्भ में कहा है...
एक बानि करुनानिधान की, सो प्रिय जाके गति न आन की ॥
और इसी प्रकार अनन्या को परिभाषित करते हुये कहा ..
**सो अनन्य जाके इस मति न टरइ हनुमंत ।**
**मैं सेवकु सचराचर रूप स्वामि भगवंत ।।**

मनोभावों की पारदर्शिता और आतुरता का मनोवैज्ञानिक और सहज निदर्शन हुआ है । प्रणतपाल , शरणागत वत्सल प्रभु की करुणा से मानो शब्द – शब्द ओत – प्रोत हो गया है । भाव विह्वल भक्तमना प्रभु प्रेमी जन बारंबार करुणा सागर, करुणा निधि, करुणाकंद, करुणा भवन, करुणायतन, करुणा सिंधु, कृपानिधि, करुणा पुंज, करुणाकर, करुणामय, करुणानयन, कृपाधाम, कृपासिंधु और करुणासींव कहकर मानो हृदय कमल की पाँखुरियों को प्रभु के कर कंज ज्पद कंजारुणम् के लिये पलक – पाँवड़े की भाँति बिछा दिया है। कहना ये है कि ये करुणानिधि की करुणा का सागर अहर्निशि भक्त जन – मन रंजन बने रहते हैं ये उत्स भी भक्त मन की मधुकरी सा ही है। परस्पर अनुराग की परावर्तित किरण राशि भक्तों से भगवान तक और भगवान से भक्तों तक पहुँचती रही है।
'नील सरोरुह नील मणि नील नीरधर स्याम' के कोटि –कोटि सत काम लजाने वाले रूप की रश्मियाँ जनकपुर वासियों को 'मनहु रंक निधि लूटन लागे' की स्थिति में पहुँचा देती हैं । सीय स्वयंवर में धनुष – यज्ञ की रंगस्थली पर भी 'जाकी रही भावना जैसी । प्रभु मूरत देखी तिन्ह तैसी' और...
**जो सुख भा सिय मातु मन, देख राम वर वेषु ।**
**सो न सकहिं कह कलप सत सहस सारदा सेषु ॥**
प्रभु के तन की दिव्यता और मन का औदात्य देखने वाले के हृदय में सारल्य, तारल्य की गरिमा और करुणा की सौम्यता का प्रकाश अद्भुत आवेश भर देता है। रामचरितमानस हो या कवितावली के अनेक प्रसंग ऐसे हैं जहाँ प्रभु श्रीराम स्वयं अश्रुविगलित हो जाते हैं ; ऐसे प्रसंगों का प्रभाव भक्त और भगवान दोनों को करुणाद्रवित कर जाते हैं।
वनवास की अवधि के प्रारंभ में ही मानसकार ने वनवासियों के हृदय का जो वर्णन किया है, वह करुणाकलित भावों का स्वर्ग है । गाँव के निकट से निकलते हैं तो पुरजन को लगता है 'लहि जनु रंकहि सुरमनि ढेरी ।' ग्राम वासियों का मन विह्वल तन शिथिल है...
**एक देखि बट छाँह भल डासि मृदुल तृन पात ।**
**कहहिं गवाँइअ छिनकु श्रमु गवनब अबहिं कि प्रात ॥**
एक कलस भरि आनहिं पानी । अँचअइ नाथ कहहिं मृदु बानी
सब सुन–सुन कर करुणासागर श्रीराम उनके हाव–भाव और पारदर्शी निश्छल से, द्रवित से मन को देख स्वयं भी भावुक हो जाते हैं । कहते हैं ब्रह्म के मन ही नहीं पर ये तो राम ब्रह्म परमारथ रूपा'' हैं न... !
**''राम लखन सिय सुंदरताई । सब चितवहि चित मन मति लाई''**
जब मन चित बुद्धि राम रूप में लीन हो जाये तो अहंकार कहाँ रह सकता है। प्रभु को यही खोया– खोया सा मन अर्पित करना ही तो रुचता है... – 'मय्यावेश्य मनो' और 'मच्चित्ता मद्गतप्राणा'
कहकर बार – बार श्रीमदभगवद्गीता में सचेत किया है ।
पुरजन का मंत्रविद्ध सा मन अपने साथ लिये प्रभु, सीय– लखन के साथ वनपथ पर आगे बढ़ जाते हैं ।

'फेरे सब प्रिय वचन कहि लिये लाइ मन साथ' प्रभु सबके मन को अपने साथ ले चले जो राम रूप अनुरागी बहे – बहे से साथ छोड़ना न चाह रहे । यह भक्तबस्य द्रवीभूत हो जाना ही करुणानिधान की करुणा का उत्स है । अखंड आनंद का स्रोत है करुणा ! तभी तो करुण भाव के रस विशेष होने की संज्ञा सार्थक है । ऐसे 'अमर अनंत बटोही' होने का भाव रखा है मानसकार ने...

**'जिन्ह जिन्ह देखें पथिक प्रिय सिय समेत दोउ भाइ।**
**भव मग अगम अनंदु तेइ , बिन श्रम रहे सिराइ ॥'**

तुलसी ने बारंबार 'श्रमित सिय जानी' का उल्लेख कर के करणानिधान राम की करुणा का उत्स वर्णन किया है । कवितावली में तो

**पुर ते निकलीं रघुबीर वधू, धरि धीर दये मग में डग द्वै ।...**
**तिय की लखि आतुरता पिय की अँखियाँ अति चारु चलीं जल च्वै।**

यही नहीं मानस में वनवासी किरात, कोल–भील श्रीराम को क्या–क्या प्रस्ताव देते हैं.... हमें अपने साथ ले चलिये, हम अगम रास्ता बता देंगे, सिंह आदि से बचा लेंगे, आखेट सिखा देंगे और झरने आदि बता देंगे। तभी तुलसी कह उठते हैं 'वचन किरातन्ह के सुनत जिमि पितु बालक बैन' ये करुण रस की स्रोतस्विनी भक्त मन के गहन वनों से निकली हैं, जहाँ सूर्यवंशी राजकुमार हिय गह्वर में अटक – भटक जाते हैं... ! मानो अपनी करुणा के गह्वर का उत्स खोजने ही वनपथ पर आये हों; पिता वचन निर्वाह का तो बहाना है।

भायप भक्ति के शिखर भरत मन की दशा ही करुणानिधि की करुणा का पावन मनभावन उत्स है। भरत का मन भावों की सूक्ष्मदर्शी लिये राम के वनगमन ते समय दु:खों की राह के कुश कंटक देखता है...

**अजिन वसन फल असन महि सयन डासि कुस पात।**
**बसि तरुतर नित सहत हिय आतप बरषा बात ॥**

प्रभु करुणाअयन हैं, अन्तरयामी हैं सो भरत के मन की यह दसा राम तक पहुँची है और राम ने करुणा करके धरती से प्रार्थना भी की है कि कुस कंटक समेट लेना ताकि भरत ये न जान सके कि हम किस मार्ग से आये हैं।

तुलसी लिखते हैं **'तस मग भयउ न राम कहँ जस भा भरतहि जात ॥'** चित्रकूट वासियों का अमिय भाव–अनुराग भी कृपासागर की कृपा का उत्स है

**तुम प्रिय पाहुने वन पग धारे। सेवा जोग न भागु हमारे**
**पाप करत निसि बासर जाहीं। नहिं पट कटि नहिं पेट अघाहीं।**
**सपनेहु धरमबुद्धि कस काऊ ॥ यह रघुनंदन प्रगट प्रभाऊ ॥**

'प्रभु अन्तरयामी सब जानी' प्रभु के पावन नयन वनवासियों के औदात्य भाव को पढ़कर भाव विह्वल और करुणा –शबल हो जाते हैं।

जैसे सीता जी की खोज से लौटे हनुमान से कहते हैं...

**'प्रति उपकार करौं का तोरा । सनमुख होय न सकत मन मोरा'** और तुरंत बेटा बना लेते हैं **'सुनि सुत तोहि उरिन मैं नाहीं ॥'**

क्योंकि शबरी प्रसंग में प्रभु राम उद्घोष कर चुके हैं **'कह रघुपति सुन भामिनि बाता। मानहुँ एक भगति कर नाता ॥'** इसी करुणा के वशीभूत सुग्रीव से मिताई की और आश्वस्त किया...

**सखा सोच त्यागहु बल मोरे। सब बिधि घटब काजु मैं तोरे ॥**

करुणामय की करुणा से समुद्र ने अपनी गति बदल दी... सिंधु तरे पाषाण क्योंकि करूणानिधि, तारणहार है। पाहन तैरना तो सांकेतिक बात है। असली संकेत तो यह है कि राम नाम लेने वाला, लिखनेवाला, अपने सीस पर धारने और हृदय में बसा लेने वाला युगों–युगों तक डूबेगा नहीं और बिना यान के भवसिंधु पार कर जायेगा।

**''अस मानस मानस चख चाहीं। भइ कवि बुद्धि विमल अवगाहीं''**

सत्य ही तो है। श्री राम अपने भक्तों के निर्मल मन के दर्पण हैं, भाव लहरों के साक्षी हैं। पल–पल भक्त मन की आतुरता, समर्पण और अनन्य भक्ति के गवाह हैं ; भावों ग्राही हैं बिना कानों के भक्त के हृदय के गहनतम प्रकोष्ठ की धड़कनों को सुनते हैं और प्रतिक्रिया स्वरूप करुणा की सुरसरि प्रवाहित कर देते हैं। करुणाकर के ही शबरी, गीध, सुसेवकों को मुनि दुर्लभ गति प्रदान की। जानकी की खोज से पहले ऋषि मुनियों के आश्रम में जाकर अवतार कार्य किया, सुग्रीव का कष्ट हरण किया। मानस के मार्मिक स्थलों में चित्रकूट प्रसंग में भरतवाँछा पूर्ण करने से लेकर प्रत्येक प्रसंग में केवल और केवल करुणा ही व्याप्त हैं । करुणा की पराकाष्ठा के रूप में क्योंकि राम तो करुणासींव हैं। ऐसे परम कृपालु करुणासिंधु राम ने रावण जैसे शत्रु के मन को पढ़ा। अपने मनोमंथन में रावण सोचता है, जो प्रभु से छिपा नहीं रहता... !

**खरदूषण मोहि सम बलवंता । तिन्हहि को मारइ बिनु भगवंता ॥**
**सुर रंजन भंजन महि भारा। जो भगवंत लीन्ह अवतारा ॥**
**तो मैं जाय बैर हठि करऊँ। प्रभु सर प्रान तजे भव तरऊँ ॥**

करुणासिंधु ने मन की बात जानी और ज्.युद्ध के समय रावण मरकर प्रभु में समा गया।

**तासु तेज समान प्रभु आनन।**

ऐसे हैं करुणा निधान भगवान । रावण भी जिन्हें अपशब्द न कह पाया क्योंकि करुणासागर प्रभु 'जासु सुभाव अरिहि अनुकूला' हैं। दसानन भी उन्हें तापस ही कह सका। वानर भालु सबको पुनर्जीवन दिया। अवध लौटते समय प्रेमातुर अवधवासियों के लिये....

**अमित रूप प्रगटे तेहि काला । जथाजोग मिले सबहि कृपाला ॥**

अंत मैं करुणा की एक और कथा शंभु कहते हैं...

**प्रभु जानी कैकेयी लजानी। प्रथम तासु गृह गये भवानी ॥**

सबसे पहले भरत जी की जटाओं को खोला...

**पुनि करुनानिधि भरत हँकारे। निज कर राम जटा निरुआरे ॥**

ऐसे हैं करुणाकंद, आनंदकंद, सच्चिदानंद प्रभु श्री राम जो युगों–युगों से मानव हृदय की पंखुरी–पंखुरी पर करुणा के हस्ताक्षर कर गिरा को भाव गद्गद करते रहे हैं; जिनके चरित पाठ और स्रवन से मुनि मन ही नहीं विधि और संभु की समाधि लगती हैं। जन – मन रंजन, भव भय भंजन राम की करुणामंडित चरित सुन नयन जल रोके नहीं रुकता। सात्विक अश्रु मन को निर्मल करने का अनवरत प्रयास करते हैं क्योंकि प्रभु ने कहा **'निर्मल मन जन सो मोहि पावा'** और निर्मल मन के यही जन–जन करुणानिधान की करुणा का उत्स हैं।

लेखिक वरिष्ठ साहित्यकार हैं।
प्राध्यापक , ग्वालियर

■

# गोण्ड जनजाति की मौखिक परम्परा में राम

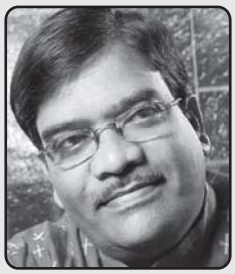

लक्ष्मीनारायण पयोधि

रामकथा दुनिया के अनेक देशों में लोकप्रिय है। श्रीराम की ख्याति अनुकरणीय मानवीय गुणों से युक्त एक आदर्श चरित्र के रूप में है। विभिन्न रामकथाओं के वे एक धीरोदात्त नायक और मर्यादा पुरुषोत्तम के पर्याय हैं। कतिपय पुराणों में उन्हें भगवान विष्णु का अवतार माना गया है।

वायुपुराण के अनुसार:

**त्रेतायुगे चतुर्विंशे रावणस्तपसः क्षयात्।**
**रामं दाशरथिं प्राप्य सगणः क्षयमीयवान्।।**

अर्थात् आचरण से पतित होने के कारण रावण चौबीसवें त्रेतायुग में दशरथनंदन श्रीराम के हाथों युद्ध में बन्धु-बान्धवों सहित मारा गया।

इस श्लोक के अनुसार श्रीराम ने चौबीसवें त्रेतायुग यानी लगभग एक करोड़ इक्यासी लाख उनन्चास हज़ार से कुछ अधिक वर्षों पूर्व भारत में जन्म लेकर रावण-वध के बाद रामराज्य के रूप में एक आदर्श शासन-व्यवस्था की स्थापना की थी। यह काल-गणना हमें इस निष्कर्ष पर पहुँचने में भी सहायता करती है कि इतिहास-पुरुष श्रीराम ने भारतभूमि के अनेक क्षेत्रों में उद्देश्यपूर्ण प्रवास किया है,जिसके साक्ष्य जनजातीय मौखिक साहित्य में भी मिलते हैं।

वाल्मीकि रामायण प्रसिद्धि रामकथा के आधार-ग्रन्थ के रूप में भी है,क्योंकि गोस्वामी तुलसीदास कृत रामचरित मानस सहित अनेक ग्रन्थ इसी रामायण की मूलकथा पर केन्द्रित हैं। यद्यपि विभिन्न भाषाओं की रामकथाओं के प्रसंगों में क्षेत्रीय परिस्थितियों, जीवनशैलियों और सांस्कृतिक मान्यताओं के अनुरूप भेद भी मिलते हैं। इस प्रसंग में सर्वाधिक रोचक कथारूप गोण्ड जनजाति के विभिन्न समुदायों की मौखिक परंपरा में सुने जा सकते हैं।

छत्तीसगढ़ राज्य का बस्तर अंचल दण्डकारण्य के नाम से विख्यात रहा है। यह वही क्षेत्र है,जहाँ श्रीराम ने सुग्रीव की सहायता से सैन्य-संगठन किया था। इसी क्षेत्र से होकर श्रीराम लंका की ओर गये थे। बस्तर (दण्डकारण्य) के वनवासियों ने श्रीराम से संपर्क की स्मृतियों को अपने पारंपरिक गीतों और कथाओं के माध्यम से ताज़ा करते हैं। गोण्ड जनजाति की मौखिक परंपरा में सदियों से यह सुझाव यात्रा कर रहा है कि:

**राम पोरोय ता गुन भारी,**
**इदे गुन गूने कीम संगवारी।**

अर्थात् रामनाम के गुण असीम हैं, इसलिये ओ साथी,इन गुणों का स्मरण करते रहो।

बस्तर की परजी बोली में युवक-युवतियों द्वारा गाये जाने वाले एक पारंपरिक 'मुदी माँगनी गीत' में सीता जन्म के संबंध में प्रश्नोत्तरी मिलती है। मिसाल के तौर पर:

**युवक - सिलाह बेले नाना भे तो ले दय सीताबाई आरे लो आरेन अवतार हेरी में दूँगे के तो ले दाय ?** (सीताबाई ने कहाँ जन्म लिया था ?)

**युवतियाँ - सिलाह बेले नाना भे तो ले दाय सीताबाई आरे नों आरेन अवतार हेरी में नोंई बेराड में नाया गट ?** (सीताबाई ने कहाँ जन्म लिया था, मैं कैसे बता सकती हूँ ?)

**युवक - सिलाह बेले नाना भे तो दाय सीताबाई भूमू पूटून अवतार हेरी में दूँगे।** (सीताबाई ज़मीन फाड़कर अवतरित हुई थी।)

**युवक - सिलाह बेले नाना भे तो ले दाय सीताबाई गों नाथों गियान हेदात बत्तीस बाँधन गेंडागों काटू एन हेनी नाना हेनी पीको मोंगे।** (सीताबाई बोल रही है कि बत्तीस बाँधन का एक शहर बनाऊँगी।)

- **सिलाह बेले नाना भे तो ले बत्तीस बाँधन गेड़ा डो तो हेरोड नाथे नावे दाय सीताबाईन पोटे हेरी में।** (बत्तीस बाँधन का शहर बनाने से सीताजी के गर्भ से कौन जन्म लेगा ?)
- **सिलाह बेले नाना भे तो ले दाय सीताबाईन गो पोटे नाना रामू गोल लछमन आवतार हेरी गो मेरी वेराड मेना रगाट।** (सीताबाई के गर्भ से राम-लक्ष्मण के प्रतिरूप लव-कुश का जन्म होगा।)

निश्चय ही यह गीतकथा संक्षेप में सीता के दैवीय व्यक्तित्व पर प्रकाश डालता है। रामकथा से प्रेरित और प्रभावित अनेक गीत और कथाएँ गोण्डी परंपरा में आज भी विद्यमान हैं।

मध्यप्रदेश के डिण्डौरी क्षेत्र में झाड़-फूँक के समय देवी-देवताओं का आह्वान (सुमरनी) करते हुए गाते हैं:

**तीन लोक चवदा भुवन के देवतन सुमरौं/अवधपुरी के राम-लछमन का सुमरौं/भरत-सतरुगन चारों भाइन सुमरो/ जनकपुरी के सीता माई, सुरतीकीरति, उरमिला, माडवी, चारों मइयन को सुमरौं।** यानी कि तीन लोक-चौदह भुवनों के देवताओं सहित

अवधपुरी के राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न आदि चारों भाइयों और जनकपुरी की सीता माई, श्रुतिकीर्ति, उर्मिला, माडवी आदि चारों माताओं का स्मरण करता हूँ।

'ददरिया' गायक राम वन-गमन को आलाप के साथ कुछ इस प्रकार याद करता है:

**रामा रामा रामा लखन सिया रामा/भरत भैया मोर राम जाथै/ बन का खिलौना बन के रे दोस।** अर्थात् ओ भरत भैया,मेरे राम खिलौने की तरह लखन और सीता के साथ वन जा रहे हैं।

'सीता-हरण' का प्रसंग भी ददरिया का हिस्सा है:

**राम धरै धन हू लखन धरै बान... सिया माइके/खरब मा राम चलीने हनुमान... सिया माइके।** अर्थात् रामजी धनुष और लक्ष्मणजी बाण लेकर हनुमान सहित सीता माई की खोज में निकल पड़े हैं।

**कपटी रे मिरगा मारे है छलांग/बोला देखिके रामजी के करे है पैगाम।** यानी,कपटी अर्थात् मायावी मृग छलांग मारकर रामजी के सामने से पैगाम देता निकल गया है।

**आये है रावन झोली ला धररिके/सीता भिच्छा देथै पकर लई गै गा।** अर्थात् रावण झोली लेकर आ गया और भिक्षा देती सीताजी को उठाकर ले गया।

सीता माई की खोज में जाते राम-लक्ष्मण की दशा का वर्णन करते हुए 'खलती' का गायक कहता है

**अस्सी कोस लंका के जावैया सोसवाना/अबेर होयगे रात के चलाना।**

**हाथन मा उजियार नइंआय/पाँवन नइंआय पनही/जहाँ-तहाँ तयं ठोकर खाथस गिरत जाइहीं/अबेर होयगे रात के चलाना। काँटा गड़गै, खूँटी गड़गै,जीव मा दहल तो आये/सबली रात विपत परगै, अब कैसे घर में जाये ?/अबेर होयगे रात के चलाना।**

भावार्थ यह है कि अस्सी कोस दूर लंका जाने वाले ओ दयालु,तुम्हें बहुत देर हो गयी है। रात के समय चले जा रहे हो। तुम्हारे हाथ में प्रकाश का कोई साधन और पैरों में चप्पल भी नहीं हैं। काँटे चुभ रहे हैं जहाँ-तहाँ ठोकर खाकर गिर पड़ते हो। मन में संशय और डर है। अचानक विपत्ति से घिर गये हो। ऐसे में घर भी नहीं जा सकते। तुम्हें जाने में देर हो गयी है। यह रात का समय है।

इस गीत में लंका की दूरी अस्सी कोस बतायी गयी है,जो लंका की भौगोलिक स्थिति का अनुमान लगाने में सहायक है। इसी प्रकार का

वर्णन 'भलवा फूँकै मंत्र' में भी मिलता है:

**अस्सी कोस रहय रावण के बारी/जहाँ लगय भलवादार रानी...** यानी, रावण का उपवन अस्सी कोस दूर है,जहाँ भिलवारानी का वृक्ष है।

गोण्ड जनजाति के ये पारंपरिक गीत श्रीराम-रावण से संबंधित ऐतिहासिक साक्ष्यों को खोजने और उनकी पुष्टि करने के लिये सूत्र उपलब्ध कराते हैं।

गोण्ड जनजाति के परधान समुदाय द्वारा पारंपरिक बानावाद्य के साथ गायी जाने वाली 'रामायनी' वास्तव में एक पुरातन मौखिक महाकाव्य है। इस अद्भुत रामकथा के नायक लक्ष्मण हैं। यह वाल्मीकि रामायण और अन्य सुपरिचित रामकथाओं से भिन्न है। इसमें जो प्रसंग मिलते हैं, वे अन्य सभी रामकथाओं में दुर्लभ हैं। यहाँ अधिक विस्तार में न जाते हुए उदाहरण के लिये केवल 'सीता वनवास' के प्रसंग का उल्लेख करना पर्याप्त होगा। परधान गायक कुछ इस प्रकार प्रसंग का आरंभ करता है:

**राजा रामचन्दर के अक ठन बहनी रहय। ओखर नाव रहय कारीअंजनी।कारीअंजनी बहाये रहय रैयापत राज मा।अक दिन कारीअंजनी सोचथैं अपन मन मा, बहोत दिना भै गैंन भाई-भौजाई ला नहीं देखे आँव। ऐसना सोच करथै कारीअंजनी अपन मन मा होह्यह्य..../चली देख आतौं/चटुक देख आतौं/भाई-भौजाई ला/वा लछमन भाई ला/बहोत दिना भै गैंन....**

यह कथा पारंपरिक गाथा-गायन शैली में अपनी पूरी रोचकता के साथ आगे बढ़ती है। कथासार यह है कि राम रावण-वध के बाद सीता और लक्ष्मण के साथ अयोध्या आकर राजकाज सँभाल लेते हैं। समय अपनी गति से चल रहा है और सब ओर आनंद है। ऐसे में एक दिन रैयापत राज्य में ब्याही गयी राम की बहन कारीअंजनी सोचती है कि भैया-भाभी और लक्ष्मण को देखे बहुत दिन हो गये हैं,जाकर उन्हें देख आना चाहिये।वह तैयार होकर बदन महल पहुँच जाती है।सैनिक दौड़कर राजा रामचन्द्र को सूचना देते हैं। रामजी उनके चरण-स्पर्श कर उन्हें महल में ले जाते हैं।

बहन का उचित सत्कार करने के विचार से एक दिन राम और लक्ष्मण हिरण का आखेट करने जंगल जाते हैं। इधर घर में कारीअंजनी सीताजी से पूछती हैं कि ''ऐ भौजाई,तुमको रावण हरण कर ले गया,तुम बारह वर्ष लंका में रही। कुछ बताओ तो कि उस रावण का रूप कैसा था ?'' इस पर सीताजी रावण के रूप का वर्णन करती हैं कि ''वह बहुत भयंकर था। उसके दस सिर और बीस भुजाएँ थीं। पहाड़ जैसा उसका

शरीर था। गुफ़ाओं दजैसे उसके कर्णछिद्र और सुरंगों जैसे उसके नथुने थे। काली चट्टान जैसा उसका माथा था,अब और क्या बताऊँ?'' इस पर कारीअंजनी कहती है कि ''ऐसे नहीं, दउसका पुतला बनाकर बताओ!'' फिर दस-बारह खंडी आटा और चावल मँगवाया गया और उससे सीताजी ने रावण का वैसा ही पुतला बनाया। रावण का प्रतिरूप देखकर ननद-भौजाई उसी में खो गयीं।

राम-लक्ष्मण मृग का शिकार कर घर लौटे। उन्होंने दरवाज़े से सीताजी को आवाज़ दी। उत्तर नहीं मिला। रामजी ने लक्ष्मण को वस्तुस्थिति समझने के लिये भीतर भेजा। लक्ष्मण के भीतर जाते ही रावण का पुतला जीवित हो उठा। लक्ष्मण के क्रोध की सीमा नहीं थी। रावण युद्ध के लिये ललकार रहा था। सीताजी ने लक्ष्मण को तलवार दी। लक्ष्मण रावण के एक-एक अंग को काटते जा रहे थे और उसके रक्त की प्रत्येक बूँद से एक रावण उठ खड़ा हो रहा था। सीताजी ने लक्ष्मण को उपाय बताया कि एक-एक रावण को उठाकर अंधे कुएँ में डाल दो। लक्ष्मण ने सबको अंधे कुएँ में डालकर उसे भारी चट्टान से बंद कर दिया।

खून से लथपथ लक्ष्मण भैया के पास आये तो रामचन्द्रजी उनकी दशा देखकर काँप गये। लक्ष्मण से सारा वृत्तांत सुनकर रामजी गुस्से से थरथराने लगे। उनकी आँखों से चिनगारियाँ और मुँह से झाग निकलने लगा। सिर से दो-चार बाल टूटकर गिर पड़े। अनुज लक्ष्मण भैया का गुस्सा ठंडा करने के उद्देश्य से उन्हें फुलवारी में ले गये। उस बगीचे में तालाब के किनारे धोबी-धोबिन आपस में झगड़ रहे थे। धोबिन कहने लगी-''मुझे नहीं रहना तेरे साथ। तेरे जैसे बहुत मिल जायेंगे।'' इसके जवाब में धोबी कह रहा था-''तू जा! मैं तेरे पैर नहीं पड़ने वाला। मैं राजा रामचन्द्र नहीं,जिन्होंने पत्नी के मोह में लंका में इतने दिन तक रहने वाली सीता को वापस ला रानी बनाकर रख लिया।'' पहले ही क्रोध में तप रहे रामचन्द्र धोबी की बात सुनकर दुखी और विचलित हो गये और उन्होंने लक्ष्मण को आज्ञा दी -''भाई,सीता को जंगल ले जाकर मार दो।'' भैया की आज्ञा का पालन करने के लिये लक्ष्मण सीताजी को बहलाकर जंगल ले गये। वहाँ प्यास लगने पर लक्ष्मण पानी लेने गये और थकी हुई सीताजी पेड़ की छाया में सो गयीं। लक्ष्मण को यह पता चलने पर कि भाभी गर्भवती हैं, पानी का कलश सोती हुई सीताजी के पास रखकर वे महल लौट आये। भैया से झूठ बोला कि भाभी को मार दिया। कुछ कृत्रिम साक्ष्य उनके सामने रख दिये, जिन्हें बिना देखे ही रामजी ने मान लिया कि सीता अब नहीं रही।

उधर जंगल में दो बाबा सीताजी का परिचय पाकर उन्हें अपने आश्रम ले गये। वहाँ लव का जन्म हुआ। लव को झूले में न पाकर बाबा द्वारा कुश के तृण को अभिमंत्रित कर एक शिशु को जन्म दिया गया। लव-कुश आश्रम में बड़े होकर शिकार के दौरान जंगल में राम-लक्ष्मण से मिलते हैं। रामजी यह जानकर कि वे उनके पुत्र हैं और सीता जीवित हैं, राम प्रसन्न होते हैं। राम-लक्ष्मण लव-कुश के साथ सीताजी के पास जाते हैं। सीताजी उन्हें देखकर अपने परित्याग का स्मरण कर पाताल की ओर भागती हैं। रामजी उनके पीछे दौड़ते हैं। भागती हुई सीताजी की चोटी पकड़ में आती है। वही उखड़ी हुई चोटी 'सीता की लट' नामक साँप बन जाती है, जो वर्षा ऋतु में निकलता है। अंत में रामजी सीताजी की दोनों बाँहें पकड़कर ऊपर खींच लेते हैं। सीताजी को मनाकर बदन महल वापस लाया जाता है। प्रजा आनंदित होती है और कथा का सुखांत होता है। इस कथा में श्रीराम के महल का नाम ज्ञात होता है।

प्रचलित रामकथाओं से भिन्न सीता वनवास की यह कथा जनजातीय परिवेश, संवेदना और कल्पनाशीलता के अनुरूप सकारात्मक बिम्बों का सृजन करती है,जो अत्यंत सुखद है।

लेखक वरिष्ठ साहित्यकार एवं जनजातीय अध्येता है।
ए-1,लोटस,स्प्रिंग वैली,कटारा हिल्स,बाग़मुग़ालिया,
भोपाल - 462043 (मध्यप्रदेश)
मो. 8319163206

जब हम अच्छा खाने, अच्छा पहनने और अच्छा दिखने में खर्च करते हैं
तो अच्छा पढ़ने-लिखने और सोचने-समझने की खुराक में खर्च क्यों न करें!

कलासमय

प्रबंध संपादक

सम्पर्क- जे-191, मंगल भवन, महावीर नगर, ई-6, अरेरा कॉलोनी, भोपाल- 462016 फोन : 0755-2562294, मो.-94256 78058
ई-मेल : kalasamaymagazine@gmail.com / bhanwarlalshrivas@gmail.com

आलेख

# बहुआयामी राम की अविराम यात्रा

– नर्मदा प्रसाद उपाध्याय

राम अविराम हैं। वे समाधि में गति का अनुभव हैं, ध्यान की स्थिर सतह पर उनकी स्मृति नृत्य करती है, उनका स्मरण मानस की सपाट धरती पर दौड़ता है और उनकी लीला हरिण की कुलांच और पंछी की उड़ान बनकर पुतलियों में अवतरित होती है।

राम की कथा युग युग से गाई जाती रही है,उसका गान कभी थमा नहीं,उसके इतने आख्यान हुए जितने किसी दूसरी कथा के नहीं हुए और इसका परिणाम यह हुआ कि राम अविराम हो गए। इस अविराम की कथा का क्या औचित्य ? इसलिए कि राम को देखने की दृष्टि का औचित्य है और वह दृष्टि यह है कि राम प्रतीक नहीं विश्वास व्यक्तित्व हैं, राम यात्री नहीं जीवन की यात्रा हैं। वे मर्यादा के मौन हैं। मर्यादा स्वयं नहीं बोलती, जग बोलता है। लक्ष्मण रेखा की मर्यादा भंग हुई तो जग बोला, राम नहीं बोले। इसलिए राम मर्यादा के अलंकार हैं। मर्यादा उनसे शोभा पाती है।

राम जीवंत हैं। जिन्होंने अपने पांव के स्पर्श से पाषाण को मानवी रूप में परिवर्तित कर दिया हो वे कैसे पत्थर के हो सकते हैं ? इसलिए हमारी आस्था राम को सजीव स्वरूप में पूजती है। रूप जड़ हो सकता है, स्वरूप नहीं।

राम इसलिए अविराम हैं क्योंकि वे सतत यात्री हैं। उनकी यात्रा कभी विराम नहीं पाती, उनके पांव कभी नहीं थमते और पथ राम को आगे नहीं ले जाता वे उसे आगे ले जाते हैं। इसलिए राम पथ भी हैं, पथिक भी और पाथेय भी।

राम की यही गति हमारी धरोहर है जिसे हमारे पुरखों ने शिल्प और चित्रांकन जैसे अनुशासनों में जतन से प्रतिष्ठित किया है और सहेजा है।

राम, भारतीय अस्मिता के राग हैं। इस राग के बिना प्रत्येक भारतीय का जीवन संगीत सूना है। यह राग हमारे आचरण में पीढ़ियों से संस्कार के रूप में प्रतिष्ठित है। यह राग न हो तो जीवन न हो, वह जीवन जिसे हम जीना चाहते हैं। इसलिए राम इस देश के प्राण हैं, स्पंदन हैं, ऐसे ईश्वर हैं जो पूरी तरह मानवीय हैं और ऐसे मानव हैं जिनमें हम ईश्वर के दर्शन करते हैं। संसार में ऐसा कोई दूसरा उदाहरण नहीं है।

कभी–कभी किसी की सांसों का थम जाना आने वाले समूचे युग की धड़कनों का इतिहास के हृदय में बस जाना हो जाया करता है। ये धड़कनें कभी थमती नहीं हैं। वह मिथुनरत क्रौंच, जिसकी सांसें बहेलिये के तीर से तमसा के तट पर सदैव के लिए थम गईं वही सांसें आने वाले युगों के काव्य की धड़कनें बन गईं। वाल्मीकि की रामायण इन्हीं धड़कनों का रुपायन है।

रामायण केवल ऐसे ईश्वर की जो युगपुरुष था, शौर्य गाथा या उनसे जुड़े प्रसंगों की कहानी भर नहीं है। बल्कि वह करुणा के स्रोत की शाश्वत पहचान है। राम के अवतार का मर्म बहुत कम समझा गया। जिस राजा के सामने उसके ही पुत्र, उसकी ही शौर्य गाथा संत–पुत्रों के रूप में दरबार में गाएं और वह उन्हें पहचान भी न पाए, जो अपने पिता का सबसे बड़ा पुत्र हो और जिसे स्वत: ही राज्य पाने का अधिकार हो उसे अपनी कोमल और निर्दोष पत्नी के साथ वन–वन भटकना पड़े, अपनी पत्नी के अपहरण की पीड़ा से गुज़रना पड़े, उसे पाने के लिए रावण जैसे असीम बलशाली से युद्ध करना पड़े, पवित्रता की प्रतिमान अपनी पत्नी को अग्नि के बीच प्रविष्ट हो उसे अपनी पवित्रता को सिद्ध करने का निर्देश देने का कठोर कर्म निभाना पड़े, राज्य मिल भी जाए तब केवल लोक के झूठ की रक्षा के लिए अपनी पत्नी को वन में सदैव के लिए भेजना पड़े, यदि ऐसा समय आए कि पुत्र मिल जाएं और पत्नी मिल जाए लेकिन फिर सदैव के लिए अपनी पत्नी को अपनी आंखों के सामने धरती के गर्भ में समाते देखने को विवश होना पड़े तो फिर इससे अधिक विवश और करुण जीवन किस मनुष्य का हो सकता है ? यही करुणा रामायण के काव्य का मर्म है।

राम यों तो कथा के माध्यम से आते हैं लेकिन फिर कथा पीछे रह जाती है और राम ही कथा और कथानक दोनों हो जाते हैं।

इस प्रश्न का अभी तक समाधान नहीं हो पाया कि यह कथा कितनी पुरानी है। इस संबंध में प्रख्यात ललित निबंधकार तथा संस्कृति विचारक श्री कुबेरनाथ राय ने अपनी कृति 'रामायण महातीर्थम्' में विस्तार से विचार किया है। उनका यह कहना है कि रामकथा का सबसे पुराना और स्पष्ट प्रमाण 'दशरथ जातक' है जो मूल रूप में 4–5 श्लोकों को छोड़कर अप्राप्य है। यह जातक ईसा पूर्व चौथी शताब्दी का है। इसका दूसरा रूप चीनी भाषा से अनूदित है जो ईसा की पहली सदी का है तथा ईसा की पहली सदी में ही रामायण की कथा का समूह पाठ जैन संत विमलसूरि के ग्रंथ 'पउम चरिउ' से प्रमाणित होता है। इन तथ्यों के आधार पर उनका यह मानना है कि ईसा की पहली सदी से बहुत पूर्व रामकथा ने अपनी महिमा को न केवल ग्रहण कर लिया था अपितु अन्य सम्प्रदायों ने भी इसका वरण कर लिया था

इस परिप्रेक्ष्य में रामचरित् की प्राचीनता असंदिग्ध रूप से स्थापित होती है। यह भी स्पष्ट होता है कि बुद्ध और महावीर के समय जनता में राम के प्रति अत्यंत आदर का भाव था। बौद्ध जातकों के अनुसार बुद्ध अपने पूर्वजन्म

में एक बार राम होकर भी जन्मे थे और जैन ग्रंथों में 63 महापुरुषों में राम और लक्ष्मण की भी गिनती की जाती थी।

भारतीय संस्कृति की रचना ने शैव और वैष्णव मत महत्वपूर्ण रहे हैं लेकिन रामकथा में ये एकाकार हैं। रामेश्वर में शिव की प्रतिष्ठा राम के द्वारा करना तथा हनुमान का रुद्रावतार माना जाना यह स्पष्ट करता है कि राम की दृष्टि में दोनों मतों में कोई अंतर नहीं था। रामकथा में इन मतों की भिन्नता समाप्त हो गई है। वास्तव में राम ऐसे चरित्र हैं जो ब्राह्मण धर्म में यदि विष्णु के अवतार हैं तो बौद्ध धर्म में बोधिसत्व हैं तथा जैन धर्म में आठवें बलदेव के रूप में वे प्रतिष्ठा पाते हैं तथा उनमें शिवभक्ति भी समाहित हो जाती है।

हाल ही में वर्ष 2021 में भारतीय राजस्व सेवा की प्रतिष्ठित अधिकारी रहीं श्रीमती सरोजबाला तथा श्री दिनेशचंद्र अग्रवाल ने राम कथा के वैज्ञानिक पक्ष को लेकर गहन अनुसंधान के पश्चात अपने निष्कर्ष सामने रखे हैं। ये निष्कर्ष वैज्ञानिक साक्ष्यों से पुष्ट हैं तथा इनके आधार पर यह असंदिग्ध रूप से प्रमाणित होता है कि वाल्मीकि रामायण में दिए गए खगोलीय संदर्भों को विज्ञान की कसौटी पर कसने पर वाल्मीकि रामायण में वर्णित घटनाओं की पुष्टि होती है।

वास्तव में हमारे पूर्व राष्ट्रपति तथा महान वैज्ञानिक डॉक्टर ए.पी.जे. अब्दुल क़लाम ने यह कहा था कि वाल्मीकि रामायण में वाल्मीकि ने रामकथा में अनेक प्रमाण दिए हैं। एक ओर उन्होंने उस समय की खगोलीय स्थिति को वर्णित किया साथ ही राजाओं की वंशावलियों की भी जानकारी दी। इसलिए वैज्ञानिक विधि के आधार पर वाल्मीकि रामायण में वर्णित घटनाओं का समय ज्ञात करना असंभव नहीं है।

उनके इस कथन से प्रेरित होकर इन लेखकों ने वैज्ञानिक पद्धति निर्धारित की, विभिन्न स्रोतों से साक्ष्य जुटाए तथा यह असंदिग्ध रूप से सिद्ध किया कि वाल्मीकि रामायण में वर्णित घटनाएं वास्तव में सात हज़ार वर्ष पूर्व उसी क्रम में घटित हुई थीं जैसी कि वे रामायण में वर्णित हैं तथा इस तरह डॉ. क़लाम ने जो तथ्य प्रस्तुत किए वे सत्य हैं।

जहां तक रामकथा की परम्परा का प्रश्न है, भारतीय परम्परा वाल्मीकि को असंदिग्ध रूप से आदिकवि मानती आई है तथा यह एक स्थापित मान्यता है कि रामावतार त्रेता युग में हुआ था। यह तथ्य इसलिए भी पुष्ट होता है क्योंकि महाभारत में रामायण की कथा आती है लेकिन रामायण में महाभारत के किसी भी पात्र का उल्लेख नहीं है। इसी प्रकार रामायण में बुद्ध का उल्लेख नहीं है। अब यह स्थापित हो चुका है कि रामायण बुद्ध से पूर्व का ग्रंथ है। फादर कामिल बुल्के का यह मानना है कि राम, रावण और हनुमान के विषय में स्वतंत्र आख्यान काव्य प्रचलित थे और इनके संयोग से रामायण काव्य जन्मा। दिनकरजी का भी यह मानना है कि राम, रावण और हनुमान ये तीनों चरित्र तीन संस्कृतियों के प्रतीक हैं जिनका समन्वय और तिरोधान वाल्मीकि ने एक ही काव्य में दिखाया है।

यहां यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि एशिया के विभिन्न देशों की संस्कृतियां रामकथा से गहरे प्रभावित हुईं। आज भी बाली सहित इण्डोनेशिया और दक्षिण पूर्व एशिया के अनेक देशों में रामकथा की व्याप्ति है तथा वहां रामकथा से संबंधित अनेक तीर्थ भी हैं।

यहां यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि रामकथा में वैष्णव तथा शैव मतों की दूरी को कम किया गया है। रामकथा का विस्तार ऐसा हुआ है कि न केवल शैव और वैष्णव मतों की भिन्नता समाप्त हुई है अपितु ब्राह्मण धर्म में जहां राम को विष्णु का अवतार माना गया है वहीं बौद्ध धर्म में बोधिसत्व तथा जैन धर्म में आठवें बलदेव के रूप में उन्हें प्रतिष्ठित किया गया है। राम की भक्ति शिव की परमभक्ति हो गई है।

यह विस्मय का विषय हो सकता है कि तिब्बत के विद्वानों ने आठवीं सदी में रामायण की कहानियों को जहां एक ओर संकलित किया वहीं मंगोलिया तथा पश्चिम के मध्य एशिया के खोतान में भी इसी तरह का कार्य हुआ और इस तरह भगवान राम की यह कहानी ने विश्वव्यापी स्वरूप ग्रहण किया। मसाले और कपड़ों के व्यापारियों ने इस कथा को दूर-दूर तक फैलाया। दक्षिण एशिया में रामायण का व्यापक प्रचार हुआ। थाई रामायण (रामकियन) पर हिन्दू प्रभाव है तथा बैंकॉक के एमराल्ड बौद्ध मंदिर की भित्तियों पर इसके प्रसंगों का अंकन है। लाओस की रामायण पर बौद्ध प्रभाव दृष्टिगत होता है। यह उल्लेखनीय है कि चौदहवीं से अठारहवीं शताब्दी में थाई साम्राज्य की राजधानी ययुध्या (अयोध्या) के नाम से जानी जाती थी तथा उनके राजाओं के नाम भी राम के आधार पर पाए जाते थे। दक्षिण-पश्चिमी एशियाई देशों में इंडोनेशिया और मलेशिया की सांस्कृतिक विरासत में आज भी रामायण एक अनिवार्य अंग है जबकि वहां इस्लाम के जन्मने के बाद इस्लाम का व्यापक प्रभाव पड़ा।

रामकथा की व्यापकता का अनुमान इस तथ्य से भली-भांति लगाया जा सकता है कि न केवल साहित्य में अपितु संगीत, नाटक, नृत्य, शिल्प और चित्रकला जैसे विभिन्न अनुशासनों में रामायण के प्रसंग अपने-अपने ढंग से अभिव्यक्त होते रहे हैं। रामायण की कहानी अनेक तरह से रुपांतरित होकर बार-बार जायमान होती रही है।

इस तरह यह स्पष्ट है कि राम का चरित्र युगों-युगों से भारतीय अस्मिता के संस्कारों को रचने वाला महान चरित्र रहा है। बिना राम के भारतीय लोकजीवन, साहित्य, संस्कृति और कला के तमाम अनुशासनों की पहचान ही नहीं बनती।

प्रख्यात साहित्यकार और संस्कृतिविद पंडित विद्यानिवास मिश्र का मानना है कि राम कथा के प्रसार के पीछे राम चरित की उदात्त मानवीयता और उनका लोक से सम्पृक्त हो जाना है। वे कहते हैं कि राम से पहले जटाजूट बांधने वाले तपस्वी तो बहुत हुए और किसी विशेष उद्देश्य के लिए तप करने वाले राजा भी बहुत हुए। इन सब को भारतीय लोकमानस ने सम्मान दिया क्योंकि सुख का त्याग करना भारतीय जीवन में एक महनीय मूल्य रहा है। लेकिन वनवासी राम की एक अलग धज है। वे जटाजूट बांधकर भी वन का अभावों और कष्टों से भरा जीवन जीकर भी धनुर्धर हैं।

वे कोलों, किरातों के बराबर होकर भी असहाय और निरूपाय नहीं है, वे किसी छोटे से भूखण्ड के राजा नहीं, एक विशाल मनोराज्य के सम्राट हैं। राम का रिश्ता निरंतर रिश्ता है और उनसे सम्बद्ध होने का अर्थ केवल राम से सम्बद्ध होना नहीं है बल्कि उन सबसे है, जो राम के हैं।

राम विद्यानिवासजी की दृष्टि में उनके घर ही थे और घर कभी बेगाना नहीं होता।

रामकथा के स्वरूप और स्वभाव को लेकर श्री कुबेरनाथ राय यह महत्वपूर्ण स्थापना करते हैं कि रामकथा सविता-कथा है। इसकी प्रकृति सूर्यात्मक तथा यह द्यु-मंडल का काव्य है जो सगुण दृष्टि के विकास का चूंकि आदि रूप है इसी से इसे आदिकाव्य कहते हैं। वे कहते हैं कि रामायण एक ऐसा सौर काव्य है जिसमें सावित्री-तत्व की उपस्थिति है। सीता इसी तत्व का एक वृहत प्रतीक है। वे सूर्य की सावित्री हैं तथा मानवीय स्तर पर राम की धर्मपत्नी हैं और राम एक दिव्य विभूति हैं जिनका मानवीय सत्ता में अवतरण हुआ है।

कुबेरजी कहते हैं कि राम को पूर्णावतार मानने की कसौटी यह है कि किसी अवतार को पूर्ण तब माना जा सकता है जो रस अर्थात् सौंदर्यबोध, नीतिबोध और आत्मिकबोध इन तीनों दृष्टियों से पूर्ण हो और राम इन तीनों की परिधि में पूर्णत्व के पर्याय है।

भारतीय लोकजीवन में राम इस तरह संपृक्त हैं कि वे लोक काव्य और लोक के आचरण का अभिन्न अंग बन गए हैं। राम की जीवन दृष्टि जातीय दृष्टि है, लोक मंगल की दृष्टि है और मर्यादा तथा ऐसी राजनीति की भी दृष्टि है जो रामराज्य के आदर्शों में अपने अस्तित्व की खोज करती है। राम की एक दृष्टि स्व के विसर्जन की दृष्टि है और एक दृष्टि काव्य की है जो वाल्मीकि और तुलसी सहित अनेक महान रचनाकारों की है।

काल के लम्बे प्रवाह में राम जैसे समर्थ और उज्जवल चरित्र जब लोक से एकात्म होते हैं तो उनका स्वरूप अंर्तअनुशासिक हो जाता है और इस स्वरूप की सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि वह जातीय हो जाता है, लोक का हो जाता है, लोक में समाकर फिर वह लोक के अस्तित्व का अभिन्न अंग हो जाता है।

पंडित विद्यानिवास मिश्र ने रामायण के विविध पक्षों पर मौलिक दृष्टि से विचार किया है तथा लोक में राम कथा विशेष रूप से भोजपुरी में कैसे गूंथी गयी है इसके उदाहरण दिए हैं। रामकथा को बारह माहों के परिप्रेक्ष्य में कैसे गूंथा गया है उसे लेकर बड़े सुन्दर वर्णन हैं। चैत से ही वर्ष की शुरुआत होती है और अयोध्या में राम का जन्म चैत में होता है। तब कौशल्या सारा घर चंदन से लिपवाती हैं, मोतियों से चौक पुराती हैं, लेकिन बैसाख में यह ऋतु जहर हो जाती है, तब कैकेयी राम को वन भेजने का वर दशरथ से मांग लेती हैं। जेठ में लू चलती है और राम, लक्ष्मण तथा सीता वन में तपते हैं। आषाढ़ में घटा छा जाती है, पपीहा पुकारता है और अयोध्या में कौशल्या लक्ष्मण, राम और सीता के भींगने की कल्पना कर बिलखने लगती हैं। सावन-भादों की झड़ी में यही चिंता लगी रहती है कि मेरे बच्चे कहां होंगे ? क्वांर में कल्पना करती हैं कि राम घर होते तो मैं भी दान-दक्षिणा देती। कातिक आते ही लगता है कि घर-घर भले दीप जल रहे हों, लेकिन हमारी अयोध्या तो अंधियारी हो गई। अगहन के महिने में सीता का विवाह हुआ था। सोने के तारों की साड़ी सीता ने पहनी थी। पूस की रात तलवार की धार की तरह तीखी हो जाती है और याद आती है राम की, कि कुश के आसन पर वे कैसे सोए होंगे ? माघ में राम के बिना जीना कठिन लगता है। भरत पादुका पर चँवर डुलाते रहते हैं, फागुन में अबीर घोलते हैं और चिंता करते हैं कि वे किस पर अबीर छोड़ें।

लोककाव्य इस प्रकार पूरे ऋतुचक्र में चैत से फागुन तक, राम को रुपायित कर देता है। इस प्रकार के बारह मासे भोजपुरी में लिखे गए हैं। यह अपने आपमें अत्यंत विस्तार का विषय है कि विभिन्न लोकभाषाओं में राम को किस प्रकार वर्णित किया गया है।

राम को जनजातीय जीवन में या लोकजीवन में अद्भुत प्रतिष्ठा प्राप्त है। शास्त्रीय दृष्टि से जनजातीय जीवन और लोकजीवन को भिन्न माना जा सकता है लेकिन मैं इन दोनों को अविभाज्य मानता हूं, इसलिए कि भारतीय परिवेश में जो लोक है वह इतना समर्थ है कि जातीयता उसमें घुल-मिल गई है। दोनों अविछिन्न हो गए हैं। इसलिए भी कि राम को खण्डित स्वरूप में देखा ही नहीं जा सकता। वे राजा अवश्य हैं लेकिन हैं सच्चे जनजातीय प्रतिनिधि अथवा लोकनायक जिनकी मर्यादा हमारी संस्कृति और संस्कारों की अनुशासन रेखा को खींचती है। राम चित्रकूट में जिन कोलों और भीलों के बीच रहते हैं और वे उनकी जिस तरह सेवा करते हैं, उन्हें देखकर जिस तरह हर्षित होते हैं, वह यह सिद्ध करता है कि राम अयोध्या के राजा नहीं बल्कि वहां के नागरिकों के नायक हैं।

कैसे हैं राम -

**रामहि केवल प्रेमु पिआरा।**
**जानि लेउ जो जान निहारा।।**

उन्हें केवल प्यार है तो निश्छल प्रेम से।

आदिवासी हमारे लोक जीवन के अभिन्न अंग हैं तथा सदियों से इन आदिवासियों के बीच रामकथा की धारा अपनी अलग अलग रूपों में प्रवहमान होती रही है। रामकथा के मर्मज्ञ विद्वान डॉ. रमानाथ त्रिपाठी का मानना है कि पूरे भारत में आदिम-जनों को 212 समूहों में विभाजित किया गया है तथा इनमें से कई ऐसी प्रजातियां हैं जिनमें रामकथा प्रचारित है और राम उन्हें अपने सगे लगते हैं। इसलिए कि वे उन्हीं की तरह धनुर्धर हैं, उन्हीं की तरह वनों में भटकते हैं, उन्हीं की तरह पशु-पक्षियों को प्यार करते हैं और परिजनों के साथ वे सहृदय हैं। ये राम आदिवासियों के साथ गहरे सम्पृक्त हैं तथा राम से जुड़े हुए चरित्रों से वे अपने आपको जोड़ते हैं।

राम को यदि भारतीय संस्कृति के रचयिता के रूप में प्रतिष्ठा दी जाए तो यह सर्वथा भारतीय संस्कृति के स्वरूप और उसकी आत्मा का परिचायक होगा। भारतीय संस्कृति समन्वय की संस्कृति है। इस परिप्रेक्ष्य में यदि भारतीय संस्कृति की यात्रा पर दृष्टिपात किया जाए तो यह ज्ञात

होगा कि यह यात्रा एकाकी यात्रा नहीं है। यह समन्वय की यात्रा है। अनेक यात्रियों की जिनके आचार भिन्न हैं, उनकी एक समान गंतव्य की ओर की जाने वाली यात्रा है और यह यात्रा रामकथा के उज्जवल आलोक में प्रत्येक युग में आगे बढ़ती है।

राम के जीवन की कथा में भारत की भौगोलिक एकता तो ध्वनित होती ही है साथ ही यह भी आश्चर्यजनक तथ्य सामने आता है कि इस देश की सभी प्रमुख भाषाओं में राम के जीवन को रचा गया है तथा जिनके प्रचार के कारण भारतीय संस्कृति की एकरुपता बढ़ी है। भारतवर्ष के विभिन्न क्षेत्रों के कवियों पर वाल्मीकि रामायण का व्यापक प्रभाव पड़ा। राम के जीवन की यह कथा इतनी प्रेरक रही कि समूचा देश एक ही आदर्श की ओर उन्मुख रहा और भारत सहित सिंहल, तिब्बत, बर्मा और कश्मीर आदि में प्रचलित राम कव्यों को यदि मिला दें तो यह मानना पड़ेगा कि रामकथा एशियाई संस्कृति का महत्वपूर्ण तत्व बन गई है।

राम, भारतीय संस्कृति के उन मूल्यों के प्रतिनिधि हैं जिन मूल्यों ने भारत के जनमानस की मानसिकता और आचार दोनों को रचा है। वे मर्यादा पुरुषोत्तम कहे जाते हैं। अर्थात् मनुष्य के गुणों की मर्यादा का अपने कृतित्व में अनुपालन करने वाले सर्वश्रेष्ठ व्यक्तित्व। राम के चरित्र में ये गुण अपनी पूरी उत्कृष्टता के साथ अभिव्यक्त हुए हैं, एक पुत्र के रूप में, भाई के रूप में, पति के रूप में, पिता के रूप में, शिष्य के रूप में और अयोध्या के राजा के रूप में। फिर इन सब भूमिकाओं में आदर्श भूमिका क्या होनी चाहिए इसका निर्वाह उनके चरित्र में है। यह भी है कि इन भूमिकाओं के निर्वाह में ऐसी कौन-सी मानवीय दुर्बलताएं हैं जो आड़े आ सकती हैं, लेकिन उन पर कैसे विजय पाई जा सकती है। राम यहां ईश्वर नहीं हैं, मानव हैं। इसलिए मनुष्यता क्या होती है इसे उन्हें परिभाषित करना होता है और यही परिभाषा भारतीय संस्कृति की परिभाषा है।

राम के चरित्र की सबसे बड़ी विशेषता है उसका लोकोन्मुख होना। पूरा रामचरित्र लोकमंगल का आख्यान करता है। राम की पूरी जीवनयात्रा का एक ही उद्देश्य था, लोकमंगल के लिए एक आदर्श प्रतिमान खड़ा करना। राम के चरित्र के अनेक पहलू हैं लेकिन सबसे महत्वपूर्ण पहलू है अपने निजस्व का विसर्जन। अग्निपरीक्षा से निकली माता सीता का भी लोकोपवाद के कारण वे परित्याग कर देते हैं। राम की अपनी निजता तो कुछ है ही नहीं, जो कुछ भी है वह लोक का है, लोक के लिए है। इसलिए राम समग्रता के मानक हैं। निजस्व का यही विसर्जन और समग्र में समूचे लोक को समेट लेने की आकांक्षा भारतीय संस्कृति के वे मानक मूल्य हैं जिन्हें राम ने अपने कृतित्व के माध्यम से रोपा। राम अंर्तदृष्टि के प्रतिनिधि हैं, वे अपनी अंर्तदृष्टि से विश्व को देखते हैं, घटनाओं का आंकलन करते हैं-

**ज्ञानहूँ गिरा के स्वामी बाहर अंतरजामी**

राम, रावण के वध के बाद उसके शव को सम्मान देते हैं, विभीषण से कहते हैं कि इस मृत्यु के साथ बैर समाप्त हो जाना चाहिए। कहते हैं कि वे तुम्हारे भी और मेरे भी बड़े भाई थे इसलिए उनकी अंत्येष्टि सम्मानपूर्वक होना चाहिए -

**मरणान्तानि वैराणि निर्वृत्तं नः प्रयोजनम्।**
**क्रियतामस्य संस्कारो ममाप्येष यथा तव।।**

(- वाल्मीकि रामायण, युद्धकाण्ड, 111/100)

राम वन्य संस्कृति के भी संरक्षक हैं। जब सीता का हरण रावण कर रहा था तब माता सीता ने वन का ही आव्हान करते हुए कर्णिकार, गोदावरी और वनदेवताओं तथा वन के पशु-पक्षियों का आव्हान करते हुए कहा था कि राम से कहो कि रावण उनका हरण कर ले जा रहा है। राम ने वन्य संस्कृति को अद्भुत प्रतिष्ठा दी है। वाल्मीकि रामायण में सीता के साथ पूरा वन है। पुष्करणी, कमल, वन के पशु-पक्षी, पर्वत, जलप्रपात ये सभी सीता के साथ हैं। वाल्मीकि हों, भवभूति या तुलसी इन सभी ने तपोवन परिक्रमा करते हुए वन्य संस्कृति के प्रति राम और सीता की प्रतिबद्धता को स्पष्ट किया है।

राम भारतीय कला की शाश्वत धरोहर हैं। पूरे दक्षिण और दक्षिण पूर्व एशिया में रामायण के प्रसंगों को चित्रित और उत्कीर्णित किया गया है। अंगकोरवाट के मंदिर इसका आदर्श उदाहरण हैं।

दक्षिण भारत के मंदिरों की सरणि हो या उत्तर भारत के विशाल क्षेत्र में फैले हुए मंदिर, रामायण के प्रसंगों का उत्कीर्णन बहुतायत से किया गया है। टेराकोटा में भी रामायण के प्रसंगों का अंकन मिलता है। उत्तरप्रदेश के भीटा गांव में 5वीं शताब्दी में निर्मित एक मंदिर में सुंदर टेराकोटा शिल्प मिला है जिसमें राम तथा लक्ष्मण को वनवासी के रूप में दर्शाया गया है। दोनों अपने-अपने हाथों में धनुष-बाण लिए हुए हैं।

हाल ही में हुई खोजों से हरियाणा के नाचरखेड़ा नामक स्थान पर रामायण में वर्णित प्रसंगों का एक बड़ा पैनल मिला है जिसमें ब्राम्ही लिपि उत्कीर्ण है। गया जिले में भी एक छटवीं शताब्दी का मंदिर मिला है जिसमें रामायण के प्रसंग उकेरे गए हैं। निषादराज की नाव से नदी पार करते राम तथा लक्ष्मण और सीता का सुंदर अंकन इस मंदिर में मिला है। इसी तरह गुप्तकालीन नाचना मंदिर में पत्थर पर उत्कीर्ण छः पैनल मिले हैं जिन पर रामायण के प्रसंगों के अंकन हैं। ये पैनल वर्तमान में राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में हैं तथा इनका काल निर्धारण 5वीं सदी का विद्वानों ने किया है। ये अंकन सीता के अपहरण के पूर्व के प्रसंगों के हैं। इनमें रावण को ऋषि के वेश में दर्शाया गया है। एक अंकन में बाली व सुग्रीव का युद्ध दर्शाया गया है जिसमें हनुमान का अंकन भी है।

लगभग 4थी-5वीं सदी के गुप्तकालीन शिल्प ललितपुर के निकट देवगढ़ में भी मिले हैं। ये भी पाषाण पर उत्कीर्ण किए गए हैं तथा वर्तमान में राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में हैं। इनमें से एक अंकन शूर्पणखा के प्रसंग का है। चालुक्यों के समय में भी रामायण के प्रसंग उत्कीर्ण किए गए। पट्टादकल के प्रसिद्ध अवशेष इसके साक्षी हैं जिनमें रामायण के प्रसंगों के अंकन बहुतायत से उपलब्ध हैं। हम्पी के अवशेष भी इस दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। उल्लेखनीय है कि हम्पी को स्थानीय तौर पर किष्किंधा भी कहा जाता है। एलोरा के कैलाश मंदिर की दीवारों पर रामायण के प्रसंग बड़े जीवन्त रूप में अंकित हैं।

यहां यह भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि अनेक राम मंदिर तथा राम व सीता एवं हनुमान की अनेक मूर्तियां बंगाल में बनीं तथा वहां के टेराकोटा के मंदिरों पर अनेक फलक राम के जीवन की घटनाओं पर उत्कीर्णित किए गए। ऐसे मंदिरों के संबंध में डॉ. शशिकान्त भट्ट ने विवरण देते हुए अवगत कराया है कि बंगाल के बीरभूम जिले में अदित्यपुर, बंकती, लबपुर, इलमबाजार व सुरूल में श्रीराम के कई मंदिर ज़मींदारों द्वारा निर्मित किए गए जिनमें रामायण की कई महत्वपूर्ण घटनाओं को मिट्टी के फलकों पर उकेरा गया। ये सभी मंदिर उन्नीसवीं सदी के हैं।

शांति निकेतन के निकट जो विभिन्न टेराकोटा मंदिर बिशनपुर व उसके आसपास निर्मित किए गए हैं उनमें कृष्णलीला के साथ-साथ भगवान राम के जीवनचरित से संबंधित विभिन्न घटनाओं को उरेहा गया है। पश्चिम बंगाल के ये टेराकोटा मंदिर विश्वप्रसिद्ध हैं।

मध्यप्रदेश के पूर्वी निमाड़ क्षेत्र में बटकेश्वर (बालिकेश्वर) के मंदिर की एक देहरी पर बालि और सुग्रीव के उत्कीर्णन पाए गए थे। ये अब इंदिरा सागर बांध की डूब से प्रभावित हो गए हैं। इसी प्रकार हरदा के पास नेमावर के मंदिरों में भी रामायण के शिल्पांकन मिले हैं। दिल्ली से 150 कि.मी. तथा पश्चिमी कुरुक्षेत्र से 130 कि.मी. दूर एक अंकन में अशोक वाटिका को हनुमान के द्वारा नष्ट करते हुए चित्रित किया गया है। इसकी पुष्टि ब्राह्मी में उत्कीर्ण लेख, 'अशोक वाटिका हन्ता हनुमान' से भी होती है। 'मकराक्ष राम द्वन्द्व-युद्ध' शीर्षक से उकेरा गया एक मृदफलक कुरुक्षेत्र से 80 कि.मी. दक्षिण पूर्व में अवस्थित एक स्थान पर मिला है। इसी प्रकार का एक और मृदफलक झज्जर गुरुकुल संग्रहालय में संरक्षित है। इसमें राम के द्वारा बालि के वध की घटना को उरेहा गया है।

रामायण को दक्षिण पूर्व एशिया के अनेक स्थलों पर भित्तियों पर उत्कीर्णित किया गया। इनमें जावा के प्रम्बनान तथा पनातरान, कम्पूचित्रा के अंकोरवाट तथा थाईलैण्ड के जैतूवन विहार के अंकन विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

यहां यह भी उल्लेखनीय है कि पाषाणों के अतिरिक्त टेराकोटा, धातुशिल्प व हाथी दांत पर बनाए गए रामकथा पर आधारित शिल्पों के संबंध में विस्तृत जानकारी उपलब्ध है।

हाल ही में अयोध्या में किए गए उत्खनन में प्राचीन राम मंदिर के अवशेषों के प्रमाण भी मिले हैं।

सम्राट अक़बर ने वर्ष 1604-05 में सोने और चांदी के सिक्के जारी किए जिनके अग्रभाग पर धनुर्धारी राम व सीता खड़े हैं तथा ऊपरी भाग में नागरि लिपि में रामसीय तथा पृष्ठभाग पर फारसी में 50 इलाही, (अकबर के राज्यारोहण का 50वां वर्ष) अमरदाद (महीना) टंकित है।

राम और उनकी जीवनयात्रा के प्रसंगों पर केन्द्रित पाषाण शिल्प, धातु शिल्प तथा हाथी दांत पर बनाए गए शिल्प बहुतायत से उपलब्ध हैं। इनके संबंध में विस्तार से वर्णन किया जाना एक पृथक कृति का विषय होगा। पूर्व चरण में केवल एक झांकी उत्कीर्णनों के संबंध में दी गई है।

भारत में दसवीं शताब्दी से भोजपत्रों व ताड़पत्रों पर बनाए गए सचित्र ग्रंथ व चित्र मिलते हैं। ईस्वी सन् 1020 में ताड़पत्रों पर लिखित रामायण प्राप्त हुई है। रामायण की लोकप्रियता के कारण उसकी अनेक अनुकृतियां तैयार की गईं। अभी तक हुए शोधों के आधार पर ऐसी 2000 हस्तलिखित पोथियों का पता चला है तथा जहां तक सचित्र पोथियों का प्रश्न है वे समूचे भारत में मध्यकाल में चित्रित हुई हैं फिर वे चाहे राजस्थान की या पहाड़ की रियासतें हों अथवा दक्षिण भारत के सुदूर क्षेत्र के अंचल। मुस्लिम प्रभाव के कारण सल्तनत काल या पूर्व मुग़ल काल की शैलियों में रामायण के अंकन नहीं मिलते हैं।

लेकिन यहां चर्चा उन लघुचित्रों की है जो मध्यकाल में पूरे भारत की चित्रशैलियों में बनाए गए। सबसे पहिले अकबर ने रामायण का अनुवाद अब्दुल कादर बदायूनी से करवाया तथा इसे सचित्र बनवाया इसमें 136 चित्र थे तथा यह सन् 1588 में पूर्ण हुई। एक और सचित्र रामायण अब्दुल रहीम खानखाना ने सन् 1598-1599 में बनवाई। ये दोनों क्रमश: जयपुर पोथीखाने और फ्रीर गैलरी वाशिंगटन में हैं। मेवाड़ में राजा जगतसिंह के समय साहिबदीन नामक एक कुशल चितेरे ने रामायण के अनेक काण्ड सचित्र रूप से सन् 1649 से 1653 के बीच तैयार किये। मनोहर नामक चितेरे ने बालकाण्ड के चित्र बनाए। ये अंकन ब्रिटिश संग्रहालय लंदन तथा छत्रपति वास्तु संग्रहालय मुंबई (पूर्व का प्रिंस ऑफ़ वेल्स संग्रहालय) में संरक्षित हैं तथा ख्यात कला इतिहासकार जे.पी. लॉस्टी ने इन पर विस्तृत शोध की है। जे.पी. लॉस्टी के जीवन का सबसे महत्वपूर्ण कार्य मेवाड़ की उस सचित्र रामायण को प्रतिष्ठा दिलाने का था जो मेवाड़ के राजा जगतसिंह (1628 से 1652) के समय में उनके अप्रतिम कलाकार साहिबदीन और मनोहर तथा एक अनाम चितेरे संभवत: अली ने बनाई थी। वाल्मीकि रामायण की अनुकृति महात्मा हीरानंद ने की। इस रामायण के सातों कांड चित्रित किए गए।

आज इस संग्रहालय की वेब साइट पर जाकर एक क्लिक में हमारी इस महान विरासत को हम देख सकते हैं।

रामायण के चित्रों पर ऐतिहासिक कार्य फ्रांस के राष्ट्रीय संग्रहालय म्यूजी गियूमे की प्रमुख डॉक्टर अमीना ताहा हुसैन ओकाडा ने किया है। उन्होंने निरन्तर 10 वर्षों तक पूरे विश्व में घूमकर सभी प्रमुख संग्रहालयों और व्यक्तिगत संग्रहों से रामायण के 10 हज़ार चित्रों में से 660 चित्रों को चुनकर 5 खण्डों में उन्हें फ्रेंच में प्रकाशित किया है।

मुगल शैली के बाद के काल में राजस्थान और हिमाचल प्रदेश तथा मालवा और बुन्देलखण्ड सहित पूरे भारत के विभिन्न अंचलों में रामकथा के प्रसंगों के शानदार रूपायन हुए। कांगड़ा, गुलेर, बाहु और बसोहली सहित पहाड़ की विभिन्न शैलियों में और जयपुर, कोटा, बूंदी तथा मेवाड़ सहित राजस्थान की अनेक रियासतों और ठिकाणों में रामकथा चित्रित की गई। पहाड़ की शांग्री रामायण के भावप्रवण अंकन जो विश्व मे विभिन्न संग्रहालयों में संरक्षित हैं हमारी विशिष्ट धरोहर हैं।

इस संदर्भ में एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है 'औतारचरित'। इसका मूल नाम है अवतारचरित। यह ग्रंथ हाड़ौती के झालावाड़ अंचल का प्रतिनिधि सचित्र ग्रंथ है। इस ग्रंथ के रचयिता बारहठ नरहरदास हैं जिनका वास्तविक नाम नरहरिदास है। इस सचित्र ग्रंथ से तुलनीय कोई अन्य सचित्र ग्रंथ राजस्थानी शैलियों में शायद ही हो। अद्भुत रंग संयोजन, रेखाओं की लयात्मकता, आनुपातिक आकृतियां तथा अत्यन्त कौशल के साथ उरेही गई नैसर्गिक दृश्यावलियां इस ग्रंथ की विषेशता हैं। राजस्थानी शैलियों में निर्मित किए गए सचित्र ग्रंथों में यह ऐसा इकलौता सचित्र ग्रंथ प्रतीत होता है जो परवर्तीकाल में अर्थात 19वीं सदी में तैयार किया गया और जिसमें कलम की इतनी बारीकी है अन्यथा 18वीं सदी के उत्तरार्द्ध तथा 19वीं सदी में कलम स्थूल होने लगती है, रंग बिखरने लगते हैं तथा ब्रिटिष प्रभाव के कारण स्थानीयता विलुप्त होने लगती है। संभवत: यह एकमात्र ऐसा सचित्र ग्रंथ है जिसमें रामचरितमानस के प्रसंगों को चित्रित किया गया है तथा चितेरे ने अपनी कल्पना का प्रयोग करते हुए भी चित्र बनाए हैं।

रामकथा के प्रदर्शनकारी रूप भी हमारी परम्परा में लम्बे समय से विद्यमान रहे हैं। भारत में नृत्य और नाट्य में रामकथा सबसे अधिक अभिव्यक्त की गई है। गायन की अनेक विधाओं में भी रामकथा के आधार पर किए जाने वाले अभिनय को देखा जा सकता है। विशेष रूप से एकल कथा गायन और कथन शैलियों में रामकथा के अभिनव तत्व विद्यमान होते हैं जिनके कारण रामकथा का एक प्रदर्शनकारी स्वरूप सामने आता है। 'रामसत्ता' जैसे कीर्तनिया रूप में भी रामकथा अभिव्यक्त होती है।

रामायण हमारी सांस्कृतिक अस्मिता को रचने वाला महान ग्रंथ तो है ही वह साहित्य की दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण ग्रंथ है। रामकथा के प्रख्यात विद्वान रेवरेण्ड फादर कामिल बुल्के ने अपने विद्वत्तापूर्ण ग्रंथ में रामकथा संबंधी विभिन्न साहित्यिक आख्यानों का विवरण दिया है। उनका मानना है कि रामकथा संबंधी आख्यान काव्यों की वास्तविक रचना वैदिक काल के बाद, इक्ष्वाकु-वंश के राजाओं के सूतों ने आरंभ की तथा इन्हीं आख्यान काव्यों के आधार पर वाल्मीकि ने अपनी रामायण का सृजन किया। इस रामायण का उस समय के समाज में बहुत प्रचार था तथा कुशी-लव उसका गान करके और उसके अभिनेता उसके प्रसंगों का अभिनय कर, जीविकोपार्जन करते थे। धीरे-धीरे रामचरित् की लोकप्रियता बढ़ती गई और उसे केन्द्र में रखकर साहित्य रचा जाता रहा।

संस्कृत उस समय की सबसे प्रतिष्ठित भाषा थी। इसलिए संस्कृत के धार्मिक साहित्य में रामकथा की अनेक रचनाएं हुईं। इनमें रघुवंश, भट्टकाव्य, महावीरचरित्, उत्तर-रामचरित्, प्रतिमा-नाटक, जानकी-हरण, कुन्दमाला, अनर्घराघव, बालरामायण, हनुमन्नाटक, अध्यात्म-रामायण, अद्भुत-रामायण तथा आनंद-रामायण जैसे काव्य शामिल हैं।

आधुनिक देशभाषाओं के काल में रामचरित् पर अनेक उत्कृष्ट काव्य लिखे गए। इनमें प्रमुख हैं - कम्बन-कृत तमिल रामायण (12वीं सदी), तेलुगु द्विपाद रामायण (12वीं सदी) मलयालम रामचरितम् (14वीं सदी), बंगला कृतवासी रामायण (15वीं सदी), उड़िया बलरामदास रामायण (15वीं सदी), कन्नड़ी तोरावे रामायण (16वीं सदी), मराठी भावार्थ रामायण (16वीं सदी) तथा तुलसीकृत रामचरित् मानस (16वीं सदी)। इस सूची में वे अनेक रामकाव्य सम्मिलित नहीं हैं जो विभिन्न युगों में, देश के विभिन्न अंचलों में, विभिन्न भाषाओं में रचनाकारों ने रचे। ये काव्य केवल भारत में ही नहीं रचे गए अपितु तिब्बत से लेकर हिन्दचीन और समूचे दक्षिणी एशिया में इनकी रचना हुई तथा रामकथा साहित्य का अभिन्न अंग बन गई।

यहां एक क्षेत्रीय उदाहरण देना पर्याप्त होगा। रामकथा का प्रचार-प्रसार सुदूर महाराष्ट्र के खानदेश अंचल तक हुआ। धूलिया के समर्थ वाग्देवता मंदिर में तुलसी के समकालीन कवि जसवन्त के ग्रंथ संरक्षित हैं। प्रख्यात साहित्यकार डॉ. मुरलीधर शहा ने जसवन्त की कृतियों पर महत्वपूर्ण कार्य किया है। जसवन्त कीर्तनकार थे। उनके अनेक पद राग-रागिनियों में आबद्ध हैं। उन्होंने मराठी मिश्रित खड़ी बोली में अपने सरस पदों की रचना की। जसवन्त ने स्फुट पदों में रामकथा की रचना की। संस्कृत व्याख्याओं के अलावा हिंदी में अनेक व्याख्याएँ उपलब्ध हैं। इनमें द्वैत, अद्वैत, शुद्धाद्वैत व विशिष्टाद्वैत के मतावलंबियों द्वारा व आर्यसमाजीय विद्वानों के द्वारा भी व्याख्याएँ की गई हैं।

भारतवर्ष की प्राय: सभी भाषाओं में, लोकभाषाओं में तथा फ्रेंच, अंग्रेजी, लैटिन आदि भाषाओं में अनुवाद हुए हैं और वे इतने हैं कि उन्हें गिनाया जाना एक पृथक् ग्रंथ का विषय है।

तुलसी के राम हमारे युगों-युगों से आदर्श रहे हैं, अनुकरणीय रहे हैं और आज भी वे हमारे जीवन में इतने घुले-मिले हैं कि बिना राम के हम अपने अस्तित्व की कल्पना तक नहीं कर सकते। राम हमारे जीवन का रस भी हैं और राग भी और इसीलिए वे हमारे अस्तित्व की आत्मा हैं, हमारे जीवन का गीत हैं और संगीत भी।

यह एक संक्षिप्त विहंगावलोकन है, झांकी है राम की। ऐसे राम की जो हमारे लोक जीवन, जनजातीय जीवन में समाये हैं, संस्कृति, कला और साहित्य में ऐसे समाविष्ट हैं कि इन अनुशासनों की पहचान उनके बिना नहीं हो सकती। राम के इस वैराट्य पर अनेक ग्रंथ लिखे जा सकते हैं और लिखे गए हैं। इसलिए इस विहंगावलोकन में सब कुछ समेट लिया गया यह कहना उचित नहीं है। यह अधूरापन है। और राम के चरित्र की प्रेरणा यही है कि अधूरे बने रहो क्योंकि बिना अधूरेपन का अनुभव किए पूर्णत: के गंतव्य की ओर चलने वाली यात्रा आरंभ नहीं हो पाएगी।

राम इसी यात्रा के आरंभ किए जाने का संकल्प हैं।

■

# श्रीराम एकाग्र लघुचित्रों की चित्रावली

सौजन्य : नर्मदा प्रसाद उपाध्याय

राम लक्ष्मण और हनुमान - मैसूर - 19 वीं सदी

राम का राज्यारोहण 18वीं सदी जोधपुर

शौर्य के प्रतिमान राम रेखांकन बीसवीं सदी

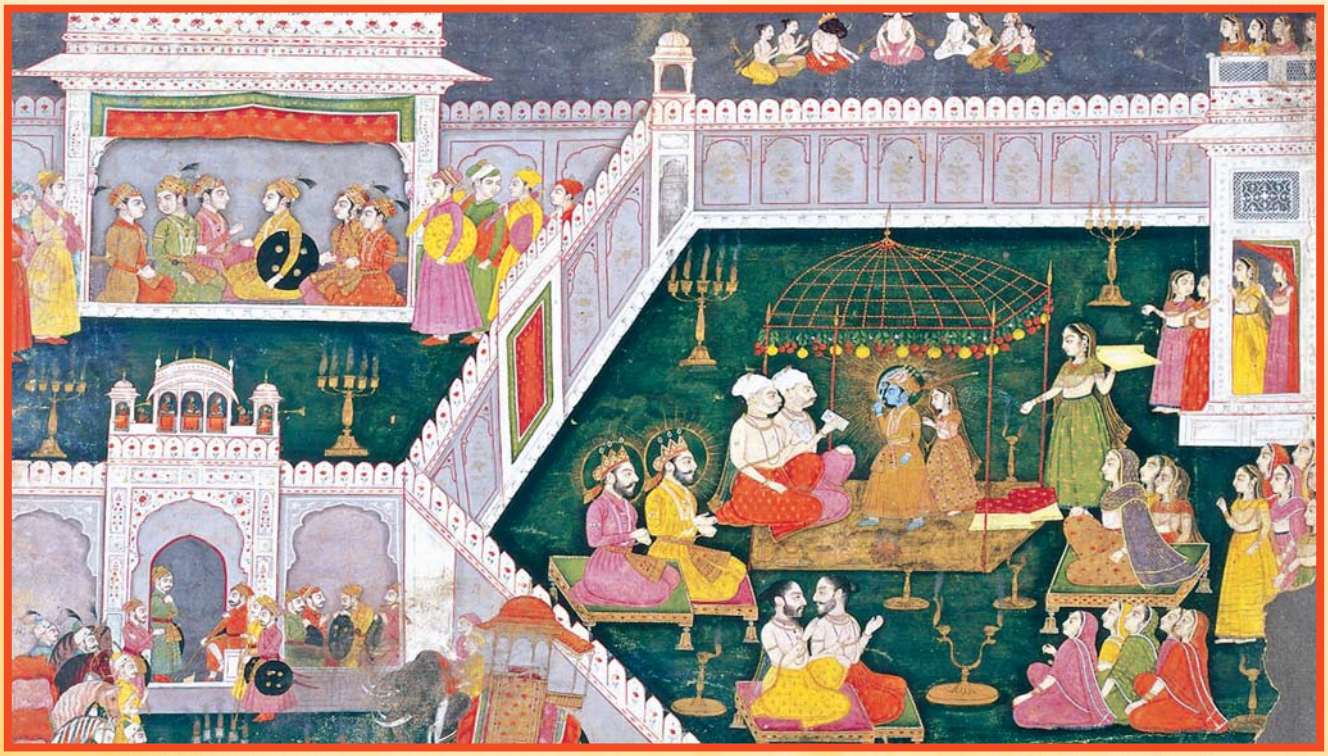

राम विवाह 18 वीं सदी अवध शैली

राम दरबार भित्तिचित्र ;
गढ़ पैलेस झालावाड़

चारों भाइयों का
जनकपुरी में
विवाह -19वीं
सदी झालावाड
शैली अवतार चरित
पर आधारित

॥श्री राम॥

## 'राम मंदिर के निर्माण की यह प्रक्रिया राष्ट्र को जोड़ने का उपक्रम है।'

– नरेन्द्र मोदी, प्रधानमंत्री

चित्र : साभार

# कलासमय

कला, संस्कृति, साहित्य एवं समसामयिक द्वैमासिक पत्रिका

॥श्री राम॥

## श्री रामलला अयोध्या में विराजमान

## "देश - के स्वाभिमान की पुनर्स्थापना है श्री रामलला की प्राण प्रतिष्ठा।"

–डॉ. मोहन यादव, मुख्यमंत्री

जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.)-462016 फोन : 0755-2562294, मो.- 94256 78058
ई-मेल : kalasamaymagazine@gmail.com | bhanwarlalshrivas@gmail.com वेबसाइट : **www.kalasamaymagazine.com**

# वार्षिक केलेण्डर वर्ष - 2024

## जनवरी

| रवि | सोम | मंगल | बुध | गुरु | शुक्र | शनि |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 |
| 7 | 8 | 9 | 10 | 11 | 12 | 13 |
| 14 | 15 | 16 | 17 | 18 | 19 | 20 |
| 21 | 22 | 23 | 24 | 25 | 26 | 27 |
| 28 | 29 | 30 | 31 | | | |

## फरवरी

| रवि | सोम | मंगल | बुध | गुरु | शुक्र | शनि |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | | | | 1 | 2 | 3 |
| 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| 11 | 12 | 13 | 14 | 15 | 16 | 17 |
| 18 | 19 | 20 | 21 | 22 | 23 | 24 |
| 25 | 26 | 27 | 28 | 29 | | |

## मार्च

| रवि | सोम | मंगल | बुध | गुरु | शुक्र | शनि |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 31 | | | | | 1 | 2 |
| 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 |
| 10 | 11 | 12 | 13 | 14 | 15 | 16 |
| 17 | 18 | 19 | 20 | 21 | 22 | 23 |
| 24 | 25 | 26 | 27 | 28 | 29 | 30 |

## अप्रैल

| रवि | सोम | मंगल | बुध | गुरु | शुक्र | शनि |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 |
| 7 | 8 | 9 | 10 | 11 | 12 | 13 |
| 14 | 15 | 16 | 17 | 18 | 19 | 20 |
| 21 | 22 | 23 | 24 | 25 | 26 | 27 |
| 28 | 29 | 30 | | | | |

## मई

| रवि | सोम | मंगल | बुध | गुरु | शुक्र | शनि |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | | | 1 | 2 | 3 | 4 |
| 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 | 11 |
| 12 | 13 | 14 | 15 | 16 | 17 | 18 |
| 19 | 20 | 21 | 22 | 23 | 24 | 25 |
| 26 | 27 | 28 | 29 | 30 | 31 | |

## जून

| रवि | सोम | मंगल | बुध | गुरु | शुक्र | शनि |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 30 | | | | | | 1 |
| 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 |
| 9 | 10 | 11 | 12 | 13 | 14 | 15 |
| 16 | 17 | 18 | 19 | 20 | 21 | 22 |
| 23 | 24 | 25 | 26 | 27 | 28 | 29 |

## जुलाई

| रवि | सोम | मंगल | बुध | गुरु | शुक्र | शनि |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 |
| 7 | 8 | 9 | 10 | 11 | 12 | 13 |
| 14 | 15 | 16 | 17 | 18 | 19 | 20 |
| 21 | 22 | 23 | 24 | 25 | 26 | 27 |
| 28 | 29 | 30 | 31 | | | |

## अगस्त

| रवि | सोम | मंगल | बुध | गुरु | शुक्र | शनि |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | | | | 1 | 2 | 3 |
| 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| 11 | 12 | 13 | 14 | 15 | 16 | 17 |
| 18 | 19 | 20 | 21 | 22 | 23 | 24 |
| 25 | 26 | 27 | 28 | 29 | 30 | 31 |

## सितम्बर

| रवि | सोम | मंगल | बुध | गुरु | शुक्र | शनि |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 |
| 8 | 9 | 10 | 11 | 12 | 13 | 14 |
| 15 | 16 | 17 | 18 | 19 | 20 | 21 |
| 22 | 23 | 24 | 25 | 26 | 27 | 28 |
| 29 | 30 | | | | | |

## अक्टूबर

| रवि | सोम | मंगल | बुध | गुरु | शुक्र | शनि |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | | 1 | 2 | 3 | 4 | 5 |
| 6 | 7 | 8 | 9 | 10 | 11 | 12 |
| 13 | 14 | 15 | 16 | 17 | 18 | 19 |
| 20 | 21 | 22 | 23 | 24 | 25 | 26 |
| 27 | 28 | 29 | 30 | 31 | | |

## नवम्बर

| रवि | सोम | मंगल | बुध | गुरु | शुक्र | शनि |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | | | | | 1 | 2 |
| 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 |
| 10 | 11 | 12 | 13 | 14 | 15 | 16 |
| 17 | 18 | 19 | 20 | 21 | 22 | 23 |
| 24 | 25 | 26 | 27 | 28 | 29 | 30 |

## दिसम्बर

| रवि | सोम | मंगल | बुध | गुरु | शुक्र | शनि |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 |
| 8 | 9 | 10 | 11 | 12 | 13 | 14 |
| 15 | 16 | 17 | 18 | 19 | 20 | 21 |
| 22 | 23 | 24 | 25 | 26 | 27 | 28 |
| 29 | 30 | 31 | | | | |

Rama and seeta with Hanuman
830-40 Probably kangra  Ramdarbar

लंका में माता सीता के दर्शन तथा दैत्यों से युद्ध
बुन्देलखण्ड रामायण-अजयगढ़ - 19 वीं सदी

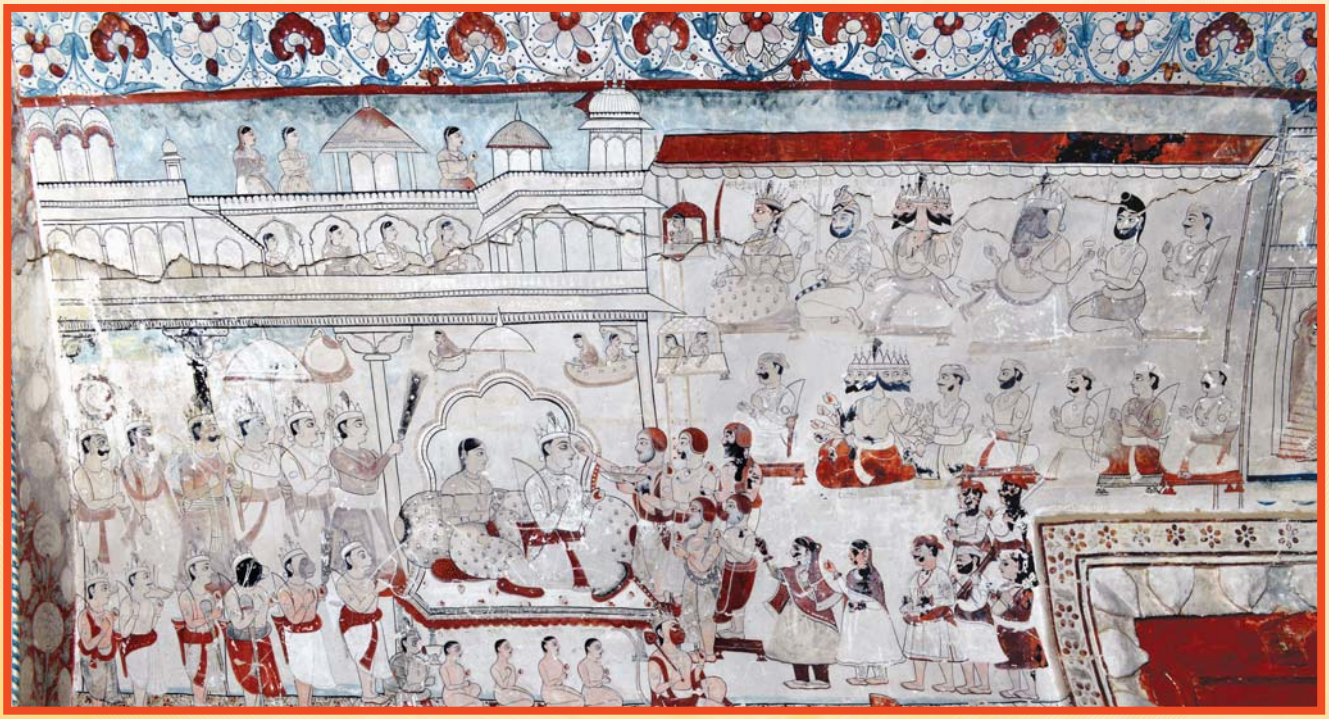

भित्तिचित्र- राम का राज्यारोहण-तोडी फतेहपुर-19वीं सदी

रामदरबार-पहाडी शैली -18 वीं सदी

शांग्री रामायण - कुल्लू - 17 वीं सदी

रामदरबार गुलेर शैली 18 वीं सदी

राम तथा लक्ष्मण हाथी पर हनुमान महावत
राघोगढ़ - 18वीं सदी

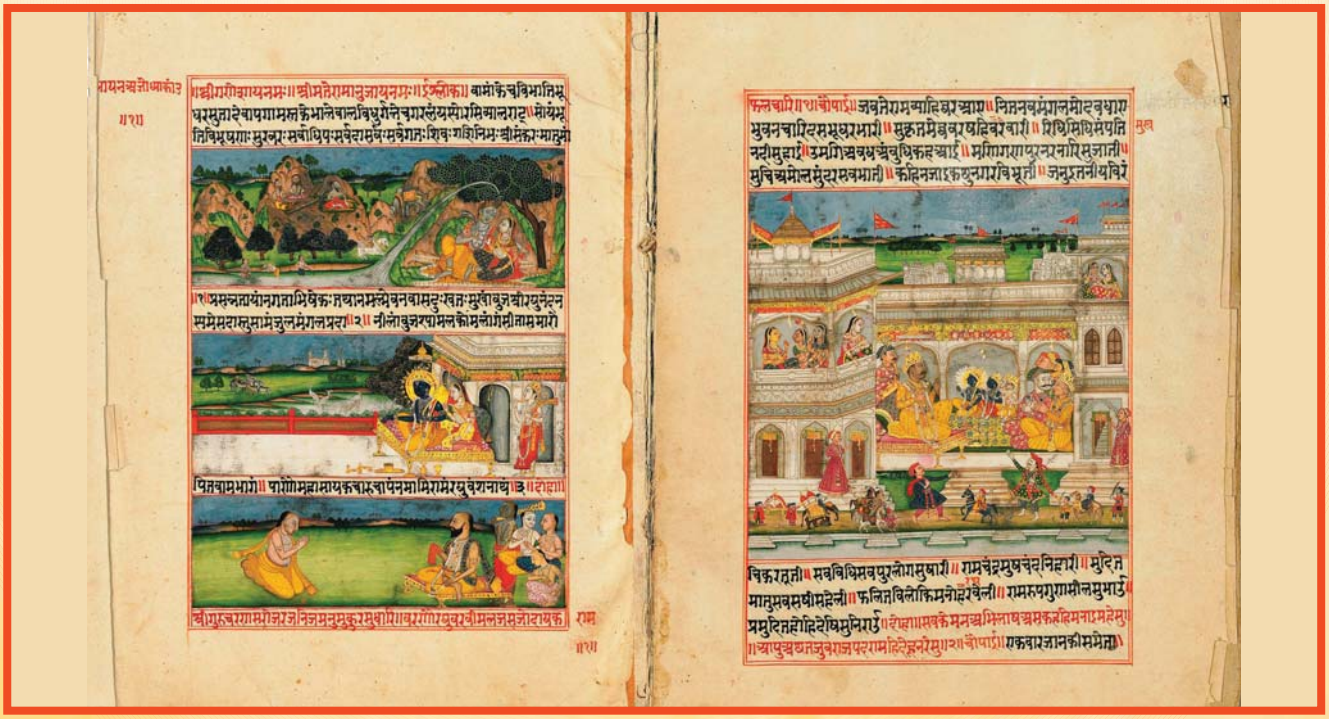

तुलसीकृत रामचरित मानस का एक पृष्ठ - जयपुर शैली - 19वीं सदी

आलेख

# थोड़ा नेड़ा बसोनी म्हारा रामरसिया

डॉ. महेन्द्र भानावत

किस्सा तब का है जब रामचंद्र भगवान, माता जानकी और लक्ष्मण वीर चौदह वर्ष का वनवास पूरा कर अयोध्या लौट रहे थे। देश-देशांतर के लोग अयोध्या पहुंचे और खुशी में फूले नहीं समाये। इन सबमें वे आदिवासी भी थे जिन्होंने वनांचलों में भगवान राम की जितनी बन आई, सेवा-शुश्रुषा की, सान्निध्य लिया और अपने जीवन को धन्य किया। अयोध्या का हर घर, गली, मार्ग, चौराहा, महल, मालिया, छाजा, कंगूरा अनंत-अनंत दीपकों की रोशनी से जगमगा उठा और वहां उपस्थित हर दिल ज्योति की जगमगाहट से अंतर-बाहर ज्योतिर्धर हो गया। मेवाड़ में प्रचलित रामधारी ख्याल में सांगडिये रामदला की आरती के समय गाते हैं-

**जगमग-जगमग जोत जगी रे।**
**रामजी की आरती होन लगी रे।।**
**केसर धूप कपूर की बतियां।**
**आरती करत सखा मिल सखियां।।**
**रामजी की रटना होन लगी रे।**
**काली कलूटी रात भगी रे।।**

कहते हैं, ऐसी दीपकों की दिव्य-ज्योति सर्वत्र पूरे देश में की गई और तब से ही दीपावली का त्यौहार प्रारंभ हो गया, जो अब तक भी उसी श्रद्धा-भावना तथा आस्था-उमड़ाव का प्रतीक बना हुआ है। रामधारी ख्याल आगे जाकर रासधारी ख्याल के नाम से जाने गये, किंतु उनका कथानक रामजीवन का ही बना रहा।

रामजी की अगवानी में राम के भक्तों ने अयोध्या में अपनी उपस्थिति से रामदर्शन के प्रमाणस्वरूप राम-रज और उनकी अनुपस्थिति में राजपाट संभालने वाली उनकी खड़ाऊ का धोवन-पानी प्राप्त किया। अयोध्या से लौटकर भक्तों ने जहां-जहां राम-रज डाली, वहां कालांतर में गेरु रंग की एक विशाल खान बन गई और जहां खड़ाऊ के धोवन का छींटा गिरा, वहां श्वेत-धवल खड़ी की खान निकली।

**राम-रज हड़मची :**

मेवाड़ में गेरु रंग की मिट्टी और डलों के रूप में जो खान-संपदा मिलती है, उस राम-रजी माटी को हड़मची कहते हैं। दरअसल उस राम-रज को प्राप्त करने की जो हठ-होड़ मची थी, वही हड़मची के रूप में आंचलिक पहचान बनी हुई है। यही स्थिति खड़ी अर्थात् खडिया मिट्टी की है। दीपावली पर हर घर की सफाई के उपरांत हड़मची के घोल की लिंपाई कर आंगन में खड़ी से भांति-भांति के मांडने मांडे जाते हैं। इन मांडनों में चौक और आंगन की सज्जा के प्रतीक बड़े ही आकर्षक तथा मनमोहक सुहावनी भांतों के मांडनों के साथ-साथ रामजी की खड़ाऊ के रूप में पगल्याजी की दर्शना देते मांडनों की मुलकान राम-रंजन की सौगात देती है।

राम-पधारन का अयोध्या में विविध रूपों में मंगलाचार हो रहा है। एक हरजस में सियावर की जै-जैकार के साथ उन्हें बधाने का मंगलाचार गाया जाता है जिसमें कहा गया है- आज का दिन बड़े ही आनंद का है। अयोध्या में राम-लक्ष्मण-जानकी का पधारना हो रहा है। उनके मंगल गायन पर सोने-चांदी की ईंटों से नवखंड वाला महल बनवाओ। सोने-चांदी के कलश से उनकी आरती करो। रघुवर को कत्था-चूना लगा हुआ पान चबाने को दो। सोने की थाली में उन्हें भोजन कराओ। सोने की झारी में गंगाजल पिलाओ। सोने की थाल में रत्नजड़ित पासे से उन्हें खेलाओ। हिंगलू के ढोलिये पर फूलों की सेज सजाकर उन्हें पोढ़ाओ। आज का दिन बड़े आनंद का है। अयोध्या में राम का पदार्पण हो रहा है-

**आज को दन आनंद अयोध्या में राम पधार्या।**
**राम पधार्या ने लछमण आया, अयोध्या में हुया मंगलाचार।।**
**अयोध्या में हुया जै-जैकार।।अयोध्या.।।**
**सोना रूपा की ईंट पड़ावो, नौ खंड्यो म्हेल चुणावो।।अयोध्या.।।**
**सोना रूपा को कलस मंगावो, सियावर ने जाय वंदावो।।अयोध्या.।।**
**सोना रूपा की आरती संजोवो, सियावर ने जाय उतारो ।।अयोध्या.।।**
**पाको सो पान कलाई को चूनो, रघुवर ने जाई चबावो।।अयोध्या.।।**
**सोना की थाला में भोजन परुसो, रघुवर ने जाई जिमावो।।अयोध्या.।।**

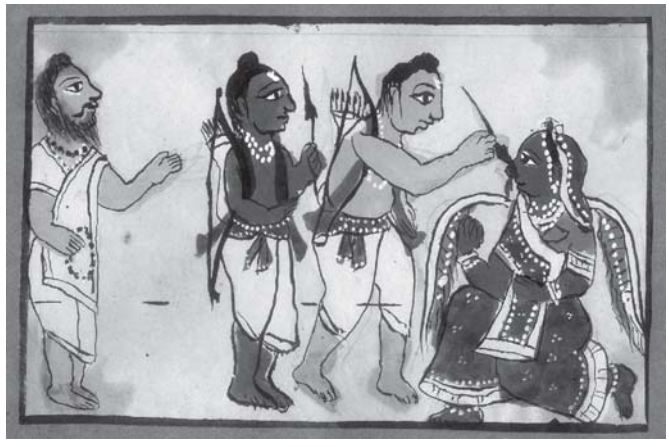

**सोने की झारी में गंगाजल पाणी, सियावर ने जाय पिलावो ।।अयोध्या.।।**
**सोने की थाल जड़ाऊ का पासा, सियावर ने जाय खेलावो ।।अयोध्या.।।**
**हिंगलू को ढोल्यो ने फूलां छाई सेजां, सियावर ने जाय पोढ़वो ।।अयोध्या.।।**
**अयोध्या में राम पधार्या, आज को दन आनंद अयोध्या में राम पधार्या**
**राम पधार्या ने लछमण पधार्या, अयोध्या में हुवा मंगलाचार ।।अयोध्या.।।**

भारतीय पट्ट चित्रों की परंपरा में कपडे पर विशेष विधि से जो चित्र मांडे जाकर विशिष्ट वाचकों द्वारा ग्राम्य-जीवन में जो मनौतीमूलक रंजन किया जाता है, वह चित्रफलक, पड़ अथवा फड़ नाम से लोकप्रिय है। इनमें देवनारायण तथा पाबूजी की पड़ों ने पूरे विश्व में ख्याति अर्जित की है। इन पड़ों के अलावा उनके अत्यंत लघु रूप में जो पड़क्या प्रसिद्धि लिए है, उसे रामदला नाम से जाना जाता है। इसके प्रचलित अन्य नामों में 'भगवान का चंदोवा' तथा 'रामदला का पाटिया' है।

**रामदला की पड़ :**

इस पड़ के साथ अन्य पड़ की तरह लंबी गाथा तथा उसकी गावणी अथवा गायकी नहीं होती। केवल चित्रफलक होते हैं, जिन्हें दर्शाकर एक-एक पंक्ति में वाचना की जाती है। रामदला के इस चित्रपट को भोपे दिखाकर धानचून इकट्ठा करते हैं। कालांतर में रामदला में रामचरिताख्यान के अलावा अन्यान्य तीर्थों, देवताओं, भक्तों तथा उन विशिष्ट यजमानों के चित्र-नाम भी जुड़ते गये, जिन्होंने रामदला वाचन को विशिष्ट भेंट-भेंटावण से सम्मानित किया।

**राम-कावड़ :**

ऐसा ही कुछ राम-कावड़ के वाचकों ने भी किया। प्रारंभ में काष्ठ निर्मित एक पाट अर्थात् पाटिया की ही कावड़ थी, जिस पर राम-जानकी के चित्र मंडे होते थे। धीरे-धीरे रामजीवन की विविध झांकियां दर्शाई गईं और ज्यों-ज्यों चित्रकथा के रूप बढ़ते गये, त्यों-त्यों कावड़ में पाट जुड़ते गये और एक पाट की कावड़ के आठ-आठ, दस-दस पाट तक का रूप ग्रहण कर लिया लेकिन कावड़ का भी वही हश्र हुआ जो रामदला का हुआ। विभिन्न तीर्थों, देवी-देवताओं के अलावा यजमान अधिक जुड़ते गये, जो हर तीसरे वर्ष की फेरी में कावडियों को खासा इनाम-बख्शीश करते थे।

कावड़ का प्रारंभिक रूप रामजीवन की चित्रात्मक गाथा का वाचन-श्रवण ही था। इसीलिए उसे 'रामजी की कावड़' कहा गया। वाचक कावडिया भाट कावड़ को बड़े यत्न से लाल कपड़े में बांधे रखता है और सुनाते समय पवित्र तन-मन से जमीन पर आसन लगाकर एक हाथ में, गोदी में थामे रहता है। दूसरे हाथ से पट चित्रित चित्रों को मयूरपंख का स्पर्श दिये विशिष्ट लहजे में प्रत्येक चित्र का अरथावण करता है। प्रारंभ में उसी लहजे में अपने गाम-नाम का परिचय देता कावड़ वाचन प्रारंभ करता है। पूरी कावड़ में लगभग सौ के करीब चित्र होते हैं। इन चित्रों से कई तरह की जानकारी मिलती है। रामायण के अलावा महाभारत के चरितों तथा लोकजीवन में चर्चित विशिष्ट व्यक्ति, संत, महंत, विशिष्ट भक्त तथा प्रमुख दानदाता का स्मरण कावड़ में पाकर तत्कालीन समाज-परिवेश का कई दृष्टियों से अध्ययन किया जा सकता है। पौराणिक आख्यानों के

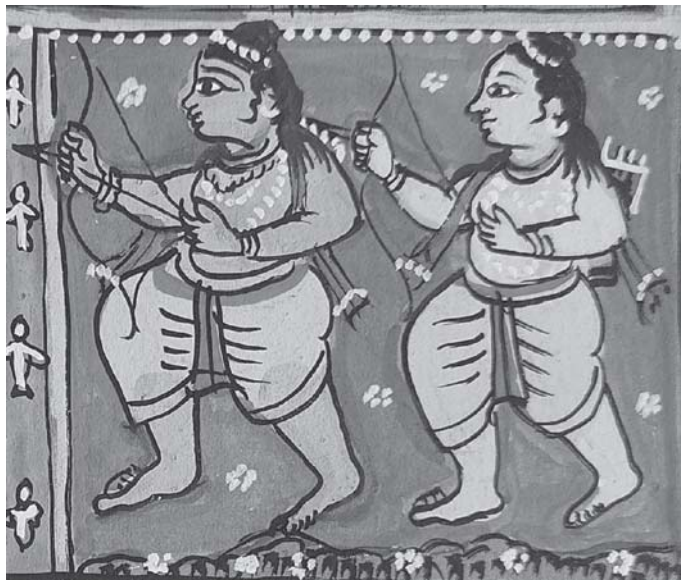

चरित्रों पर भी जो कुछ दरसाव मिलता है, उसके साथ लोकजीवन में जुड़े जो मिथक हैं, वे भी बड़ी रोचक जानकारी संकेतित करते हैं। वाचन के समय कावडिया बार-बार राम नाम उच्चरित कर सबको राम-शरणमय होने की सुगत देता है।

**रामजी के चीड़ा-चीड़ी :**

फसल पकाई पर जब मक्की के पौधे में मांजर-मूंछ का गुच्छा भुट्टे के सिर पर चोटी की तरह पत्तों के आवरण से बाहर निकलने को होता है, तब धीरे-धीरे श्वेत मूंछें कच्चेपन की कंचुकी छोड़ पक्केपन की प्रतीक रूप में भूरापन लेती हुई काली यानी गहरी भूरी दिखने लग जाती है। यह स्थिति भुट्टे में दाने आकर उसके पकने की स्थिति का दरसाव होता है। ऐसी स्थिति में कुछ भुट्टे उसके डंठल से अलग कर रामजी के नाम रख दिये जाकर या तो किसी देवरे में चढ़ा दिये जाते हैं या फिर किसी साधु-तपसी को दे दिये जाते हैं। यही स्थिति ज्वार के कण भरे हुए गुच्छे की होती है जिसे पेंकड़ा कहा जाता है। सन् 1945 से 1952 के बीच मैं अपनी मां के साथ अपने गांव कानोड़ से बाप-दादा के छोटे से गांव अरनिया जाया करता था और सप्ताह-दो सप्ताह रहता था, तब पटेल हेमाबा, भेराबा की चौपाल-धूणी पर कई लोग जब जाओ, तब ही बैठे तापते, तमाखू पीते मिल जाया करते थे।

मैं उनकी आपसी बतरस को बड़े ध्यान से सुना करता था। वहीं पता लगा कि कोई भी फसल पकने पर पहली बार उसे राम के नाम खेत से निकाल स्वयं उपभोग नहीं करते हैं बल्कि धर्मार्थ अन्यों के लिए निकालते हैं। गेहूं, मक्की, ज्वार, बाजरा, चीणा जैसी फसल का आंशिक हिस्सा उसके मूल डंठल सहित खेत में ही खड़ा छोड़ देते हैं ताकि कोई भी चीड़ा-चीड़ी उसे अपना चुग्गा बना सके। छोड़ते समय वे जोर-जोर से उनको हेला भी देते-कहते-

**रामजी रा चीड़ा, रामजी रा खेत।**
**आओ रा चीड़ा, खाओ धप पेट।।**

अर्थात् रामजी के सभी चीड़ा-चीड़ी और रामजी के ही सारे खेत।

सभी चीड़ा-चीड़ी आओ, खाओ भरपेट। यहीं पूरे गांव की गायें चरने के लिए चोपे पर इकट्ठी होतीं। बचपन से गायें चराती-चराती साठ वर्षीय बुढिया गांव वालों के लिए 'गायां मां' ही बनी हुई थी। छोटे-बड़े सभी उसे इसी नाम से जानते थे। चोपे से ठीक समय वह सारी गायों को चराने के लिए छापरड़े ले जाती और संध्या को जब गायें आतीं तो धूल भरा आकाश गोधूलि का समय सार्थक करता लगता।

**राम डींगरा :**

एक दिन मैं अपनी गाय चोपे छोड़ भलावणी देता गायां मां से पूछ बैठा- मां, गांव की इतनी सारी गायों को घेरकर ले जाना और वापस सुरक्षित लाना हर एक के बूते की बात नहीं है। गायें भी कई तरह की रींडी-भींडी, छालर-मोगर, मारकणी, भेटी देणी, बाड कूद फसल बिगाडनी, हरियावड़ी तथा कई खोट की होती हैं। मां अपने हाथ में पकड़े लट्ठ को आकाश की ओर ऊंचा करती बोली- हरियावड़ी गाय के गले से लेकर दोनों पांवों के बीच तक का लकड़ी का मोटा 'राम डींगरा' बांध देते

हैं। यों इशारों और आंकड बोली से सभी गायें मेरे इशारे को समझ जाती हैं। नहीं समझने पर हाथ में रखा 'राम लट्ठ' सब पर धाक जमाये रखता है। इसका जोर का एक सौटा पड़ जाये तो सब ठिकाने आ लगती हैं। कहावत भी है- 'मार आगे भूत भागे।' अर्थात् लट्ठ की मार-वार से तो गाय क्या भूत तक भागते नजर आते हैं। वैसे सबका रखवाला राम है- 'राम राखे एने कोण मारे।' उम्र के अनुसार रामली, रामीबाई, रामी भाभी, रामा भाभा, राम्या, रामल्या, नानोरामो, रामलाल, रामलला, रामशंकर, राम बा, रामरसिया जैसे नामों से कोई गांव अछूता नहीं मिलेगा।

कहना नहीं होगा कि राजस्थानी आदिवासी जीवन संस्कृति और कला के किसी पक्ष का छुअन अथवा स्पर्श भगवान राम के बिना अधूरा है। कोई त्यौहार, उत्सव अथवा उमंग का अवसर हो, घर की लिंपाई-पुताई-सफाई हो, पशुओं को सजाने-संवारने का मौका हो; राम का नाम, राम के छप्पे, छापे और राम भगवान से सम्बद्ध मांडणे, थापे मुलकाते मिलेंगे। राम-रज हड़मची घर-बाहर की शोभा ही नहीं बनती, गायों, बैलों के सींग और शरीर तक उसके रंग-थापों से रंगे-थपे जाकर शोभित होते हैं।

**रामजी का घोड़ा :**

राजस्थान में टिड्डीदलों की फसल बर्बादी बहुप्रसिद्ध रही है। टिड्डी समूह रूप में आक्रामक तेवर लिए किसी खेत पर टूट पड़ता है और देखते-देखते पूरे खेत की खड़ी फसल चौपट कर देता है। छोटी ऊंदरी के कालाजी-गोराजी देवरे पर केसोजी ने बताया कि टिडुए मारवाड़ में बहुतायत में देखे जाते हैं। इसीलिए उधर उनके गीत मिलते हैं। एक गीत में टिडुए से विनती की गई है कि सब कुछ चौपट कर दिया है। फसलें की फसलें बरबाद हो गई हैं। मोठ बाजरे का कहीं नामो-निशा बाकी नहीं रहा। छोटे-छोटे बालक बिलख रहे हैं। खाने को तरस रहे हैं अत- टिडुए तुम मेहरबानी कर इस देश से चले जाओ। भूलकर भी कभी मारवाड़ की धरती मत देखना। गीत की इन पंक्तियों में करुणा का रुआंसीभरा स्वर जब कानों में पड़ता है, तब श्रोता भी अपने को रोक नहीं पाता है। भीगे आंसुओं से वह भी अनुनय विनय करता पाया जाता है-

**म्हारा टिडुआ रे.... टिडुआ रे....**
**फेर मती आजो भोली मारवाड़ में**
**मोठ भी खाग्यो टीडु, बाजरो भी खाग्या**
**खाग्यो म्हारे नानडिया रो नूर म्हारा टिडुआ रे....**

इसीलिए रेगिस्तान का यह टिडु मेवाड़ में 'रामजी का घोड़ा' नाम से आदरित है। इस क्षेत्र में इंद्रदेव के कुपित होने से कई अकाल पड़े हैं, पर टिडुओं ने कभी इस क्षेत्र को बरबादी नहीं दी। कोई दल भी आक्रामक रूप में नहीं देखा गया। यदा-कदा कोई टिडु कभी उड़ता आ भी जाता है तो सभी प्रसन्न हो शुभ मानते हैं।

रामजी के घोड़े की तरह इधर रामदेव बाबा का घोड़ा चर्चित रहा है। प्रसिद्धि है कि रामदेवजी अपने घोड़े पर सवार हो इधर से निकल रहे थे, तब किसी भक्त पर संकट आया सो वे अपने घोड़े को उसके चरवादार जरगा के भरोसे छोड़ कह गये कि तत्काल लौट रहा हूं। जरगा घोड़े के साथ खड़ा-खड़ा उनकी बाट जोहता रहा पर रामदेवजी नहीं लौटे। घोड़ा और जरगा खड़े-खड़े कंकाल हो गये। रामदेवजी को अचानक स्मरण आया। भूल का अहसास हुआ तो लौटे। देखा तो दोनों कंकाल रूप में मिले। दोनों को उन्होंने सरजीवित किया और जरगा की चाह के अनुसार उस पूरे पहाड़ी परिक्षेत्र में धूणी कायम कर उसका नाम ही जरगा रख दिया तब से वहां जरगाजी का मेला लगता आ रहा है। रामदेवजी के साथ जरगा का नाम भी अमर बना हुआ है। सब राम में समाविष्ट हैं। राम-नाम सबमें बीज-मंत्र है जो अपने में सर्वथा पूर्ण है। बीज निरन्तर फूलता, फूटता विकसित होता है। समग्र सृष्टि इसी राम-नाम से संचरित एवं संचालित है।

**कद आवोला रमैया :**

भगवान राम के साथ इधर प्रत्येक आदिवासी गर्व करता है कि उन्होंने शबरी के घर मेहमानी की और उनके हाथ का बोर खाया। मेवाड़ में

दो तरह के बोर मिलते हैं। एक तो पेमली बोर जो कि किंचित् हरापन लिये होता है और दूसरा चणबोर जो पकने पर लाल होता है और छोटे आकार की कांटेदार झाडियों में लगता है। यह ऊंची जमीन और सूखे स्थानों पर बहुतायत में मिलता है। दीपावली पूजन पर मिट्टी के दीयों में शुभ-मंगल के प्रतीकार्थ चणबोर भी तेल को तरी देता है।

शबरी की तरह हर आदिवासी महिला मेलों-ठेलों या अन्यत्र उल्लास के अवसरों पर जब समूह रूप में गाती-नाचती-ठुमकती एकत्र होती हैं तो रामजी के रूप में अपने गांव में रमैया का आह्वान कर फूली नहीं समाती है-

**कद आवोला रमैया म्होरे गाम**
**ऊबी जोऊं बाटड़ली**

अर्थात् मेरे गांव कब आओगे रमैया! मैं खड़ी-खड़ी तुम्हारी बाट जो रही हूं।

राम सवत्र व्यापत हैं। चेतन में ही नहीं, जड़ में भी। वे हर समय अपनी उपस्थिति की छांह तथा छाप देते लगते हैं। दो किनारों के बीच जैसे नदी सुरक्षित हो, निरंतर प्रवाह लिए बहाव दिये रहती है, किंतु उनसे मिलने का अहसास करती हुई भी मिल नहीं पाती है। आदिवासी जनजीवन में राम भी ऐसे ही रमते रहते हैं।

आदिवासी मानते हैं कि राम हमारे सबके आम हैं। उनके होने से ही हमारे चौपाये चुस्त-दुरुस्त हैं। रुंख-वनराई आबाद है। बस्ती आबाद है। नदी-नाले साबत हैं। कहीं कोई ओझका नहीं है, लेकिन जब अतिवृष्टि होकर जोर-शोर का पानी बस्ती को घेर लेता है। तालों-सरोवरों का पानी बेतहाशा होकर ओटे चलते बस्ती को जलमग्न कर देता है। अनावृष्टि में सब ओर सूखा ही सूखा हो जाता है। वनराई की हरीतमा टाटली हो जाती है। दुधारु पशुओं का दूध सूख जाता है। धरती धूजा मारने लगती है। लोग दाने-दाने को मोहताज हो जाते हैं, तब लगता है राम ने रूठा मान लिया है। ऐसी स्थिति में गांव के किसी राम नामधारी रामधनिया, रामरखिया, रामलछिया, रामरूणिया अथवा रामरसिया को पंच-पंचायती में बुलाकर पंचायती ढोल का डाका दिलाया जाता है। तब अतिवृष्टि का पानी संयत हो जाता है और अनावृष्टि में रिमझिम-रिमझिम बरसात होने लगती है। यही राम नाम की सार्थकता है।

अपने बचपन में कमलवाले तालाब के ओटे से अति वर्षित पानी पूरे गांव में पसर गया था, तब ऐसा ही टोटका किया गया था और देखते-देखते पानी का बहाव मंद पड़ गया था। याद यह भी पड़ रहा है कि तब मन्ना मीणा के घर जिस बालिका ने जन्म लिया था, उसका नाम रामजन्मी रखा था जो चलता नाम रामजणी के रूप में जानी गई।

ऐसा भी होता है जब गाम पटेल की उपस्थिति में किसी होशियार समझेबुझे ज्योतिषियों को बुलाकर राम मनावण का टीपणा दिखाया जाता है, महिलाएं तब समूहबद्ध गीत गाती हुई टेर-पर टेर देती हैं-

**म्हारा जूना जोसी राम मिलण कद होसी।**

अर्थात् हे जूने पुराने जोशी! हमारा राम मिलन कब होगा?

**राम-नाम की महिमा :**

सच तो यह है कि राम की ही पकड़ में पूरा पर्यावरण है। हवा, रोशनी, अगन, पानी, वनस्पति सबमें उसकी आतम बसी हुई है। सारे उसके इशारे में खूंटी बंध हैं। वही रसवटी है। वही रसायन है। रसखान है। उसकी मुट्ठी में अकाश कैद है। उसके पांवों में पृथिमी परिचालित है। उसकी हवाखोरी में सबकी सांसें हिंडोले ले रही हैं। उसकी अगन में सभी तपसी बने हुए हैं। उसके जल में सब जलजात बन खिलखिला रहे हैं। वही एक है। अनेकों में एक और एक में अनेकानेक।

राजस्थान में मेवाड़-वागड़ में आदिवासियों की सबसे घनी बसावट है। किसी भी आदिवासी से जब उसका नाम पूछा जाता है तो वह प्रथमत: तो यही कहता है- 'नाम तो श्रीराम को।' फिर अपना नाम, जिस दिन पैदा हुआ, उस दिन से जोड़ता बताता है- 'म्हारो नाम दीतो, होमो, मंगलो, हकरो, थावरो।' यहां दीतो से तात्पर्य दीतवार-रविवार, होमा सोमवार से, मंगलो मंगलवार से, हकरो हकरवार-शुक्रवार से तथा थावरो थावर-शनिवार से है।

लोककला की संस्था भारतीय लोककला मंडल में रहते हमारी प्रार्थना ही- 'थोड़ा नेड़ा बसोनी म्हारा राम रसिया' भजन की होती थी। मीरांबाई की छापवाला यह भजन आदिवासी भजन मंडली से कलाकार दयाराम भील लाया था। वह भवाई नृत्य करते-करते भवाई नाम से ही अधिक जाना गया। इस भजन में मीरां का कृष्ण भी रामरसिया है। सौ से अधिक वर्ष पुराना यह भजन अब भी मुझसे विलग नहीं होकर अंधेरे का उजाला बन मेरा मार्ग प्रशस्त करता है-

**थोड़ा नैड़ा बसोनी म्हारा राम रसिया**
**राम रसिया, मीरकणी रे हिरदां बसिया ओ रामा....**
**राज रे कारणिये म्हैं तो घोड़ी पलाणी रामा**
**ऊपर जीणा कसिया ओ रामा....**

**राज रे कारणिये म्हैं तो म्हेल चुणाया रामा**
**और लगाया जारी जसिया ओ रामा....**
**राज रे कारणिये म्हैं तो भोजनियो बणायो रामा**
**और बणाया घेवर चकिया ओ रामा....**
**बीई मीरां ने प्रभु राम मिलाद्यो**
**हरि रे चरणां में म्हारा मन बसिया**
**थोड़ा नैड़ा बसोनी म्हारा राम रसिया।**

अर्थात् रामरसिया! तनिक मेरे नजदीक आ बसो। मीरां के ह्रदय में आ बसो। तुम्हारे लिए मैंने घोड़ी पर जीण पलाण कसे। महल बनाकर झाली झरोखे लगवाये। भोजन में घेवर चकी बनाये। मीरां के प्रभु मुझे राम से मिला दो। उनके चरणों में मेरा मन बस गया है। तनिक नजदीक आकर सदा के लिए मेरे ह्रदय में बस जाओ।

**मुखौटों में राम :**

लकड़ी और मिट्टी-कुट्टी कागज के बने मुखौटों में राम परिवार के अंकन भी कई रूपों में देखने को मिलते हैं। छोटे-छोटे बच्चे मोटे कागज के बने मुखौटे लगाकर विविध भेशों में अपने रंग-ढंग में रामायण खेलते हैं वहीं बिसाऊ की रामलीला जो मूक लीला के रूप् में चर्चित है, उसमें सभी पात्र अपने मुंह पर मुखौटे धारण करते हैं।

**आदिम जीवन में राम रमैया :**

आदिवासी चाहे कहीं के हों, उनकी आदिम कला-संस्कृति, जीवन-परिवेश, संस्कारजनित सरोकार, प्रथा-परंपरा, प्रकृतिजन्य मान्यताएं, सृष्टि विषयक मिथक, अच्छी-बुरी आत्माओं से जुड़ी कथाएं, मांदगी से मुक्ति के उपाय, आराधना-उपासना के संदर्भ उनके आदिमपन की अनमोल विरासत के वे दस्तावेज हैं जो सांसारिक रचनावली के विराट स्वरूप को दिग्दर्शित करते हैं। उनके उद्भव और आख्यान से लेकर विकास के वर्चस्व के पड़ाव को संकेतित करते हुए कई प्रतीकों तथा मिथकों का संबल बनते हैं। धरती और आकाश के भराव तथा शून्यजनित रहस्य वैभव के वर्चस्व को स्थापित कर किसी शक्ति सम्पन्न सत्ता के हाथों की डोर में बंधे होने का अटूट विश्वास बुनते हैं।

**सर्वत्र राम**

जनजातियों में राम सर्वत्र है। प्राणी के हर घट तथा जीवन के हर पट में राम का अस्तित्व है। राह चलते किसी पथिक को उसका नाम पूछने पर वह यही कहेगा- 'नाम तो श्रीराम का' और उसके बाद अपना निजी नाम बतायेगा। होमा, मंगला, बुधा, वसता, हकरा, थावरा, दीता ये सब नाम दिनों के हैं, सप्ताह के सातों दिनों के। इनमें से जिस दिन वह जन्मा है वही दिन उसके नामकरण की साख लिए है। कोई गांव ऐसा नहीं मिलेगा जहां राम नाम का प्राणी न हो। मैंने ऐसे व्यक्ति देखें हैं जो अपने जीवनकाल में अपनी उम्र के अनुसार राम के नाम की पहचान लिए है। नाम की यह स्वीकृति-सहमति लोकसम्मत होती है। बचपन में जब उसकी उम्र बालपन लिए होती है तब वह नाना रामा के नाम से जाना जाता है। नाना से तात्पर्य छोटा यानी नन्ही उम्र से है। बाल वय से है। बालक राम से है जैसे बालपने में विवाह करनेवाला बालक बनड़ा कहलाता है वैसे ही बालपने का लडक़ा बाला राम के रूप में याद किया जाता है। यही बाला वाल्हा यानी प्रिय, लाडला, प्यारा रूप में सबकी आंखों का तारा बना रहता है।

जवानी में यही नाना रामा, राम लाल बन जाता है। अति प्रियजनों में राम लाल, रामा भाई तथा रामूड़ा के रूप में पुकारा जाता है। आधुनिकता की हवा पाकर राम लाल, राम चन्द्र होते भी देखे गये हैं। बुढ़ापा आ जाने पर बचपन का नाना रामा और जवानी का राम लाल रामा बा के रूप में आदरणीय बन जाता है। ये संबोधन व्यक्तिवाची, परिवारवाची तो बनते हैं, समूहवाची भी हो जाते हैं। एक घर का नाना रामा, राम लाल और रामा बा हर घर का, घर-घर का, पूरे गांव का तथा चौखले का उसी नाम रूप में संबोधित होने लगता है। यही लोकजीवन की, लोकशक्ति की, समूह की और जन-जन की सार्थकता भी है।

सच तो यह है कि राम नाम ही जीने का सबसे बड़ा संबल है। उठते-बैठते, खाते-पीते, चलते-सोते हर घड़ी राम की ही स्वांस-धारा में जीवन की नाड़ी चलायमान रहती है। राम जीव-न का रमण है। चलन है। विराम नहीं है। दुख में सुख में राम की ही कृपादृष्टि है। सुख है तो राम है आर दुख है तो भी राम है। वही दातार है। स्वांस को जोड़ने वाला उसका हर तार ही जीवन का सार और सत्व है।

**कै तो राखै राम :**

ऐसे राम की शरण में जाकर आदिवासी जगत अपने जीवन को निश्चिंत बनाये रखता है और कभी रोगग्रस्त भी हो जाता है तो उसी के नाम का इलाज चलता है। यह इलाज अधिकांशतः दग्ध चिन्ह के रूप में होता है। बड़ी से बड़ी बीमारी का इलाज ही या तो राम का नाम या उसके नाम का डाम, यानी दग्ध चिन्ह है। गांवों में ऐसे समझेबुझे होते हैं जो राम के नाम की तांती, डोरा या कि धागा बांधते हैं या फिर जिस स्थान पर कोई बीमारी उठ आती है, उस स्थान का दागते हैं। यह दागने की क्रिया ही डाम कहलाती है। इसीलिए कहावत भी चल पड़ी- 'कै तो राखे राम ने कै राखै डाम।' अर्थात् या तो राम ही जीवित रख सकता है या फिर डाम।

मैंने ऐसे कई समझेबुझे व्यक्ति देखें हैं जिन्होंने हर बीमारी के इलाज के लिए डाम को माध्यम बनाया है। उदयपुर के पास के बडी गांव

में एक व्यक्ति ने अपने जीवनकाल में एक लाख डाम देकर लोगों को ठीक किया। पहले हर बीमारी का इलाज डाम था।

**कै राखै डाम :**

तब आज की तरह नाना प्रकार की बीमारियां भी नहीं होती थीं। मैंने तो कहानी के माध्यम से बीमारी का शमन होते भी देखा। मेरे अपने ही गांव में एकांतरे यानी एक दिन छोड़ एक दिन अर्थात् एक दिन के अंतराल से आनेवाले बुखार का इलाज एक उत्तमा बा थे जो कहानी के माध्यम से एकांतरा पीडित व्यक्ति का इलाज करते थे।

डाम का इलाज करने वाले अधिकांशत: नस के ज्ञाता होते हैं। नस के अनुसार बीमारी को पकड़ते। कई बार नस से परे भी बीमारी होती। मुझे स्वयं को बचपन में पेट पर, नाभि और फेंफड़ों के अधबीच पुरानी मिट्टी की मटकी के टुकड़े जिसे ठीकरी कहते हैं, उसे गर्म कर दागा गया था, मैं तब भी ठीक नहीं हुआ तो उसी के पास एक छोटा डाम और दिया गया जिसकी निशानी आज भी बनी हुई है। यह बीमारी फीयेकालजे की थी।

बीमारी और उससे जुड़े स्थान के अनुसार डाम अत्यंत पतले लोहे के तार, बडे मोटे तार, कंकड़, ठीकरी आदि को अच्छी तरह गर्म कर चिपका दिया जाता है। मेरे अग्रज डॉ. नरेन्द्र भानावत को भी इसी प्रकार पीठ पर दाग कर ठीक किया गया था। मनुष्यों में ही नहीं, जानवरों में भी डाम देने की प्रथा रही है। यह प्रथा तो गांवों में अब भी कहीं-कहीं देखने को मिल जाती है।

राम के साथ सीता का नाम नहीं आया तो राम भी अधूरे हैं और सीता तो राम के बिना हो ही नहीं सकती। इसीलिए यहां कई लोग अपना नाम सीताराम लिए हैं। दोनों हैं तो जीवन की सकलता है, सफलता है। राजस्थान का दक्षिण भाग उदयपुर संभाग मेवाड़ कहलाता है। इधर सीता का नाम और उसके नाम से दो बडे मेले जनजातियों के लिए वरदान बने हुए हैं। इनमें से एक हाडौती क्षेत्र का सीताबाड़ी मेला तथा दूसरा मेवाड़ क्षेत्र का सीतामाता मेला प्रसिद्ध है।

**सीताबाड़ी मेला :**

हाड़ौती क्षेत्र का सीताबाड़ी नामक अत्यंत प्राचीन धार्मिक स्थल राम-सीता की स्मृति का जीवंत गाथारूप बना हुआ है। यहां के भग्नावशेष देख लगता है कि वह काल 12वीं-13वीं शताब्दी का रहा होगा जब वहां राम, लक्ष्मण, सीता के नाम से बने कुंड कई तरह के मिथक लिए लोकजीवन के श्रद्धापात्र बने हुए हैं। कोटा से लगभग 92 किलोमीटर की दूरी लिए उत्तर-पूर्व में स्थित सीताबाड़ी धर्मस्थल आदिवासी सहरियों के लिए सर्वाधिक श्रद्धामय है।

कार्तिक पूर्णिमा पर खासतौर से यहां विशाल मेला लगता है। चन्द्रग्रहण सूर्यग्रहण जैसे अवसरों पर भी विशाल जनसमुदाय यहां एकत्र हो स्नान आदि कर पवित्र पुण्य कमाते हैं। प्रसिद्धि है कि यह स्थल वाल्मिकी आश्रम के रूप में आबाद रहा। अग्नि परीक्षा के उपरांत भी सीता का परित्याग किया और यहां उसे कष्ट सहने के लिए आना पड़ा। यहीं लक्ष्मण वाल्मिकी तथा अन्य अरण्यवासियों ने सीता के निवास की व्यवस्था जुटाई। लव-कुश का जन्म भी यहीं हुआ और यहां वे शास्त्रिवद्या तथा शास्त्रज्ञान में शिक्षित हुए। मुख्य रूप से सहरिया आदिवासियों ने यहां रहकर हर तरह का सहयोग किया और आश्रम में अपनी सेवाएं देकर सीतामाता की सर्वप्रकारेण सुख-सुविधा का उपक्रम किया। आज भी सहरिया लोग इस भूमि को उसी श्रद्धा-समर्पण की भावना से पवित्र और पूजनीय समझ नमन करते हैं।

यह सारा स्थान चमत्कारिक तथा श्रद्धापूर्ण रहस्यों से अटा हुआ है। कुंड में नहाने से कोढ़ तथा कई प्रकार के चर्मरोग दूर हो जाते हैं। सीता कुटी तब कैसी बनी होगी, इसकी झांकी वर्तमान में भी बहुत कुछ संकेत देती लगती है। वृक्षों की सूखी टहनियों और पत्तों से निर्मित यह कुटिया अपनी निर्मिति में इस प्रकार गठन-गुंथन लिए है कि न तो हवा के झोंके से ही वह हिल पाती है और न आंधी-अंधड़ का ही प्रभाव उसे पराजीत कर पाया। कुटिया के अन्तः कक्ष में सीता के पदचिन्ह हैं जिन्हें सीतामाता के पगल्ये के रूप में पूजा जाता है।

इस क्षेत्र की सीमा मध्यप्रदेश को स्पर्श करती है। पगडंडी मार्ग से मात्र बारह किलोमीटर दूर गुना पहुंचा जा सकता है। यहीं से चलकर दंडकारण्य वन में प्रवेश पाया जाकर बहुत सारे वे स्थल दृश्यगत होते हैं जिनका वर्णन तुलसीदास ने रामचरित मानस में किया है।

सीताबाड़ी परिक्षेत्र आम्र वृक्षों का सघन वनांचल है। पदे-पदे आम्र वृक्ष अपनी छायादार सघन छवि लिए सबको मोहित किए रहते हैं। ग्रीष्मकाल में हर वृक्ष आम फल से लटालूट रहता है। जो भी आता है, भरपेट आम का मधुर फल सेवन करता है। इसकी खासियत यही है कि कोई इसे इस क्षेर्त से बाहर नहीं ले जा सकता। सीमा बाहर जाने पर वह फल किसी काम का नहीं रहता। या तो सूख जाता है या सड़ गल जाता है।

**लव-कुश झूलना :**

चित्तौड़ जिले के बड़ीसादड़ी से कुछ किलोमीटर की दूरी पर मूंजवा पंचायत का सीतामाता स्थल भी पूरा का पूरा सघन वन से आच्छादित है। इधर भी वाल्मिकी का आश्रम है और सीता रही थी। मूंजवा पंचायत के छोटे-छोटे सौलह खेड़े हैं जिनमें आदिवासी भील-मीणा की बस्ती है। यह मेला ही आदिवासी मेले के रूप में अधिक जाना जाता है। अधिकांश वृक्ष आम और चारोली के हैं। इधर जो तलैया है, किसी वक्त उसमें पत्थर की शिला तैरती थी। वैसाखी पूर्णिमा के मेले में सन् 1953 में मैंने इस पूरे मेले का भ्रमण

किया था और वह शिला भी तैरती हुई देखी थी। इसे कई दृष्टियों से चमत्कारिक मानी जाती थी। एक नदी ऐसी भी है जिसे बारह बार पार करनी पड़ती है, शिलास्थल तक पहुंचने के लिए। यहीं पास में बड़ वृक्ष की जड़ेलियों का बना प्राकृतिक ऐसा झूला है जहां कहते हैं, लव-कुश झूला करते थे।

हाड़ौती क्षेत्र का सीताबाड़ी स्थल और यह स्थल, जंगल-जंगल की राह से सटे हुए ही थे। ऐसा अनुमान है कि दोनों स्थल एक ही थे और वाल्मिकी का आश्रम बड़ा फैलाव लिए घने जंगल से आच्छादित था। यों आज भी उदयपुर संभाग में सर्वाधिक आदिवासी भीलों की बस्ती है। ऐसी घनी बस्ती पूरे राजस्थान में अन्यर्त कहीं देखने को नहीं मिलेगी।

**जोगियों के संघ में रावण :**

जनजातियों में कई प्रकार के हरजस, भजन और भारत प्रचलित हैं। विशिष्ट अवसरों पर जहां उनका समाज जुड़ता है तब समूह रूप में मिलकर गीत-गावणी चलती रहती है। इसमें विविध देवी-देवताओं, भक्तों तथा महापुरूषों से संबंधित कई गीत भजन टप्पों में रामजीवन से संबंधित विविध घटना-प्रसंगों वाले कथन, कथानक बड़े रोचक मिलते हैं। वे कथानक आमजन में प्रचलित हैं, उनसे भिन्न मिथक बड़े रोचक और नई जानकारी प्रस्तुत करते हैं।

**सति सीता जति हनुमान :**

लक्ष्मण के शक्ति बाण लग जाता है। राम बड़े दुखी व्यथित और कायल हैं। वे कहते हैं कि कोई ऐसा व्यक्ति मिल जाये जो मेरे भाई के प्राण लौदा दे तो उसे अयोध्या का आधा राज और उससे सवाई धरती दे दूं लेकिन कोई ऐसा समर्थ सामर्थ्यवाला नहीं मिल रहा है। लोगों का विश्वास है कि ऐसी शक्ति या तो सति सीता में है या फिर जति हनुमान में। सीता के पास उसका सत, शीलव्रत और हनुमान के पास ऐसी जडीबूंटी है जिससे लक्ष्मण पुनर्जीवित हो सकते हैं। कहा है-

**सत सूं जीवाड़े माता सीता सतवंती**
**बूंटी सूं जीवाड़े हनुमान जती।**

रावण और सीता की आपसी वार्ता का एक हरजस है जिसमें रावण सीता से भिक्षा मांगता कह रहा है कि जोगियों का संघ आया है जो केदारनाथ जा रहा है। हे सतवंती नार ! तुम्हारी फेरी (बस्ती) में भिक्षा मांगने आया हूं। सीता कहती है- राम-लक्ष्मण दोनों भाई जंगल में हैं। मेरे चारों ओर कार लगी हुई है अत- मैं तुम्हें भीख देने में असमर्थ हूं।

रावण हल बताता है, उस कार के ऊपर सिंहासन, बाजोट धरो और उस पर पांव रख मुझे भिक्षा दे दो। मैं अपनी भुजा पसार भीख ले लूंगा। सीता इस पर मोतियों से भरा थाल लाती है। जोगी भेष रावण बड़ी चतुराई से सीता को उठा लेता है। कहता है- राम-लक्ष्मण को भूल जाओ। वे अभी लौटने वाले नहीं हैं। मैं तुम्हारे लिए रत्नजड़ित अगूंठी घड़ा दूंगा। गले के लिए नवसर हार ला दूंगा। हाथों में पहनने के लिए सोने का चूड़ा तैयार करवा दूंगा। इस पर सीता को क्रोध आ जाता है। उसकी शांत और सौम्य मुद्रा भयानक रूप धारण कर लेती है। गुस्से में वह कह उठती है- तेरी रत्नमूंदड़ी को आग लगा दूं। नवसर हार को तार-तार कर दूं और स्वर्ण चूड़ले पर शिला पटक नष्ट कर दूं। मेरे राम सरीखे भरतार से तुम्हारा पाला नहीं पड़ा है। तुम सेंतमेत में ही अपना राज गंवा दोगे और असाध्या दुखों से धर लिए जाओगे -

**बाळूं रे जाळूं थारो रतन मूंदड़ो**
**तट के तोड़ूं नवसर हार जी ओ**
**सिलाड़्यां पछाड़ूं थारो सोवन चूड़लो**
**म्हारे राम सरीसो भरतार जी ओ**
**रावण थारो राज गंमासी**
**घणो होसी दुखदाई ओ।**

जनजातियों में राम-सीता के विविध प्रसंगों के साथ मुझे दशरथ के उद्भव का जो मिथ-प्रसंग सुनने को मिला उसने सर्वाधिक अचरज में डाल दिया। यह प्रसंग पहले न कभी कहीं पढ़ा और न सुनने में ही आया। लोकजीवन की सुबुद्धि और सुदृष्टि का ही यह कमाल कहा जायेगा कि उनकी प्रज्ञा-मति हजारों शास्त्रों से भी अधिक ज्ञानवान और सैंकड़ों शस्त्रों से भी अधिक चलायमान सुफलदायिनी होती है।

**पौधे से दशरथ मिलना :**

इसे जनजातीय जीवन चक्रावली की ही खूबी कहा जाय कि वहां भी दशरथ की उत्पत्ति की एक मजेदार घटना मिली। उसके अनुसार अयोध्या में एक नामी सेठ था। उसके एक पंडित नौकर था जिसे वह सेठ प्रतिदिन सोने की मुहर देता था। पंडित उस मुहर को अपने घर के परिंडे के वहां जहां पानी गिरता, रख देता। धीरे-धीरे वहां एक पौधा उग आया। यह खबर रघु के पास पहुंची। वे भी नौकरी पर निकले। उन्होंने भी पंडित के जैसा ही किया। रघु ने एक दिन परिंडे के जल टपकने के स्थान को खोद दिया जिससे वहां एक-एक कर नौ रथ निकले और अंत में एक ऐसा रथ निकला जिसमें एक बालक बैठा हुआ अपने पांव का अंगूठा चूस रहा था। रघु ने उसका नाम दशरथ रख दिया।

कहते हैं वही दशरथ आगे जाकर अयोध्या का राजा बना। राम उसी के राजकुमार थे। दशरथ ही नहीं, जनजातियों में तो सीता के लिए भी कहा जाता है कि वह खेत से निकली। जब एक किसान खेत जोत रहा था तब हल चलाते सीता प्रकट हुई। यों सीता को भूमिजा और भूमि के साथ हल और हल से जुड़ी जमीन में हल की नोक से बनी रेखा भी कहा जाता

है। यह भी कहा जाता है कि जनकराज को खेती के लिए हल प्राप्त हुआ। उस हल से जोती गई जमीन की रेखा में सीता की प्राप्ति हुई।

दशरथ की इस घटना से मुझे श्रवण की याद आगई जो मामा दशरथ से ही चोट खाकर मृत्युगामी बना। इस पर श्रवण के माता-पिता ने दशरथ को भी नहीं बख्शा। सच ही है जब घोर विपत्ति का पहाड़ आ गिरता है और सदमा इस कदर हृदयघात कर देता है कि घनिष्ट से घनिष्ट रिश्ते भी वैरी बन जाते हैं और श्राप-ताप की ऐसी हाय लगती है कि उसकी लौ से बचना ही नामुमकीन हो जाता है। दशरथ के साथ भी उनकी बहिन और जमाता ने ऐसी बिताई कि अंत तक वे उससे मुक्त नहीं हो पाए और अपनी करनी पर जो उन्हें श्राप झेलना पड़ा वही उनके लिए अन्ततोगत्वा मारक सिद्ध हुआ।

**श्रवण परिवार :**

लोकजीवन में श्रवण (सरवण) विषयक कई कथा कहानी गीत और आख्यान सुनने को मिलते हैं। एक दिन एक कावडिया भाट ने अपनी कावड़ बांचते हुए उसमें चित्रित सरवण को बांचा तो मैं श्रवण के संबंध में कई सारे प्रश्न कर बैठा। उसने बताया कि कावड़ में तो श्रवण को केवल स्मरण मार्त कर लिया जाता है पर एक पूरी कहानी भी उसे याद है। यह कहानी अब तक की सुनी कहानियों से थोड़ी भिन्न और नवीन जानकारियों से युक्त थी जो इस प्रकार थी-

श्रवण सन्तन ऋषि का लड़का था। ज्ञानवंती उसकी मां थी। दोनों जन्मान्ध थे और श्रवण को बड़ा प्यार करते थे। श्रवण भी परमेश्वर की तरह उनकी सेवा करता था। श्रवण की औरत विद्यावती थी। वह बड़ी चालाक स्वार्थी तथा सास-श्वसुर की कोई सेवा नहीं करती थी। इसके पास दो पैंदे वाली एक हंडिया थी। एक पैंदे में वह खीर आदि मिष्ठान्न बनाती जबकि दूसरे में लूखे-सूखे बासी रोटी के कवे बनाती जो अपने सास श्वसुर को राब-छाछ के साथ खाने को देती। श्रवण को इसकी कोई जानकारी नहीं थी।

एक दिन श्रवण अपने माता-पिता के पास बैठकर भोजन कर रहा था तभी बाहर से बुलावा आने पर वह थाली माता-पिता के सामने रख चला गया। माता-पिता को जब थाली मिली तो उसमें रखा भोजन उन्होंने चख लिया। ऐसा स्वादिष्ट भोजन पाकर उन्होंने श्रवण से पूछा कि आज कोई त्यौहार तो नहीं है? श्रवण ने ना कहा तब माता-पिता ने बताया कि आज उन्हें इतना अच्छा स्वादिष्ट भोजन मिला है जबकि प्रतिदिन ही लूखा-सूखा खाने को दिया जाता है। श्रवण को यह सुन बड़ा दुख हुआ कि उसकी पत्नी दो तरह का भोजन बनाती है और उसके अंधे मां-बाप के साथ दोयम दर्जे का व्यवहार करती है।

पत्नी की ऐसी हरकत से श्रवण ने अपने माता-पिता को तीर्थयात्रा कराने की सोची। वह एक कावड़ लाया और उसके दोनों पलड़ों में उन्हें बिठाकर अयोध्या के निकट पहुंचा। एक दिन जब माता-पिता को प्यास लगी तो श्रवण नदी के किनारे पहुंचा और पानी भरने को झुका ही था कि उधर से शिकार पर आ रहे राजा दशरथ ने जानवर समझ बाण चलाया जो श्रवण के जा लगा। बाण लगते ही श्रवण के मुंह से निकला- हतो राम / हतनोपुर गाम / सरवण म्हारो नाम।

दशरथ यह सुन दौड़े भागे वहां आए। जब देखा कि उन्होंने अपने ही भानजे पर तीर चला दिया तो वे श्रवण के मां-बाप यानी अपने बहिन-बहनोई के पास गए और क्षमा मांगी। अंधे दम्पत्ति पुत्र वियोग में फूट-फूट कर रोने लगे। उनके मुंह से निकला- फिट रे दशरथ पाप कियो / भाणजो मार कांई जस लियो? उन्होंने श्राप दिया कि जिस अग्निबाण से तुमने हमारे लाडले श्रवण के प्राण लिए उसी तरह तुम भी पुत्र वियोग में प्राण त्यागोगे।

यह सुन दशरथ ने बाण को घिसना प्रारंभ किया ताकि उसकी जलन का श्रवण पर कोई प्रभाव नहीं पड़ सके। घिसते-घिसते बाण की एक फांस पानी में जा गिरी जिसे एक मच्छी (मछली) ने निगल लिया। वही मच्छी आगे जाकर राजा दशरथ का भोजन बनी तब उसकी फांस राजा दशरथ के पेट में चली गई। इससे उन्हें असह्य पीड़ा होने लगी।

कई समझेबुझे वेद हकीम आये पर इलाज नहीं हुआ। तब एक ने यह भेद दिया कि रानी कैकयी के मुंह में अमी है। यदि राजा दशरथ का अंगूठा वह अपने मुंह में रखे तो जलन मिट सकती है। दशरथ ने यह बात कैकयी से कही। इस पर कैकयी ने दो वचन मांगे और राजा की पीड़ा दूर हुई। कुछ समय बाद जब राम को राजतिलक देने की बात आई तो मौका देख रानी कैकयी ने राम को वनवास और भरत को राज देने के दोनों वचन मांग लिए। ये ही श्राप राजा दशरथ के काल बने।

**मेवाड़ में श्रवण :**

यही श्रवण तीर्थयात्रा कराते समय मेवाड़ क्षेत्र की ओर आया। इधर के तीर्थस्थानों के दर्शन कराते जब वह सलूम्बर तहसील के उथरदा गांव के पास आया तब अचानक उसके मस्तिष्क में अपने माता-पिता के प्रति कुत्सित विचार पैदा हुए। उसने मन में सोचा कि तीर्थयात्रा कराते-कराते यहां तक आया हूं लेकिन बदले में मैने क्या पाया? कितना समय व्यर्थ में गंवा दिया? यदि यही समय कुछ काम में व्यतीत करता तो कुछ तो कमाता! कमाई के नाम पर इनसे तो मुझे एक धेला तक नहीं मिला। सारी मेहनत ही निष्फल हुई और भाडा (पारिश्रमिक) भी कुछ प्राप्त नहीं किया। यह सोच उसने अपनी कावड़ वहीं रखदी और माता-पिता से अपने परिश्रम का

भाड़ा मांग लिया।

श्रवण की बात से उसके माता-पिता को जो वेदना हुई उसकी कल्पना सहज ही की जा सकती है। हालांकि दोनों अन्तर्ज्ञानी और श्रवण की हर हरकत से भलीप्रकार परिचित थे किंतु वे लाचार थे सो कर भी क्या सकते थे। उन्होंने इसका अर्थ उस धरा की अमांगलिकता से लिया। वे जानते थे कि सब धरती एक जैसी नहीं होती। धरती-धरती का फर्क होता है। कोई धरती समृद्धि देती है। सुमंगल देती है। सुहावनी लगती है तो कोई अपशकुनी, अमंगली तथा कष्टदायिनी होती है अतः उन्होंने श्रवण को बुरा बताने की बजाय यही कहा कि वह यहां से शीघ्र आगे की ओर चलदे और किसी अच्छी जगह अगला पड़ाव डाले।

**सरवण भाड़ो गांव :**

श्रवण ने यही किया और आगे चल दिया। पास ही एक ऐसा स्थान आया जहां श्रवण को ठहर जाने को कहा। वहां जाते ही श्रवण को सद्बुद्धि आई और मन ही मन अपने द्वारा कहे गए कथन पर पश्चाताप करने लगा। उसने अपनी गलती महसूस करते हुए कहा- मुझे क्षमा कर दीजिए। मेरे मन में कुबुद्धि घर कर गई थी सो मैंने आपसे भाड़ा मांग लिया था। कहते हैं श्रवण की आत्मशुद्धि के कारण बाद में वहां जो गांव बसा उसका नाम ही सरवण भाड़ो पड़ गया। यह गांव आज भी इसी नाम से जाना जाता है।

**धर्म बहिन राखी बनी :**

यह दिन पूर्णिमा का था। जब लोगों को इस घटना का पता चला तो सब दौड़े-दौड़े वहां आये और उत्साह एवं उल्लासपूर्वक उन तीर्थयात्रियों का मंगल कलशों से स्वागत किया। सामूहिक उजेणी की। इस समूहभोज का रामरसोई नाम दिया गया। वहां एकत्र सबके सब जनजाति के ही लोग थे जो आज भी उस पूरे क्षेत्र में बसे हुए हैं।

सामूहिक उल्लासमय नृत्योत्सव में आदिवासी स्त्री-पुरूषों ने भाग लेकर पूरे वातावरण को अति आत्मीय रसमय बनाया। नृत्यमग्न

आदिवासी बालाओं ने जहां श्रवण की कलाई में धागा बांधा वहीं अन्य स्त्रियों ने श्रवण के पिता-माता की कलाई में रक्षा-सूत्र बांधकर उन्हें अपना धर्म भाई-बहिन थरपित किया। आदिवासी बालाओं में एक बाला ऐसी थी जो श्रवण और उसके माता-पिता की बड़ी लाड़ली बनी। उसका नाम राखी था। उसी घटना की याद में राखी का त्यौहार चल पड़ा जो श्रवण-राखी के प्रतीक लिए है। भाई-बहिन का अटूट रिश्ता बना। मेवाड़ में ही नहीं, अन्यत्र भी रक्षाबंधन को राखी नाम से ही संबोधित किया जाता है और रक्षा-सूत्र ही राखी का प्रतीक बना हुआ है।

राखी के दिन बहिनें भाइयों को राखी बांधने से पहले श्रवण कुमार का दीवार पर कुंकुम से उंगलियों द्वारा थापा मांडती हैं और श्रवण को राखी चढ़ाती हैं। माता-पिता की सेवा के लिए प्रसिद्ध श्रवण की यह पूजा सोणा-सोवणी कहलाती है। श्रवण की यह भक्ति प्रत्येक घर में भाई-बहिन द्वारा अपने माता-पिता की भक्ति की सीख लिए जानी जाती है। चावल या फिर सेवइयों की खीर का भोग (धूप) दिया जाता है। मेवाड़ में सेवइयों का वीड़ा नाम प्रचलन में है। गेहूं के बारीक आटे को अच्छी तरह से गूंद-गूंथ कर ऊंगलियों की सहायता से पतली-पतली लड़ें निकाली जाती हैं। यही लड़ें सूखने के बाद वीड़ा का रूप धर लेती हैं। मैगी के मूल में यही वीड़ा अथवा सेवइयां रही हैं।

आगे जाकर लकड़ी से निर्मित मंदिरनुमा पाटों से बनी काष्ठकला कावड़ भी श्रवण की कावड़ के नाम से जानी गई जिसे श्रवण या सरवण भी कहते हैं। यह कावड़ अपने हर पाट पर नाना प्रकार के चित्रों से मंडित होती है। मेवाड़ में चित्तौड़ के पास का बस्सी गांव कावड़ निर्माता खैरादियों के लिए प्रसिद्ध है। इस कावड़ को बांचनेवाले कावडिया भाट कहलाते हैं जो अपने-अपने क्षेत्र के यजमानों के गांव-घर जाकर कावड़ बांचने या कावड़ फेरने के लिए जाने जाते हैं। कावडिया इस समय सफेद धोती, सफेद कमीज और सिर पर चूंदड़ीनुमा पगड़ी अथवा साफा पहनता है। तीर्थयात्रा के दौरान वह लाल धोती, पीली कमीज तथा सिर पर रामनाम की पट्टी बांधता है। कावड़ का प्रारंभिक रूप भगवान राम और श्रवण से जुड़ी गाथा-चित्रावली का रहा। रामजीवन की प्रधानता के कारण यह कावड़ रामजी की कावड़ के नाम से भी पहचान लिए है।

**हरवण कावेड़ियों :**

कौनसी घटना समय के प्रवाह को साथ लिए धीरे-धीरे परिपक्व बन विकास के आयामों के बीच अपनी छाप छोड़ती है और एक मिथक के रूप में धीरे-धीरे जन-जन की उपहार बन जाती है, कुछ कहते नहीं बनता। वह श्रवण जनजातियों में सरवण नाम की धारा पकड़ते हुए हरवण के रूप में कंठासीन हो गया। उसके साथ उसका प्रतीक कावड़ भी जुड़ गया और राखी के दिन उसकी स्मृति के रूप में उसका तीर्थाटन स्वरूप पूजा जाने लगा जो आज भी पूजा जा रहा है, न केवल जनजातियों में बल्कि अन्य सभी जातियों में भी भाई-बहिन के त्यौहार के रूप में प्रसिद्धि लिए है।

**श्रवण विषयक गीत :**

मांगणियार अड़भोपे तथा अन्यान्य जातियों में श्रवण के गीतों का बड़ा प्रचार है। मेवाड़ के अड़भापे से अपने गांव कानोड़ में सन् 1952 के अगस्त माह में सुना गया लोकगीत आज भी यदा-कदा सुनने को मिलता है। ये अड़भोपे राखी के दिनों में खासतौर से इस गीत को गाकर धानचून इकट्ठा करते हैं और हस्तरेखाओं को देखकर भविष्य कथन करते हुए भी पाये जाते हैं। गीत इस प्रकार है-

**बारा बरस का सरवण व्हिया**
**ले पोथी भणवाने चाल्या**

**भणिया गणिया वेद वतावे**
**जाय परण्या कलवंती नार**
**म्हारा पीयर में गा मैं घणी**
**म्हनै लेइने म्हारे पीयर चाल**
**आंधा आंध्या ने कुवा में नाक**
**नहीं डूबे तो सिला सरकाय**
**छानी मानी रे म्हारी पग की पेंजार**
**थारी हरीकी लाऊं दो चार**
**खाती का बेटा धरम का वीर**
**कावड़ घडदे चांगा चीर**
**कावड़ घडी मोतियां जडी**
**आगे बेवाडूं म्हारो आंधो बाप**
**लारे बेवाडूं म्हारी आंधी माय**
**कावड़ ले कांधे धरी**
**सरवण चाल्यौ तीरथ धाम**
**सरवण पूत पाणीडो पाव**
**तरस्या मरतां जीवड़ो जाय**
**अणी वनी में कुवो न बाव**
**पाणी कठसूं लाऊं म्हारी मांय**
**उगूणी दिसा तलाव भर्यो**
**मामो दशरथ चौकी देय**
**वणसूं जायर पाणीडो ला रे पूत**
**चंपला री डाल कावड़ धरी**
**ले तूंबो भरवा निसर्यो**
**पाणी जाय तूंबो झकोल्यो**
**मामा दशरथ वायो तीर**
**लागियो सरवण के तीर**
**कूद पड्यो समंदर की तीर**
**मरतां-मरतां बोल्यो**
**मामा-मामा थूं हत्यारो**
**आंधी माय र आंधा बाप**
**पाणी मांगे रूंखां छाव**
**था पापी को कुण मुख देखे**
**दशरथ मामो ले पाणी**
**आंधा आंधी ने पावा निसर्यो**
**आंधो बोल्यो थूं कुण रे सरदार**
**म्हूं आपको सरवण पूत**
**तू रे नहीं म्हारो सरवण पूत**
**म्हें तो थारो मुख नहीं देखां**
**सरवण कारणे म्हाणो जीवड़ो जाय**
**ज्यूं म्हें मरां ज्यूं तु ई मरे**

**पूत बिना दुख मांय पड़े**
**तूं तो छोड़ चल्यो परलोक**
**थारे बिना म्हासूं रयो एन जाय**
**थारो होसी अम्मर नाम**
**राखी दिन घर-घर पूजसी**
**पूरोई जग संसार**
**जब लग रेवे या धरती**
**तब लग रेसी थारो नाम**
**या म्हांकी है आसीस**
**छोड चल्यौ म्हांको सरवण पूत**
**थां बिन म्हांको जावे पिराण।**

भावार्थ - बारह वर्ष का श्रवण हुआ। पुस्तक ले पढने़ चला। पढ़ेलिखों ने उसे वेद आदि में पारंगत किया। उसने कलवंती (कलहवंती) नारी के साथ विवाह किया। वह बोली- मेरे पीहर में बहुत सारी गायें-भैंसें हैं। अंधे-अंधी तुम्हारे माता-पिता को कुए में डाल दो। नहीं डूबे तो उन पर शिला सरका दो। यह सुन श्रवण को बड़ा गुस्सा आया। उसने कलवंती को बहुतेरा बुरा कहा और डांटा-फटकारा।

ऐसी स्थित में अपने घर से श्रवण का मन उचट गया। तब वह खाती के पास गया और एक अच्छी सी कावड़ घडने़ को कहा। खाती ने हीरे-मोती जड़ी अच्छी सी कावड़ तैयार कर दी। उस कावड़ के आगे वाले पलड़े में पिता को और पीछे वाले पलड़े में माता को बिठाया। श्रवण ने कावड़ कंधे पर धरी और तीर्थयात्रा को चल पड़ा। आगे जाकर माता-पिता को प्यास लगी। उन्होंने अपने श्रवण पुत्र से पानी लाने को कहा किंतु वहां दूर-दूर तक कोई पानी नहीं दिखाई दिया। पिता बोले- पूर्व दिशा की ओर तुम्हारे मामा दशरथ चौकसी के लिए निकले हैं, उनसे जाकर ले आ।

श्रवण चंपा वृक्ष की डाल के नीचे कावड़ धर तूम्बा ले पानी लेने चला। पानी में तूम्बा को झकोला। उसकी आवाज से दशरथ को लगा कि नदी किनारे कोई जानवर पानी पीने आया है। यह जान उसने तीर से निशाना साधा। तीर श्रवण को जा लगा जिससे वह समंद तट पर गिर पड़ा। राजा दशरथ वहां पहुंचा। मृत्यु को प्राप्त होते श्रवण ने अपने मामा दशरथ को कहा- तुम हत्यारे हो। मेरे अंधे माता-पिता वृक्ष की छाया तले प्यासे हैं। तुम जैसे पापी का मुंह कौन देखे! यह सुन दशरथ उन्हें पानी पिलाने चला। उसकी बदली हुई पद-चाप सुन श्रवण का पिता बोला-तुम कौन

हो ? दशरथ बोला- मैं आपका श्रवण पुत्र हूं। पिता बोला- नहीं तू मेरा श्रवण पुत्र नहीं है। हम तुम्हारा मुंह नहीं देखना चाहते। श्रवण के बिना हमारे प्राण निकले जा रहे हैं। उन्होंने श्राप दिया- जैसे हम मृत्यु को प्राप्त हो रहे हैं वैसे ही तुम भी मृत्यु को प्राप्त करोगे। अपने पुत्र के बिना हम दुखों से घिर गये हैं। दोनों विलाप करने लगे-हे श्रवण! तू हमें छोड़ परलोकवासी हो गया। तुम्हारा नाम अमर होगा। राखी के दिन पूरे संसार में घर-घर तुम्हारी पूजा होगी। जब तक यह धरती रहेगी तुम्हारा नाम रहेगा। यही हमारी आशीष है। यह कह वे दोनों भी मृत्यु को प्राप्त हुए।

**दशरथ को लगा श्राप :**

कहना नहीं होगा कि राजा दशरथ के लिए उनके इन्हीं बहन-बहनोई, श्रवण के माता-पिता का श्राप उनकी मृत्यु का कारण बना जब कैकयी ने अपने वर में राम को चौदह वर्ष का वनवास देना और उसकी बजाय अपने पुत्र भरत को अयोध्या का राजा बनाना मांग लिया। कहां तो पूरे राज्य में राम के राज्याभिषेक की तैयारियां चल रही थी, जनता उत्साह और उल्लास के मारे फूली नहीं समा रही थी और कहां अचानक कैकयी ने वर मांगकर रंग में भारी भंग कर दिया। दशरथ पर इस विपत्ति का ऐसा पहाड़ गिरा कि अंत में उन्हें अपने प्राण विसर्जित करने पड़े।

राम से जुड़ी रामायण से तो सभी परिचित हैं। इधर यह शब्द इतना प्रचलित है कि व्यर्थ की सारहीन वार्ता, बहस, किंवा बातचीत के लिए भी प्रयुक्त होने लग गया। बहुत हो गई रामायण, क्या धरा इस रामायण में, छोड़ो इस रामायण को जैसे झुमले आए दिन सुनने में आते हैं। इसी प्रकार सीता नाम जहां सतवंती, शीलव्रती नारी के लिए भारतीय समाज का आदर्श बना हुआ है वहीं यह पक्ष भी ध्यान देने योग्य है कि जितना दुख सीता ने उठाया उतना अन्य कोई नारी नहीं उठाए। इसलिए कई जगह लड़कियों का सीता नाम रखना भी वर्जित रहा है।

**सीता नाम दुखवाची :**

सच ही है, सीता नाम दुख का कारक बन गया। सीती ही क्यों, शकुंतला के साथ भी यही सोच बना हुआ है और मीरां भी कम दुखी नहीं रही। उसे तो ससुराल वालों ने तो प्रताड़ित किया ही पर पीहर वालों की ओर से भी कोई सुख एवं सहारा नहीं मिला। मैंने ऐसी महिलाएं भी देखीं जो कभी भी अपनी पुत्रियों का नाम सीता, शकुंतला या कि मीरां रखने के पक्ष में नहीं रहीं। उनका कथन था कि हर महिला यह जानती है कि ये नाम दुख भोग्ये हैं लेकिन यदि कोई इन नामों का सहारा भी लेता है तो केवल इसलिए कि ये ही नाम उनके उदात्त चरित्र के प्रतीक भी हैं। उन्होंने दुख तो अथाह उठाया पर कभी भी अपने शील पर आंच नहीं आने दी। तीनों अंत तक सतवंती, शीलवंती नार ही बनी रहीं।

सीता तो भटकी भी बहुत। कई परीक्षाओं से उसे गुजरना पड़ा। जिस लोक समाज ने उसे लांछना दी उसी ने उसे शिरोधार्य भी किया। सच है, सच्चे को ही कष्ट से गुजरना पड़ता है। कष्ट भी प्याज के छिलकों की तरह, एक के बाद एक किंतु वही अंत में पूजनीय भी बनता है।

रामकथा के अतिवाद से रामायण के बहुत सारे वे पात्र तथा उनसे जुड़े घटना-प्रसंग दबे से रह गये जिन पर ध्यान बहुत कम गया या गया ही नहीं। लोकजीवन में ऐसा कई बार, बार-बार होता है जब कोई घटना, कोई प्रसंग, कोई अवसर समझ और स्थिति परिस्थिति के अनुसार परिवर्तित होता हुआ अपना अर्थ बदलता रहता है और कभी-कभी यह बदलाव इस कदर हो जाता है कि उसकी असलियत ही अलोप हो जाती है।

श्रवण और राखी के साथ भी लगता है, यही हुआ। राखी जहां भाई बहिन के अटूट प्रेम का प्रतीक त्यौहार बना हुआ है वहां इस अवसर पर श्रवण को कावड़ लिए, उसके पलड़ों में उसके माता-पिता को बिठाया दिखाया जाना और उस चित्र का दीवार पर मंडावण और पूजा प्रतिष्ठा देख मुझे कई वर्षों से रखाबंधन के साथ श्रवण की मान्यता का संदर्भ हाथ नहीं लग रहा था। जब मैं लोक की बात करता हूं, उसके द्वारा मान्य घटना, प्रसंग, संदर्भ कथा, चित्र मंडन और गाथा आदि के जुड़े हिस्से को देखता हूं तो शास्त्र सम्मत विचार कथन को परे रखता हूं। सच ही है, पोथियों, सूत्रों अथवा शास्त्रों में चढ़ी लिखावट जब लोक की धरोहर नहीं बन पाती है तब शास्त्र का कथन पोथियों में कैद होकर ही रह जाता है। ऐसा कथन हमारे अतीत काल का वैभव भले ही रहा होता है पर आज के संदर्भ का लोकजीवंत पक्ष तो नहीं हो पाता है।

**विरासत का वैभव :**

जनजातियों में ऐसी बहुत सारी विरासत हमारे अतीत और वर्तमान की खोई, धूमिल हुई, विस्मृत कडियों को सूत्रबद्ध कर सकती है। ऐसा भी बहुत हो रहा है कि हम जब किसी का अध्ययन करते हैं तो मनुष्य, आम मनुष्य के साथ जनजाति या कि आदिवासी वर्ग को अलग रखकर देखते हैं या कि उसे अलग से अध्ययन के लिए छोड़ देते हैं। मेरी दृष्टि में यह भी एक दृष्टि से नाइंसाफी है। यदि हम इनको भी अपने साथ रखें तो हमारा अध्ययन पूर्णता की कसौटी पर खरा और सही उतर सकता है।

जिन आदिवासी गांवों में मैं जाता रहा वहां अब वे लोग नहीं रहे। जिनके पास बातचीत के लिए, बताने के लिए, पूछताछ के लिए पूरा समय, समझ और खजाना खोल देने का प्रेमभाव था, स्नेह आदर और आत्मीय सम्मान का भाव था। उनके नहीं रहने से वह सब शून्य में बदल रहा है। बहुत कुछ खोते, लूटते, बर्बाद होते संस्कृतिजन्य सरोकारों को मैंने अपनी गीली होती आंखों से देखा है। लाख प्रयत्न करने पर भी कोई उस विरासती वैभव को प्राप्त नहीं कर सकता।

इतना सबकुछ होते हुए भी मैं निराश नहीं हूं। मनुष्य ही में वह शक्ति है कि वह सबकुछ लुप्त-गुप्त होने पर भी अपने हिये की आंखों से वह सब देखने की सामर्थ्य रखता है क्योंकि उसका जीवन केवल वर्तमान का जीवन ही नहीं होता। वह अतीत की अनदेखी नींव पर अपने वर्तमान की दिव्यता एवं भव्यता के साथ खडे भविष्य को अपनी निगाहों में चाहे तो कैद कर सकता है। आवश्यकता है, हम जनजाति के लोगों को अपना मित्र बनायें और उनके पास जो ज्ञान-संपदा, गुण-संपदा तथा जीवन-संपदा का आध्यात्मिक उत्स एवं उल्लास है, उसे ग्रहण करें।

**सर्वत्र राम ही राम :**

राम सर्वत्र है। अच्छाई में भी और बुराई में भी। इतनी व्यापकता अन्य किसी नाम, महापुरूष और देव में नहीं मिलेगी। यहां सुखमय जीवन

में भी राम है। आराम में भी राम छिपा हुआ है और अकर्मण्य बने रहने वाले निठल्ले हराम में भी राम की मौजूदगी है। हरामखोर जीवन जीने वाले भी कहते हैं राम हमारे भीतर छिपा हुआ है। राम का नाम भी कितने अजब गजब का है कि राम-राम रटनेवाले का तो उद्धार होता ही है, उसका उल्टा मरा-मरा जपने वाले का भी बेड़ा पार ही लगता है। राम समद्रष्टा है। वह सबके साथ है। जो जैसा करेगा, वैसा भरेगा।

कई आदिवासी भाई मिले जिन्होंने कहा कि राम और कृष्ण में कोई भेद नहीं है। सब कुछ जो राममय है वही कृष्णमय है। आस्था और विश्वास हो तो दोनों में कोई भेद नहीं मिलेगा। तुलसीदास जब कृष्णनगरी द्वारिका गए तो वहां भी राम-राम की ही रट लगाते रहे। वे यह भूल गये कि यहां सभी कृष्ण-कृष्ण कहने वाले हैं पर उनकी रामभक्ति टस से मस नहीं हुई। वे दिनभर मंदिर की सीढियों पर ही बैठे रहे पर उन्होंने राम रटन नहीं छोड़ी। इस पर पंडों को दया आई तो उन्होंने मंदिर में प्रवेश दिया। वहां प्रवेश देने पर भी तुलसी कृष्ण की बजाय राम के ही दर्शन करना चाहते थे। कहते हैं, सच्चे भक्त की जिद् भगवान भी पूरी करते हैं। तब देखते-देखते कृष्ण की प्रतिमा का सारा शृंगार उतरता गया और राम के जिस स्वरूप का तुलसी दर्शन करना चाहते थे, उन्हें उस स्वरूप के दर्शन हो गए।

आदिवासी इसीलिए सर्वप्रकारेण राम के ही रंग में रंगे हैं। कई रंगों के होते हुए भी उनका राम रंग ही अंत में असल और सर्वांगीण होता है। इसीलिए उदयपुर से 15 किलोमीटर दूर स्थित आदिवासी गांव बड़ी ऊंदरी के सौ से अधिक की लम्बी उम्र जीते उदा बा पारगी ने मुझे समझाइश देते हुए कहा कि जीवन का रस है वह भी राम रस ही है। सब ओर लीला राम की ही है। इसलिए कहा भी गया- रामजी री चिरकिली रामजी रा खेत / आवोरी चिरकिली खावो भर पेट।

लेखक वरिष्ठ लोक संस्कृतिविद् हैं।
904, आर्ची आर्केड, राम-लक्ष्मण वाटिका के पास, न्यू भूपालपुरा,
उदयपुर-313001 मो. 9351609040


# पत्रिका ही नहीं, एक रचनात्मक अनुष्ठान

## पत्रिका मुफ्त मांग कर, कृपया हमारे अनुष्ठान को आघात न पहुँचाएं

**'कला समय'** के सदस्य बनें- ❍ पत्रिका की वार्षिक/द्वैवार्षिक /आजीवन सदस्यता ग्रहण करें। सदस्यता शुल्क मनीआर्डर, ड्राफ्ट, ऑनलाइन अथवा व्यक्तिगत रूप से भुगतान किया जा सकता है।

**'कला समय' की एजेंसी के नियम-** ❍ आपके गांव, कस्बे, शहर में सांस्कृतिक पत्रिका 'कला समय' की एजेन्सी के लिए सम्पर्क करें। ❍ कम से कम दस प्रतियों से एजेन्सी शुरू की जायेगी। ❍ पत्रिका कुरियर अथवा रजिस्टर्ड बुक पोस्ट से भेजी जायेगी। डाक खर्च एजेन्सी को वहन करना होगा। ❍ कमीशन, प्रतियों की संख्या के आधार पर।

**स्थायी तथा सम्पादकीय पता और दूरभाष क्रमांक के साथ सम्पर्क करें-** जे-191, मंगल भवन, महावीर नगर, ई-6, अरेरा कॉलोनी, भोपाल- 462016 Email : bhanwarlalshrivas@gmail.com मो. 9425678058, 0755-2562294

**लेखकों/कलाकारों से** ❍ कला, संस्कृति साहित्य एवं समसामयिक विषयों के अछूते पहलुओं पर सृजनात्मक, शोधात्मक और सूचनात्मक आलेख, टिप्पणियां, रिपोर्ताज, साक्षात्कार, ललित निबंध, कविताएँ, छायाचित्र, रेखांकन तथा शोध आमंत्रित हैं। ❍ रचनाएँ कागज के एक ओर टाइप की हुई तथा मौलिकता का प्रमाण पत्र संलग्न हो। कृपया रचना के साथ पर्याप्त डाक टिकिट लगा लिफाफा भी संलग्न करें। रचनाएँ और चित्र ई-मेल से भी भेजे जा सकते है।

**प्राथमिकता के साथ :** Chanakya फोंट / वर्ड फाइल / PDF फॉर्मेट में ही भेजें।

**अनुरोध : वे सदस्य जिनका वार्षिक / द्विवार्षिक सदस्यता शुल्क समाप्त हो रहा है, कृपया अपनी सदस्यता का नवीनीकरण करायें। सदस्यों को पत्रिका साधारण डाक से भेजी जाती है। नहीं मिलने की स्थिति में सदस्यता शुल्क के साथ 120/- का प्रतिवर्षानुसार रजिस्टर्ड डाक शुल्क अतिरिक्त भेजा जाना होगा।**

**-संपादक**

आलेख

# सांस्कृतिक सामाजिक आदर्शों के नियामक राम और रामचरितमानस

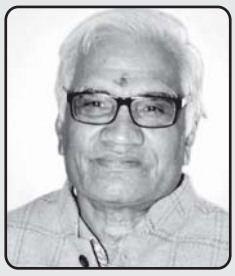

बी .एल . आच्छा

रामकथा का केवल भारत की नहीं पूर्वी द्वीप समूह तक विस्तार है। रामकथा ही नहीं, रामलीलाओं तक। गिरमिटिया प्रवासियों ने कैरेबियन

देशों तक इसका ऐसा प्रसार किया कि वे भारतीय संस्कृति का दीप-दीपन करते हैं। गीतकार प्रदीप ने मेरे द्वारा लिए गये साक्षात्कार में कहा था कि संतोषी माता के गीतों की लोकप्रियता के बाद मारीशस, फिजी आदि देशों के भक्तों ने सियाराम, हनुमान और अन्य देवी-देवताओं पर अच्छे मानदेय के साथ गीत लिखने का खूब आग्रह किया। अब तो अनेक देशों में संस्कृति के मंदिर और केंद्र विद्यमान हैं। तमिल महाकवि कंबन हों या बंगाल के कृत्तिवास की रामकथा, उसका प्रसार भारत में ही नहीं वैश्विक है। परम विद्वान कामिल बुल्के से लेकर करोड़ों लोगों को सम्मोहित करने वाले रामानंद सागर की छोटे पर्दे की रामायण तक। जननी जन्मभूमि के नायक राम और लोकभाषा में रचित तुलसी के रामचरित मानस तो अखंड पाठ में गुंजित हो रहे हैं। सुंदरकांड तो सर्वथा अमंगलहारी के रूप में आस्था की गूंज।

तुलसी का रामचरित मानस कई दृष्टियों से भारतीय जनमानस का सांस्कृतिक संविधान बना हुआ है। विश्व में ऐसी कालजयी कृतियां दुर्लभ हैं, जिनमें हर तरह के पारिवारिक - सामाजिक आदर्श वाले पात्र हैं। राम के पुत्रत्व से लेकर शबरी और जटायु तक , राम सेतु के नल-नील और जामवंत तक ,जंगल के 'खग मृग मधुकर श्रेनी तक। हनुमान ने तो पहले ही साक्षात्कार में कह दिया- ''तुम तीन देव मंह कोऊ, तुम नर-नारायण दोऊ।'' यही कारण है कि 'साकेत' के लोकभूमि के नायक के रूप में ईश्वरीय दिव्यता के साथ राम मानव रूप में ही साकार हुए । निराला कृत 'राम की शक्ति पूजा' में 'पुरुषोत्तम नवीन' और नरेश मेहता की 'संशय की एक रात' में भी वही दिव्य मनुष्य। इस लोक भूमि और लोकमानस के सहयात्री बने राम जन-मन में शीर्ष बने हुए हैं, जो व्यावहारिक आदर्शों से कभी विरत नहीं हुए। तुलसी के राम का यही व्यक्तित्व उन्हें यह कहने को बाध्य करता है- ''कीन्हें प्राकृत जन गुनगाना, सिर धुनि लगा गिरा पछिताना।''

'रामचरितमानस' वह आधारभूमि है, जिससे आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने हिंदी आलोचना के प्रतिमानों को टीका पद्धति से निकालकर हृदय की मुक्तावस्था वाले लोक मंगल से प्रतिष्ठित किया। शुक्ल जी ने लोकनायकत्व के लिए लोक भूमि और लोकजीवन को मूल्यपरक प्रतिमान बनाया। लोकजीवन कोई सपाट भूमि नहीं है। न जाने कितने क्षेत्रीय भूगोल, सम्प्रदाय, आस्थाओं के देवपुरुष, दर्शन, भक्ति की शाखाएँ, निम्न और उच्च के भेद आर्थिक- सामाजिक मूल्यमान हैं। इन सबके लिए किसी एक महानायक को आदर्श बना देना सहज नहीं है ।

तुलसी में वह योजक तत्व है, जो खंडन से अधिक मंडन को जानता है। उन्हें इस समन्वय के लिए जोड़-तोड़ के टांके नहीं लगाने पड़ते। बल्कि निर्गुण और सगुण का, विष्णु-शिव और शक्ति का ऐसा सहज दर्शन हो जाता है, जो तमाम संप्रदायों और दर्शनों को एकत्व देता है। सामाजिक रूप आदिवासी केवट और शबरी के लिए राम जितने आराध्य हैं, उतने ही राजन्य व्यक्तित्वों के भी।

तुलसी जितने निगमागमसम्मत हैं, उतने ही जनबोली और जन विश्वासों के। उन्होंने अवधी में राम को उतारकर संस्कृत रामायण की कथा को जन-मन की कंठलय बना दिया।पीड़ा भी हुई तो 'विनयपत्रिका' की पाती में रच दिया। रामचरितमानस के 'उत्तरकांड' का कलियुग वर्णन तो आज की प्रगतिशील काव्यधारा के यथार्थ से अलग नहीं है। कवितावली में ''खेती न किसान को भिखारी का भीख'' की शब्दावली तो समकाल की चुनौती भी है। सत्ता और सामाजिक व्यवस्था को चुनौती देने वाले संत तुलसीदास की अनासक्त साहसिक प्राणवत्ता है- ''काहू सो काहू की बेटी न ब्याहब,काहू की जाति बिगार न सोऊ।'' यह चुनौती मूल नक्षत्र में पैदा हुए महाकवि की है ,जो ज्योतिष और और भयाक्रांत सामाजिक विश्वासों में अनिष्ट समझा जाता है। पर मूल नक्षत्र का वही तुलसी आज भी कोटि कोटि जनमानस की सामाजिक- सांस्कृतिक प्रज्ञा और व्यवहार में रमा हुआ है - ''मंगल भवन अमंगल हारी।'' सुरसरिता गंगा के उद्धारक पवित्र भाव को जीता है और हजारों सालों से उसी भावसाध्य पावनता को आराध्य राम और पवित्र गंगा में केंद्रीय बना देता है।

लोकतंत्र और युवा शक्ति के लिए रामचरित मानस का परशुराम-लक्ष्मण संवाद तो अनूठा है। तुलसी ने रामकथा में इसे मौलिक रूप से जोड़ा है,जो वाल्मीकि में नहीं है। परसुराम के प्रति

पूज्यभाव है,न क्षत्रिय और ब्राह्मण वाली बात। सभा में उनकी ललकार से सभी भयाक्रांत हैं। पर लक्ष्मण भयाक्रांत हुए बिना चुनौती देते हैं। यह युवा प्रतिकार है। आज की विश्व मानवता लोकतांत्रिक प्रतिकार को अभिव्यक्ति का चरम मूल्य मानती है। आज की सभ्यता में नयेपन और बदलाव की युगांतर गतिशीलता है, ऐसे में सत्ताओं से सार्थक प्रतिकार बदलते समय का सोच है। सार्थक का ग्रहण और निरर्थक का त्याग बदलाव का आधार है। पर रामचरित मानस के पात्रों के जीवनादर्श आज भी भारतीय मानस के मूल में है।इन आदर्शों का योग बना रहे तो सारे विभेद भी मिटेंगे। युवामानस प्राचीनता के बासीपन से टकराते हुए लोकतंत्र और जनमंगल की आवाज बनेगा।

लेखक- वरिष्ठ साहित्यकार हैं।
फ्लैटनं-701टॉवर-27, नॉर्थ टाउन अपार्टमेंट, स्टीफेंशन रोड(बिन्नी मिल्स),
पेरंबूर, चेन्नई (तमिलनाडु) पिन-600012
मो-9425083335

# कला समय

**कला, संस्कृति, साहित्य एवं समसामयिक द्वैमासिक पत्रिका**

**के सदस्य बने**

मैं ..... कला समय पत्रिका का ..... एक वर्ष : 300/- रूपये, दो वर्ष : 600/- रूपये, चार वर्ष : 1000/- रूपये, आजीवन : 10000/- रूपये का सदस्य बनना चाहता/चाहती हूँ। पत्रिका का साधारण डाक शुल्क एवं रजिस्टर्ड शुल्क रूपये 120/- प्रतिवर्ष सहित कुल रूपये ..... ऑनलाइन/ड्राफ्ट/मनीऑर्डर ..... दिनांक ..... संलग्न है।

नाम : .....

पता : .....

.....

पिन : ..... मो.: .....

**हस्ताक्षर**

**सदस्यता सहयोग राशि:**

| | | | |
|---|---|---|---|
| **वार्षिक** | : | 300 ( व्यक्तिगत ) | 350 ( संस्थागत ) |
| **द्वैवार्षिक** | : | 600 ( व्यक्तिगत ) | 700 ( संस्थागत ) |
| **चार वर्ष** | : | 1000 ( व्यक्तिगत ) | 1200 ( संस्थागत ) |
| **आजीवन** | : | 10,000 ( व्यक्तिगत ) | 12000 ( संस्थागत ) |

( 15 वर्ष के लिए )

( कृपया सदस्यता शुल्क- ऑनलाईन/ड्राफ्ट/मनीआर्डर द्वारा 'कला समय' के नाम पर उक्त पते पर भेजें )

विशेष : 'कला समय' की प्रतियाँ साधारण डाक/रजिस्टर्ड बुक-पोस्ट से भेजी जाती हैं यदि कोई महानुभाव रजिस्टर्ड पोस्ट से पत्रिका मंगवाना चाहते हैं तो कृपया वार्षिक डाक खर्च 120/- अतिरिक्त भेजने का कष्ट करें।

**कार्यालय सम्पर्क :**

**संपादकीय एवं सदस्यता सहयोग**

जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर,
अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.)- 462016
फोन : 0755-2562294, मो.-94256 78058
ई-मेल : kalasamaymagazine@gmail.com
वेबसाइट : **www.kalasamaymagazine.com**

**ऑनलाइन सदस्यता सहयोग सुविधा :**

**'कला समय' का बैंक खाता विवरण**

पंजाब नैशनल बैंक की शाखा अरेरा कॉलोनी भोपाल, म.प्र. **(IFSC : PUNB0093210)** के नाम देय, खाता संख्या **A/No. 09321011000775** में ऑनलाइन राशि जमा कराने के बाद रसीद की फोटोकॉपी अपने पूर्ण पते के साथ हमें भेज दें।

- कृपया सदस्यता शुल्क 'कला समय' के नाम भेजें।
- सदस्यता शुल्क प्राप्त होने के बाद अगले अंक से पत्रिका भेजना प्रारम्भ की जावेगी।
- सदस्यता शुल्क निम्न पते पर भेजे:- जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कालोनी, भोपाल ( म.प्र. ) 462016

-प्रबंध संपादक

आलेख

## राम श्रम को धन से ऊपर मानते थे

# बहुत काल में कीन्हि मजूरी, आज दीन्ह विधि बनि भलि भूरी

गोविंद गुंजन

राम का जीवन मर्यादाओं की स्थापना करने के लिए समर्पित हो जाने की प्रक्रिया है । राम को पुरुषोत्तम कहा गया है। राम के संदर्भ में सारी मर्यादाएँ अपनी पूर्णता को प्राप्त करती है, इसीलिए वे कर्म के साधारण कर्ता नहीं, जीवन की सारी मर्यादाओं के परम साधक भी हैं, इसीलिए भारतीय मनीषा राम में परमेश्वरत्व का शोध करती है और उसे पुरुषोत्तम के रूप में अपने मन में इस तरह बसा चुकी है, कि यदि उसके पैर में कांटा भी चुभ जाए तो बरबस ही मुँह से निकल पड़ता है – हे राम।

पुरुष का लक्षण है उसका आत्म गौरव । घोर विपत्ति में भी जो आत्म गौरव को नहीं खोता वही पुरुषोत्तम है । प्रसंग है, जटायु की अंतिम घड़ी का । रावण से सीता की रक्षार्थ लड़ते–लड़ते जब जटायु क्षत–विक्षत अवस्था में भूमि पर गिर पड़ता है, और जब राम से उसकी भेंट होती है, तो राम मरणासन्न जटायु से एक प्रार्थना करते हैं–

**सीता हरण तात जनि, कहहु पिता सन जाई।**
**जौ मैं राम त कुल सहित, कहिहि दसानन आई।**

ऐसी प्रार्थना एक आत्म गौरव से भरा हुआ पुरुषोत्तम ही कर सकता है। राम कहते हैं कि– हे तात जटायु, स्वर्ग में आपकी पिताश्री से भेंट होने पर उन्हें आप सीता हरण का समाचार न देना, यदि मैं वास्तव में राम हूँ, तो यह समाचार देने के लिए मैं स्वयं रावण को ही सकुटुंब स्वर्ग भिजवा दूंगा। श्री राम के इन वचनों में सत्य की शक्ति और आत्म गौरव का प्रकाश है, गर्वोक्ति नहीं।

कवियों और ऋषियों ने राम को परम उदार कहा है । मनुष्य की कृपणता ही उसे छोटा बनाती है। कृपणता बड़ी सूक्ष्मता के साथ हमारी प्रवृत्तियों में बैठी होती है, जिसका कई बार पता ही नहीं चलता। उदाहरण के लिए हम जिससे भी मजदूरी कराते हैं, उसे कम से कम मजदूरी देना चाहते हैं। हमें अपने धन का तो मोल ज्ञात है, परंतु हम दूसरों के श्रम का सही मूल्यांकन नहीं कर पाते। उत्तम पुरुष वह है जो दूसरों के श्रम का मूल्य जानता है, दूसरों के श्रम का आदर करता है। राम श्रम को धन से ऊपर मानते थे। वे किसी की मेहनत की कम मजदूरी नहीं देते, उदाहरण के लिए वनवास में प्रथम बार ही एक श्रमिक को वे मजदूरी देते हैं। श्रमिक था केवट। दुनिया केवट की 'पार उतराई' को 'एक कौड़ी की मजदूरी समझती थी, परंतु राम उसका मूल्यांकन 'एक कोटि करते हैं । मजदूरी पाकर केवट कह उठता है –

**बहुत काल में कीन्हि मजूरी, आज दीन्ह विधि बनि भलि भूरी।**

उनका राज्य जा चुका था, परंतु वे राजत्व से च्युत नहीं हुए थे। हम दासता से तो मुक्त हो जाते हैं परंतु हमारा दासत्व नहीं जाता, इसीलिए संसार की सारी क्रांतियाँ अपूर्ण रह जाती हैं । जब तक मनुष्य सही अर्थों में दूसरों के श्रम का मूल्यांकन नहीं कर सकता, तब तक पृथ्वी से विषमता नहीं मिट सकती। राम प्रतीकात्मक रूप से यही प्रतिपादित कर देते हैं।

राम का चरित्र समस्त सद्गुणों का स्रोत है। आदिकवि वाल्मीकि इस पृथ्वी पर ऐसे पुरुष की खोज में थे जो गुणवान, वीर्यवान, धर्म को जानने वाला, कृतज्ञ, सत्यशील और दृढव्रती हो, जो चरित्रवान हो, प्राणियों का कल्याणकर्ता हो, विद्वान हो, समर्थ हो और जिनका दर्शन करना सबको प्रिय हो–

**'कोन्वस्मिन साम्प्रतं लोके गुणवान कश्च वीर्यवान धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च सत्यवाक्यो दृढ़ व्रतः/ चारित्रेण च कौ युक्तः सर्व भूतेष को हितः/विद्वान कः कः समर्थश्च कश्चौक प्रिय दर्शन'।**

वाल्मीकि केवल इतने ही गुणों से संतुष्ट नहीं होते, इन गुणों के अलावा वाल्मीकि अपने नायक को आत्मवान जितक्रोधी और तेजस्वी भी देखना चाहते थे।

**'आत्मवान को जितक्रोधो, द्युतिमान को न सूचक/ यस्यविभ्यति देवाश्च जात रोषस्य संयुगे।'**

उपर्युक्त सारे गुण यदि हम देखना चाहें, तो याद आता है प्रसंग सती द्वारा सीता का रूप धरकर श्रीराम की परीक्षा लेने का।

सामान्य अवस्था में पुरुष स्त्री के प्रति जैसे आसक्त रहते हैं, विरह अवस्था में उनकी यह आसक्ति पागलपन की हद तक उन्हें कामदग्ध कर देती है, यह पुरुष की प्रकृति है । प्रकृति से उपर उठा हुआ पुरुष ही पुरुषोत्तम हो सकता है, इस बात का प्रतिपादन इस प्रसंग में है। विरह अवस्था में सीता की खोज में रोते क्रंदन करते हुए श्रीराम के सामने साक्षात सीता का वेष धारण करके सती आ खड़ी होती है, तो राम के भीतर का आत्मवान, गुणवान, वीर, धर्मज्ञ, कृतज्ञ, सत्यशील दृढ़वती और चरित्रवान पुरुष, जो सबका कल्याणकामी और विद्वान था, पल भर के लिए भी भ्रम में नहीं पड़ता । अपनी दुर्दशा में ऐसा मजाक करने वाली सती पर वह थोड़ा भी क्रोधित नहीं होता। अपनी तेजस्विता के साथ ही श्री राम उन्हें तत्काल प्रणाम करते हैं।

यहाँ राम का विनम्र, अविचलित, आत्मवान और चरित्रवान तेजस्वी स्वरूप देखा जा सकता है, यहाँ इस बात का अनुभव हो जाता है

कि ये श्रीराम उन्हीं सदगुणों के निधि है, जिनका वाल्मीकि हमारे भारतीय समाज के चारित्रिक उत्थान के लिए आह्वान कर रहे थे ।

राम अनन्य प्रेमी भी है। संसार में सारे प्रेमी अपनी पत्नी के नहीं, अन्य स्त्रियों के प्रेमी बने । यहां तक कि कृष्ण भी रुक्मणि के सिर्फ पति हैं, प्रेमी नहीं। वे प्रेमी हैं राधा रानीके। परंतु राम के जीवन में दूसरी स्त्री के लिए स्थान ही नहीं है। वे अपनी पत्नी के प्रेमी हैं। यदि संसार में पुरुष अपनी पत्नी का पति नहीं, प्रेमी बनकर जीने लगे, तो पृथ्वी से सारा अनाचार, व्यभिचार, अशांति, घृणा और वैमनस्य समाप्त हो जाए। श्री राम सीता से अनन्य प्रेम करते हैं.–

**एक बार चुनि कुसुम सुहाएँ। निज कर भूषण राम बनाएँ।**
**सीतहि पहिराएँ प्रभु सादर। बैठे फटिक सिला पर सुंदर ।**

राम सीता का श्रृंगार कर रहे है परंतु आदर सहित। यहाँ तुलसीदास जी ने पुरुष की कमजोरी की ओर संकेत किया है कि हम अपनी पत्नी के प्रेमी भी बन जाएँ तो भी उसका सम्मान, आदर नहीं करते परंतु राम हमारे जैसे कमजोर पुरुष नहीं, पुरुषोत्तम हैं, वे अपनी पत्नी का भी सम्मान करते हैं। आदर करते हैं । श्रीराम ने अपनी प्रेम भावना इन शब्दों में अपनी प्रिया सीता को प्रेषित की थी–

**'तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा जानत प्रिया एकु मन मोरा/**
**सो मन सदा रहत तोहि पाहीं/ जानु प्रीत रस एतनेहि माहीं।'**

राम दूसरों के दुख को देखकर स्वयं के दुख भूल जाते हैं– राम का स्वभाव एक सच्चे प्रेमी का स्वभाव है। प्रेम तो हम भी करते हैं, परंतु हमारा प्रेम, हमारी दया, करुणा, ममता तब तक ही हैं जब तक हम सुखी है । हम अपने दुख में सब कुछ भूल जाते हैं। परंतु राम दूसरों के दुखों को देखकर स्वयं का दुख भूल जाते हैं और उसकी सहायता को तत्पर हो जाते हैं जैसे अपने परम स्नेही पिता की मृत्यु का शोक वे गीध जटायु का मरण देखकर भूल गए और उसे पिता तुल्य अंतिम संस्कार दे दिया –

**'नेह निबाहि देह तजि दसरथ, कीरति अचल चलाई।**
**ऐसे हु पितु से अधिक गीध पर ममता गुन गरुआई।'**

(विनय पत्रिका 164)

जब वे अपने मित्र सुग्रीव को स्त्री के विरह में दुखी देखते हैं, तो अपनी प्रिया जानकी के विछोह का करुण दुख भूल, सुग्रीव की सहायता करने और बाली का वध करने के लिए तत्पर हो जाते हैं। यहां तक कि रणभूमि में अपने प्रिय भाई लक्ष्मण के मूर्छित पड़े रहने पर भी वे विभीषण की चिंता नहीं छोड़ पाते –

**तिय बिरही सुग्रीव सखा लखि, प्राण प्रिया बिसराई।**
**रन पर्यो बंधु, विभीषण ही को, सोच हृदय अधिकाई।**

(विनय पत्रिका 164)

राम चक्रवर्ती सम्राट हो गए। अपने महलों में ससुराल में, या और कहीं भी जब उनकी मेहमानी होती तो उन्हें सारे सुस्वादु पकवानों के बीच भी शबरी के मीठे बेर ही याद आ जाते थे और कहते थे, वैसा स्वाद और वैसा माधुर्य जीवन में उन्होंने कभी नहीं पाया

**गुरु गृह प्रिय सदन सासुरे भई जब जहँ पहुनाई।**
**तहं तहं कहि सबरी के फलनि की रुचि माधुरी न पाई।**

(विनय पत्रिका पद 164)

राम अत्यंत मृदुभाषी भी हैं और वे कभी भी वाणी का दुरुपयोग नहीं करते । वे अल्पभाषी हैं । जो वाणी को व्यर्थ नहीं लुटाता, वाणी उसे कभी मिथ्या नहीं होने देती। जो कभी मिथ्या नहीं होता वही ईश्वर है । जब रावण युद्ध में राम के सामने जाता है तो बहुत बढ़–चढ़कर बोलता है, परंतु बड़ी शांति से राम उसे अत्यंत गूढ़ रहस्य बता देते हैं

**'जनि कल्पना करि सुजस नासहिं नीति सुनहि, करहि छमा।**

राम का संपूर्ण आचरण धर्म की धुरी को दृढ़ करने वाला है । वे तरनि कुल (वे तरनि कुल सूर्यवंश) में जन्मे। तरनि शब्द के दो अर्थ हैं– सूर्य और दूसरा नाव। सूर्य ही श्रेष्ठ नाव है । प्रकाश का पथ ही सत्य का पथ है, जहाँ ज्ञान का सूर्य प्रकाशित होता है। ''सत्य संघ पितु कीरति प्रीती की घोषणा करते हुए श्रीराम प्रतीकात्मक रूप से जीवन के सत्य की घोषणा करते हैं। पूरे प्रसंग में तुलसीदास सूर्य के लिये तरनि शब्द का प्रयोग करते है

**'सो तुम करहुं कराबहू मोहू। तात तरनि कुल पालक होहू।'**

जो अपने कुल को कलंकित नहीं होने देता वही समाज में आदर पाता है। ऐसे पुरूषों से ही राष्ट्र का उत्कर्ष होता है, जो समाज के आचरण को पवित्र बनाते हैं। राम निरंतर अपने कुल और समाज के प्रति आचरण से सावधान है, इसीलिए वे आदर्शतम सुराज की स्थापना भी कर सके। गीता जिस अनासक्त पुरुष का वर्णन करती है, जिस स्थितिप्रज्ञता का वर्णन करती है, उसका श्रेष्ठतम उदाहरण राम हैं। राम के जीवन आचरण से ही गीता सार की गंगा प्रकट होती है–

**'प्रसन्नतां या न गताभिषेकतस्तथानमम्ले वनवास दुःखतः ।**
**मुखाम्बुज भी रघुनन्दनस्य मे सदास्तु सा मंजुलमंगल प्रदा।**

(अयोध्या कांड)

राम को राज्याभिषेक की बात को सुनकर प्रसन्नता हुई थी न वह उनके मुखकमल की छवि वनवास के दुख से मलिन ही हुई । राम सच्चे स्थितिप्रज्ञ पुरुषोत्तम थे। राम के लिये अपना दुख धूल के समान और मित्र का दुख पर्वत के समान है। राम से श्रेष्ठ सखा दूसरा नहीं हैं। उन्होने सुग्रीव से कहा था–

**जे मित्र दुख होहि दुखारी । तिन्हहि जिलोकत पातक भारी ।**
**निज दुख गिरि सम रजकर जाना। मित्रक दुख रज मेरू समाना।**

यही राम का आचरण है। वे जिसे अपना मित्र मानते हैं उसके लिये बड़े से बड़ा संकट भी उठा लेते हैं। मित्रता की रक्षा के लिये यदि नीति भी छोड़ना पड़े तो अनुचित नहीं, इसीलिये बाली पर वे छिपकर भी वार कर देते हैं, जो नीति विरूद्ध था क्योंकि प्रेम और मित्रता ही सर्वोच्च नीति है, और जो नीति प्रेम अथव मित्रता में बाधा बने उसे त्याग देना ही सुनीति है।

लेखक वरिष्ठ साहित्यकार है।
18 सौमित्र नगरए सुभाष स्कूल के पीछे,
खंडवा म.प्र.–450001

■

# श्रीरामचरितमानस का सांस्कृतिक वैशिष्ट्य

## ( संगीत के विशेष संदर्भ में )

-डॉ. राजेन्द्र कृष्ण अग्रवाल 'रजक'

भारत के जन-जन के प्राणाधार आनंदकंद भगवान् सच्चिदानंद श्रीरामचंद्र जी के अनन्य उपासक जन-कवि गोस्वामी तुलसीदास जी का जन्म ऐसे संक्रमण काल में हुआ था जब यवन साम्राज्य के अत्याचारों एवं अनाचारों से परिपीड़ित हिंदू जनता सगुण ब्रह्म की उपासना एवं आराधना करने में असमर्थ-सी हो चुकी थी और निर्गुण ब्रह्म की उपासना ही अवशेष रह गई थी तथा निर्गुण ब्रह्मवादी महात्माओं के शुष्क ज्ञानोपदेश मानव-समाज के सामने प्रश्नों के तो अंबार खड़े किए जा रहे थे किंतु समाधान कोई भी नहीं दे पा रहा था।

श्रीरामचरितमानस संत शिरोमणि, परम् रामभक्त, कविकुल कमल दिवाकर महात्मा तुलसीदास कृत एक ऐसा अनुपम और अनूठा महाकाव्य है जिसने भारतीय संस्कृति की महनीयता से न केवल भारतवर्ष को, बल्कि सम्पूर्ण विश्व को अपनी ओर आकृष्ट किया है। यद्यपि तुलसीदास जी ने इसे अवधी और ब्रज मिश्रित लोक-भाषा में 'स्वान्त:सुखाय' ही लिखा, तथापि उन्होंने इसे 'नानापुराणनिगमागम-सम्मत' भी कहा। संभवतया इसीलिए यह भारतीय मनीषा का एक ऐसा अनुपम, अद्भुत और उत्कृष्टतम ग्रंथ बन पड़ा जिसे साधारण व्यक्ति से लेकर विद्वान् तक सहज ही हृदयंगम कर लेता है। अनपढ़ और अनगढ़ भारतीय जन-जन के मन पर भी इसकी ऐसी गहरी छाप अंकित हो चुकी है कि जिसने कभी पढ़ना-लिखना भी न सीखा हो, ऐसे व्यक्ति को भी इस महाकाव्य की कम-से-कम दस-बीस चौपाइयां तो अवश्य ही कंठस्थ होंगी। यही नहीं, उनका प्रयोग भी वह समय-समय पर अपनी बात की पुष्टि के लिए अवश्य करता मिल जाएगा। इसकी लोकप्रियता का सबसे बड़ा कारण भी यही है कि इसमें हर प्रकार के उस ज्ञान का भंडार है जिसके बिना सुचारु रूप से समाज चल ही नहीं सकता। भारतीय संस्कृति के उच्चतमादर्शों का पग-पग पर दिग्दर्शन कराता यह महाकाव्य जीवन जीने की कला सिखाता है।

संस्कृति अपने आप में एक बहुत ही पवित्र और व्यापक अर्थ को समेट लेने वाला शब्द है। मेरा अपना मानना है कि कोई भी मनुष्य या समाज सहज ही **'संस्कृति से संपूर्णता की ओर'** (Universality through Culture) अग्रसर हो सकता है। इस शब्द की तुलना 'ऐब की सीढ़ी' (ABCD) पर चढ़कर पढ़ने-लिखने वालों के 'कल्चर' (Culture) शब्द से तो कदापि नहीं की जा सकती। Culture शब्द का अर्थ Cultivation से है, जिसका अर्थ है खेती। यदि हम संस्कृति के इस शब्दार्थ को खेती के रूप में ही स्वीकारें तो हमारी संस्कृति तो चित्तभूमि की खेती है; जैसा कि आचार्य नरेन्द्र देव ने कहा है। संस्कृति का संबंध हृदय, मस्तिष्क, रुचि और बुद्धि से है। यह मनुष्य की सहज प्रवृत्तियों, शक्तियों और उसके परिष्कार की द्योतक है। ब्रह्मानंद सरस्वती के अनुसार -

'संस्कृति शब्द 'सम्' उपसर्ग के साथ 'कृ' धातु और भूषण के रूप में 'सुट्' का आगम करके 'क्तन्' प्रत्यय जोड़ने से बना है।' अत: संस्कृति के अंतर्गत मनुष्य की सभी क्षेत्रों में लौकिक तथा पारलौकिक उन्नति की चेष्टाएं स्वत: ही समाहित हो जाती हैं। जैसे - वैयक्तिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक और राजनैतिक चेष्टाएं आदि। भारतीय एवं पाश्चात्य अनेक विद्वानों ने इसकी व्याख्या की है। डॉक्टर वासुदेव शरण अग्रवाल ने इसे 'जीवन के नानाविध रूपों का समुदाय' कहा है तो T. S. Eliot ने कहा है कि -

"Culture is not merely the sum of several activities but a way of life."

हम भारतीयों का यह दुर्भाग्य ही माना जाएगा कि वर्तमान में हमारे अधिसंख्य प्राचीन ग्रंथों को पुन: खोजकर लाने का श्रेय अधिकतर अंग्रेज़ विद्वानों को ही जाता है; अत: उनके द्वारा हमारे ग्रंथों को जैसे समझ लिया गया, उनकी वैसी ही व्याख्याएं उन्होंने कर डालीं और वही हमारे दिलो-दिमाग पर छा गईं। जो बात उनके कल्चर में है ही नहीं, उसको वे व्याख्यायित कर भी तो कर कैसे सकते थे ? अस्तु।

संस्कृति 'समाज का दर्पण' होती है और कलाएं 'संस्कृति का दर्पण' होती हैं। भारतीय संस्कृति चाहे वैदिककालीन हो, चाहे मध्यकालीन या फिर उत्तरकालीन, सभी में कुछ-न-कुछ अपरिवर्तनीय आदर्श अवश्य मिलेंगे। कितनी ही सामाजिक, धार्मिक अथवा राजनैतिक उथल-पुथल क्यों न हो जाएं, ये टस-से-मस नहीं होते।

यह हम सभी जानते हैं कि समस्त ललित कलाओं में संगीत को सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त है। संगीत एक ऐसी कला है जिसमें भारतीय संस्कृति के सभी आदर्शों का प्रतिरूप दिखाई देता है।

श्रीरामचरितमानस एक धार्मिक ग्रंथ है और भारत एक धर्मप्रधान देश है। यहां के सभी धर्मावलंबियों की सर्वशक्तिमान ईश्वर में अगाध और अटल आस्था है। पाप-पुण्य, स्वर्ग-नर्क आदि का भय हर किसी में न्यूनाधिक देखने को मिल ही जाएगा। संगीत भी एक ऐसी कला है जिसका धर्म से अभिन्न और अविच्छिन्न संबंध है। प्राचीन समय

से ही धर्म और संगीत का रिश्ता एक सिक्के के दो पहलुओं की भांति चला आ रहा है। पूजा-पाठ, मंत्र, अर्चना, भजन, कीर्तन, आरती आदि का बिना संगीत कोई महत्त्व नहीं होता। संगीत की ध्रुवपद, धमार, खयाल आदि विविध गायकियों में ईश-भक्ति पग-पग पर दिखाई देती है। विविध प्रकार के गायन, वाद्य-वादन और नर्तन के दर्शन मंदिरों और देवालयों में किए जा सकते हैं। राष्ट्र-भक्ति भी हर मनुष्य का परम् धर्म और कर्त्तव्य है। उसके लिए भी संगीत एक आवश्यक अवलंबन है। भारत के स्वाधीनता संग्राम में इसके महत्त्व को आसानी से देखा जा सकता है। आज भी सेना के तीनों (जल, थल और वायु) अंगों में संगीत की महत्ता देखी जा सकती है। पुलिस विभागों में भी उनके बैंड होते हैं। राष्ट्रीय पर्वों पर भी इनकी महत्ता कितनी होती है, यह हम सभी जानते हैं। महाभारत के महायुद्ध में भी इनकी महत्ता देखी जा सकती है।

श्रीरामचरितमानस में भी गोस्वामी तुलसीदास जी ने विविध अवसरों पर गायन, वादन और नृत्य का दिग्दर्शन तो कराया है, पर बहुत ही कम। कारण कि उनका संगीत पक्ष वैसा प्रबल नहीं रहा जैसा कि पुष्टि मार्गीय अष्टछापी कवियों का। यूं गोस्वामी जी की %गीतावली% में संगीत-पक्ष बहुत अधिक प्रबलता के साथ उजागर हुआ है। यद्यपि इसका मूल कारण गीतावली के गीतों का उनके साथ के ही एक प्रिय मित्र द्वारा उनको संगीतबद्ध किया जाना रहा है। कहते हैं कि यह मित्र श्रीकृष्ण काल में उनके प्रिय सखा 'मनसुखा' ही थे, जो ध्रुपद गायकी के अच्छे विद्वान् होने के साथ-साथ संगीत के हिसाब से शब्दों में आंशिक परिवर्तन कर उनको संगीतानुकूल भी बना लेते थे। इनमें एक वाग्गेयकार के सभी गुण थे। इनका जन्म भी गोस्वामी तुलसीदास जी के समय में ही चित्रकूट के पास एक गांव में हुआ था। फिर भी तुलसीदास जी ने श्रीरामचरितमानस को संगीत से अछूता नहीं रखा। संगीत की दृष्टि से यदि संपूर्ण श्रीरामचरितमानस का अवलोकन करें तो हम प्रथम सोपान अर्थात् बाल काण्ड में संगीत का सर्वाधिक वर्णन पाते हैं, अन्य सोपानों (कांडों) में संगीत बहुत ही कम दिखता है। तो पहले हम बाल काण्ड को लेकर ही चर्चा करते हैं-

यह सच है कि श्रीराम के जन्म के अवसर पर संगीत की चर्चा बहुत कम हुई है जबकि वहां की जा सकती थी। आज भी जब मानस का अखंड पाठ होता है तो घर की बड़ी - बूढ़ी महिलाएं रामजन्म के प्रकरण में **भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी** 1/199/छं.1 के प्रारंभ होते ही थाली बजवाने लग जाती हैं। ऐसा हो ही नहीं सकता कि प्रभु श्रीराम का जन्म हो और वाद्य-वादन कर खुशियां न मनाई जाएं। गोस्वामी जी का मन भले ही राम जन्म के समय संगीत में न रमा हो, किंतु रामजी के विवाह के प्रकरण में तो ऐसा रमा है कि पग-पग पर उन्होंने संगीत बिखेर दिया है। बाल काण्ड में वर्णित वह संगीत संक्षेप में इस प्रकार है -

जब श्री राम जी के आविर्भाव की बात ब्रह्माजी सहित सभी देवगण को ज्ञात होती है तो आकाश-मार्ग में सभी देवगण और गंधर्व आदि घनघोर दुंदुभी (नगाड़े) की ध्वनि के मध्य प्रसन्नता के साथ अपनी सुंदर-सुंदर अंजुलियों से पुष्प-वर्षा करते हुए भगवान का गुण-गान कर करने लग जाते हैं। यथा -

**गगन बिमल संकुल सुर जूथा।**
**गाबहिं गुन गंधर्ब बरूथा।।**
**बरषहिं सुमन सुअंजुलि साजी।**
**गहिगहि गगन दुंदुभी बाजी।।** 1/190/6-7

भगवान् श्रीराम जब शिव-धनुष को तोड़ देते हैं, उस समय भाट, मागध, सूत आदि द्वारा विरुदावली (कीर्ति) का बखान अनेकानेक वाद्य-यंत्रों की इतनी तेज ध्वनि के मध्य होता है कि धनुष के टूटने की भयंकर गर्जना तक किसी को सुनाई नहीं देती -

**झांझि, मृदंग, संख, सहनाई।**
**भेरि, ढोल, दुंदुभी बजाई।।**
**बाजहिं बहु बाजने सुहाए।**
**जहं तहं जुबतिन मंगल गाए।।** 1/262/1-2

तत्पश्चात् सखियां मंगलाचार के गीत गाती हैं -

**संग सखीं सुन्दर चतुर, गावहिं मंगलचार।**
**गवनी बाल मराल गति, सुषमा अंग अपार।।** 1/263

धनुष भंग होने के बाद जयमाल के वर्णन में वे लिखते हैं कि -

**पुर अरु ब्योम बाजने बाजे।**
**खल भए मलिन साधु सब राजे।।** 1/264/1
**नाचहिं गावहिं बिबुध बधूटीं।**
**बार - बार कुसुमांजलि छूटीं।।**
**जहं तहं बिप्र बेद धुनि करहीं।**
**बंदी बिरिदावलि उच्चरहीं।।** 1/264/3-4

शिव धनुष भंग होने से क्रोधित परशुराम जी जब क्रोध के बाद शान्त हो जाते हैं और क्षमा याचना कर लेते हैं, उस समय भी गायन-वादन का दृश्य उपस्थित करते हुए तुलसीदास जी लिखते हैं कि -

**अति गहगहे बाजने बाजे।**
**सबहिं मनोहर मंगल साजे।।**
**जूथ जूथ मिलि सुमुखि सुनयनी।**
**करहिं गान कल कोकिल बयनी।।** 1/285/1-2

दशरथ जी के भवन के दृश्य को वर्णित करते हुए तुलसीदास जी लिखते हैं कि -

**गावहिं मंगल मंजुल बानी।**
**सुनि कल रव कलकंठि लजानी।।** 1/296/3
**गावहिं सुंदरि मंगल गीता।**
**लै लै नामु रामु अरु सीता।।** 1/296/7

राजा दशरथ जी के दरवाजे पर बारात में सम्मिलित होने के लिए भीड़ का सैलाब उमड़ा पड़ रहा है। हाथियों के गले में पड़े घंटे घनघोर ध्वनि कर रहे हैं। हाथी, घोड़े और रथों के साथ नगाड़ों की ध्वनि इतनी तीव्र हो रही है कि किसी को भी न तो अपनी ही आवाज़ सुनाई पड़ रही और न किसी अन्य की। स्त्रियां विविध प्रकार के मंगल गीतों का गायन कर रही हैं। भीड़ का आलम ये है कि यदि कोई एक पत्थर भी फेंक दे तो उसका पिस कर चूर्ण बन जाए। यथा -

**गरजहिं गज घंटा धुनि घोरा।**
**रथ रव बाजि हिंस चहुं ओरा।।**
**निदरि घनहिं घुर्म्मरहिं निसाना।**
**निज पराइ कछु सुनिअ न काना।।**
**गावत गीत मनोहर नाना।**
**अति आनंद न जाइ बखाना।।** 1/300/1-2-5

रामजी की बारात पूर्ण रूप से सज चुकी है। अब बस उसके चलने की तैयारी हो रही है। दशरथ जी श्रीराम जी का ध्यान कर गुरु-आज्ञा पाकर शंखाध्वनि करते हैं।

**सुमिरि रामु गुर आयसु पाई।**
**चले महीपति संख बजाई।।** 1/301/3
**भयउ कोलाहल हय गय गाजे।**
**ब्योम बरात बाजने बाजे।।**
**सुर नर नारि सुमंगल गाईं।**
**सरस राग बाजहिं सहनाई।।**
**घंट घंटि धुनि बरनि न जाहीं।**
**सरव करहिं पाइक फहराहीं।।**
**करहिं बिदूषक कौतुक नाना।**
**हास कुसल कल गान सुजाना।।** 1/301/5-6-7-8
**तुरग नचावहिं कुंअर बर,**
**अकनि मृदंग निसान।**
**नागर नट चितवहिं चकित,**
**डगहिं न ताल बंधान।।** 1/302
**सुनि अस ब्याह सगुन सब नाचे।**
**अब कीन्हे बिरंचि हम सांचे।।**
**एहि बिधि कीन्ह बरात पयाना।**
**हय गय गाजहिं हने निसाना।।** 1/303/3-4

बारात की जब अगवानी होती है तब भी मंगल ध्वनि कराना गोस्वामीजी नहीं भूलते –

**आवत जानि बरात बर, सुनि गहगहे निसान।**
**सजि गज रथ पदचर तुरग, लेन चले अगवान।।** 1/304

बाराती और अगवानों का मिलन भी गोस्वामी जी मंगल ध्वनि के मध्य ही कराते हैं –

**बरषि सुमन सुर सुंदरि गावहिं।**
**मुदित देव दुंदुभी बजावहिं।।** 1/305/1

इस प्रकार बारात को सुंदर जनवासे में ले जाया जाता है। राजा दशरथ को चारों पुत्रों सहित देखकर गोस्वामी जी लिखते हैं कि –

**सुमन बरिसि सुर हनहिं निसाना।**
**नाकनटीं नाचहिं करि गाना।।** 1/308/4

जब बारात को आदरपूर्वक लेने जनवासे पहुंचते हैं, उस समय का दृश्य देखिए –

**संख, निसान, पनव बहु बाजे।**
**मंगल कलस सगुन सुभ साजे।।**
**सुभग सुआसिनि गावहिं गीता।**
**करहिं बेद धुनि बिप्र पुनीता।।** 1/312/3-4

पंचशब्द अर्थात् (तन्त्री, ताल, झांझ, नगाड़ा और तुरही का मिश्रित वादन) और पंचध्वनि अर्थात् (वेदध्वनि, वंदिध्वनि, जयध्वनि, शंखध्वनि और हुलूध्वनि) को बहुत ही मंगल कारक माना जाता है।

मानस में भी श्रीरामजी के विवाह मंडप की ओर प्रस्थान के समय तुलसीदास जी ने इनका कितना सुंदर वर्णन किया है। देखें –

**पंच सबद धुनि मंगल नाना।**
**पट पांवड़े परहिं बिधि नाना।।** 1/318/3

सुंदर सजी-धजी युवतियां जब सीताजी को ले जा रही हैं तब उनके पायजेब, पैंजनी और सुंदर कंकणों की ध्वनि भी गोस्वामी तुलसीदास जी का मन मोह लेती है और उनकी लेखनी एक सुंदर छंद लिख उठती है –

**कल गान सुनि मुनि ध्यान त्यागहिं,**
**काम कोकिल लाजहीं।**
**मंजीर नूपुर कलित कंकन,**
**ताल गति बर बाजहीं।।**

(1/322से पूर्व के छंद की अंतिम दो पंक्तियां)

इसमें पूर्व में उद्धृत कुछ वाद्यों का भी पुनः उल्लेख होता है।

अयोध्यापुरी में जब बारात पहुंच जाती है, उस अवसर पर विशेष शब्द करने वाली झांझों और डफलियों के वादन का भी गोस्वामी जी ने उल्लेख किया है। देखें –

**हने निसान पनव बर बाजे।**
**भेरि संख धुनि हय गय गाजे।।**
**झांझि बिरव डिंडिमीं सुहाई।**
**सरस राग बाजहिं सहनाई।।**
**सेवक सकल बजनिआं नाना।**
**पूरन किए दान सनमाना।।** 1/350(ख)/8

और इस प्रकार सिय रघुवीर के विवाह की कथा के साथ ही बालकांड नामक प्रथम सोपान संपन्न हो जाता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि गोस्वामी तुलसीदास जी बाल काण्ड में ही दुंदुभी, झांझ, मृदंग, शंख, शहनाई, भेरी, ढोल, घंट (घंटे), घंटि (घंटियां), निसान, पणव, झांझ बिरव, डिंडिमी (डफली) जैसे अनेक सांगीतिक वाद्य – यंत्रों सहित पायजेब, पैंजनी और कंकणों तक को समाहित कर लेते हैं। साथ ही पंच वाद्य – वादन का उल्लेख करने से भी नहीं चूकते, जो हमारी सनातन संस्कृति का अत्यंत ही प्रमुख और पवित्र वाद्य-समूह है। साथ ही बारात के लिए आवश्यक पाइक (पटेबाज), विदूषक (मसखरे), नाकनटीं (अप्सराओं) और बजनिआं (बाजे वालों) का भी पर्याप्त उल्लेख करते हैं।

अन्य सोपानों (कांडों) में भी संगीत का वर्णन तो है किंतु अपेक्षाकृत बहुत कम।

द्वितीय सोपान अर्थात् अयोध्या काण्ड के अंतर्गत जब श्रीराम जी के राज्याभिषेक के मंगल समाचार को अयोध्यावासी सुनते हैं, तब गोस्वामी जी मंगल गान कराते हुए कहते हैं कि –

**गावहिं मंगल कोकिलबयनी।**
**बिधुबदनीं मृगसावकनयनी।।** 2/7/7
जब श्रीराम जी को अपने राज्याभिषेक की बात पता चलती है तो वे इस बात पर दुखी होते होते हैं कि जब सब भाई एकसाथ ही आए हैं तो फिर राज्याभिषेक केवल एक का कैसे ?
इधर अयोध्या में
**बाजहिं बाजने बिबिध बिधाना।**
**पुर प्रमोदु नहिं जाइ बखाना।।** 2/10/1
उधर मंथरा को पता चलती है तो वह देखती है कि –
**दीख मंथरा नगरु बनावा।**
**मंजुल मंगल बाज बधावा।।** 2/12/1
मंथरा के भड़काने में आने पर जब कैकेई की हठ पर श्रीराम को बनवास और भरत जी को राजतिलक की तैयारी होती है तो भाटों द्वारा विरुदावली का पढ़ना और नाच – गान राजा दशरथ को बाण जैसे प्रहार करता लगता है और मंगल–साज भी ऐसे लग रहे हैं जैसे पति के साथ सती होने वाली स्त्री को आभूषण। यथा –
**बिलपत नृपहि भयउ भिनुसारा।**
**बीना बेनु संख धुनि द्वारा।।**
**पढ़हिं भाट गुन गावहिं गायक।**
**सुनत नृपहि जनु लागहिं सायक।।**
**मंगल सकल सोहाहिं न कैसें।**
**सहगामिनिहि बिभूषन जैसें।।** 2/36/5–6–7
भगवान राम को मनाकर वापिस लौटने के लिए मनाने के उद्देश्य से जब भरत जी वन में आ रहे होते हैं तो अकारण भयग्रस्त निषादराज न जाने क्या – क्या नहीं सोच लेते। युद्ध की आशंका के चलते वह **जुझाऊ** ढोल (लड़ाई का ढोल) बजाने के लिए निर्देश देते हैं –
**दीख निषादराज भल टोलू।**
**कहेउ बजाउ जुझाऊ ढोलू।।** 2/191/3
किंतु जब सभी आशंकाएं निर्मूल सिद्ध हो जाती हैं और भरत जी उस वन प्रांत की शोभा निरख रहे हैं, उस समय का वर्णन देखिए –
**झरना झरहिं मत्त गज गाजहिं।**
**मनहुं निसान बिबिध बिधि बाजहिं।।**
**अलिगन गावत नाचत मोरा।**
**जनु सुराज मंगल चहुं ओरा।।** 2/235/5–7
इस प्रकार इस कांड में नृत्य और गायन की चर्चा सहित वीणा, वेणु, निसान और शंख के अतिरिक्त युद्ध के समय के विशेष ढोल **'जुझाऊ ढोल'** का विशेष रूप से उल्लेख हुआ है।
तीसरा कांड अरण्य काण्ड है। इसमें जब अगस्त्य मुनि के सुतीक्ष्ण नामक सुजान (ज्ञानी) शिष्य को श्रीराम जी के आगमन की पता चलती है तो वह उनका भक्त होने के कारण अपना विविध प्रकार के आचरण कर उल्लास को प्रकट करता है। यथा –
**कबहुंक नृत्य करइ गुन गाई।** 3/9/12 का भाग
आगे प्रभु श्री राम जब चौदह हज़ार प्रेतो (राक्षसों) के समक्ष अकेले होते हैं तो माया रचकर हर किसी में अपनी ही सूरत की भ्रांति पैदा कर देते हैं। वे सब एक दूसरे को राम समझकर आपस में ही मार डालते हैं। इससे हर्षित हो देवगण की प्रतिक्रिया इस प्रकार होती है –
**हरषित बरषहिं सुमन सुर, बाजहिं बिबिध निसान।** 3/20–ख
जब माया रूपी कांचन मृग को भी प्रभु अंतर – प्रेम पहचानते हुए कठोर बाण मारकर भी दुर्लभ गति प्रदान कर देते हैं तब देवगण प्रसन्नतापूर्वक प्रभु का गुणगान करते हैं –
**बिपुल सुमन सुर बरषहिं, गावहिं प्रभु गुन गाथ।** 3/27
इस प्रकार इस कांड में नृत्य की चर्चा के अतिरिक्त केवल निसान का ही उल्लेख मिलता है।
श्रीरामचरितमानस का चतुर्थ सोपान किष्किंधा काण्ड है। इसमें गोस्वामी जी ने कहीं भी गायन वादन की चर्चा नहीं की है। **हां, दुंदुभि अस्थि ताल देखराए।**
में 'दुंदुभी और ताल' वाद्य – यंत्रों के नाम नहीं हैं। यहां तो सुग्रीव द्वारा भगवान श्रीराम जी को दुंदुभि राक्षस की हड्डियां और ताल के वृक्ष दिखलाए जाने की बात है। ध्यातव्य है कि संगीत में मंजीरे जैसे ही किंतु स्तनाकर और कांस्य धातु के बने हुए वाद्य – यंत्र को ताल कहा जाता है। गोस्वामी तुलसीदास जी के समय में इसका बहुतायत में प्रचलन था और आज भी मथुरा के चतुर्वेदी समाज में होली के अवसर पर गाई जाने वाली तान गायकी सहित कुछ गायन – शैलियों में इसका प्रयोग किया जाता है। यह वाद्य कोलकाता और वाराणसी में ही मिलता है। इसी प्रकार सबहिं नचावत राम गोसाईं में नृत्य की बात न होकर श्रीराम जी द्वारा जगत को अपने इशारों पर नचाने की बात कही गई है। इस प्रकार इसमें संगीत संबंधी कोई चर्चा नहीं मिलती।
श्रीरामचरितमानस का पंचम सोपान सुंदर काण्ड है। इसमें भी गोस्वामी जी ने संगीत को न के बराबर स्थान दिया है। यथा –
जब लंका में हनुमान जी की पूंछ में कपड़ा लपेटने और घी व तैल लगाने के चक्कर में नगर भर का सारा कपड़ा और घी – तैल समाप्त हो गया, उस समय तमाशा देखने को आए नगरवासियों ने हनुमान जी को पैरों से ठोकरें मार – मारकर उनकी हंसी उड़ाई। उस समय उनकी उत्सुकता को वर्णित करते समय गोस्वामी जी लिखते हैं कि –
**बाजहिं ढोल देहिं सब तारी।**
**नगर फेरि पुनि पूंछ प्रजारी।।** 5/24/7
उस समय तुलसीदास जी ने 25 वें दोहे में चले मरुत उनचास लिखा है। वैसे संगीत में उनचास प्रकार की कूट तानें होती हैं।
इस प्रकार इस कांड में मात्र ढोल वादन के ताली बजाने का ही वर्णन मिलता है।
षष्ठम सोपान लंका काण्ड है। इसमें सर्वप्रथम संगीत प्रकरण तब आता है जब लंका की चोटी पर नाच – गान के अखाड़े के रूप में बने एक विचित्र महल में रावण आकर बैठ जाता है और किन्नर उसके गुणगान करने लग जाते हैं। यथा –
**बैठ जाइ तेहिं मंदिर रावण।**

**लागे किन्नर गुन गन गावन**
**बाजहिं ताल पखाउज बीना।**
**नृत्य करहिं अपछरा प्रबीना।** 6/9/8-9

विभीषण द्वारा जब भगवान राम से नाच-गान द्वारा रावण के अभिमान प्रकट करने की बात कही जाती है तब गोस्वामी जी लिखते हैं कि -

**बाजहिं ताल मृदंग अनूपा।**
**सोइ रव मधुर सुनहु सुर भूपा।।** 6/12(ख)/7

जब श्री रामजी की वानर सेना लंका को चारों ओर से घेरने की तैयारी कर उत्साहपूर्वक निकल पड़ती है तो वह मुख से ही डंके और भेरी बजाने लगती है -

**घटाटोप करि चहुं दिसि घेरी।**
**मुखहिं निसान बजावहिं भेरी।।** 6/38(ख)/10

दूसरी ओर राक्षसों द्वारा -

**बाजहिं ढोल निसान जुझाऊ।**
**सुनि धुनि होइ भटन्हिं मनचाऊ।।**
**बाजहिं भेरि नफीरि अपारा।**
**सुनि कादर उर जाहिं दरारा।।** 6/40/2-3

वानरों द्वारा किले को पुन: घेर लेने की बात अपने कानों से सुन वीर मेघनाद किले से डंका बजाकर उतरकर उनके सामने आता है। यहां पर डंका का उल्लेख किए बिना ही उसके बजाने की बात छिपी हुई है। यथा-

**मेघनाद सुनि श्रवन अस, गढ़ु पुनि छेंका आइ।**
**उतर्यो बीर दुर्ग तें, सन्मुख चल्यो बजाइ** 6/49

मेघनाद जब श्रीराम जी को डराने के लिए विविध प्रकार की माया रचता है, उस समय पिशाच-पिशाचिनों के नृत्य का वर्णन करते हुए गोस्वामी जी लिखते हैं कि -

**नाना भांति पिसाच पिसाची।**
**मारु काटु धुनि बोलहिं नाची।।** 6/51/2

इसी प्रकार कुंभकर्ण के वध के पश्चात् देवताओं द्वारा दुंदुभी बजाकर और श्रीहरि का गुणगान किया गया -

**सुर दुंदुभी बजावहिं हरषहिं।**
**अस्तुति करहिं सुमन बहु बरषहिं।।**
**गगनोपरि हरि गुन गन गाए।**
**रुचिर बीररस प्रभु मन भाए।।** 6/70/9-11

जब मृत्यु के समय मेघनाद सारे कपट छोड़कर लक्ष्मण जी और श्रीराम जी के नाम को पुकारता है तब देवगण आकाश से पुष्प वर्षा करते हैं। उस समय भी दुंदुभी ( नगाड़े) बजते हैं और भगवान श्रीराम जी के विमल यश का गान होता है -

**बरषि सुमन दुंदुभी बजावहिं।**
**श्रीरघुनाथ बिमल जसु गावहिं।।** 6/76/3

रावण जब स्वयं के युद्ध से विमुख न होने की प्रतिज्ञा कर भीरु योद्धाओं को युद्ध से पूर्व ही भाग लेने की बात कह अपने पवन की गति से चलने वाले रथ पर आरूढ़ होने को होता है, उस समय सारे जुझाऊ ( युद्ध के समय बजने वाले) बाजे बजने लगते हैं -

**अस कहि मरुत बेग रथ साजा।**
**बाजे सकल जुझाऊ बाजा।।6/77/7**

अनेक अपशकुनों के बाद भी जब रावण अपनी भारी सेना को लेकर रण-क्षेत्र को प्रस्थान करता है उस समय बड़ा ही भयावह दृश्य उपस्थित हो जाता है। यहां तक कि धूल के गुबारों के कारण सूर्यदेव तक छिप जाते हैं। उस समय भी ढोल नगाड़े आदि घनघोर ध्वनि करते हुए बज उठते हैं -

**पनव निसान घोर रव बाजहिं।**
**प्रलय समय के घन जनु गाजहिं।।** 6/78/8

उनके योद्धाओं को सुख प्रदान करने वाली मारू राग का वादन भेरि, नफीरी और शहनाई द्वारा किया जा रहा है -

**भेरि नफीरि बाज सहनाई।**
**मारू राग सुभट सुखदाई।।** 6/78/9

जब चतुर वानरों द्वारा रावण के यज्ञ का विध्वंस कर दिया जाता है तब रावण जीने की आशा त्याग क्रोधित होकर चल देता है और काल के वशीभूत हो युद्ध का डंका बजाने का आदेश देता है -

**भयउ कालबस काहु न माना।**
**कहेसि बजावहु जुद्ध निसाना।।6/85/2**

वानरों को भारी पड़ता देख रावण अंतर्धान हो मायाजाल रचता है और हाथों में धनुष बाण लिए भयंकर बेताल, भूत और पिशाच आदि प्रकट कर देता है। उस समय भी बीभत्स नृत्य और गान का दृश्य तुलसीदास जी उपस्थित कर देते हैं। यथा -

**करि सद्य सोनित पान।**
**नाचहिं करहिं बहु गान।।** 6/100/छं. 2 की अंतिम पंक्ति

जब श्री राम जी ने कालसर्प की भांति कानों तक खींचकर 31 बाण छोड़े तो एक ने रावण की नाभि से अमृत खींचा और दूसरों ने सारे शरीर को क्षत - विक्षत कर दिया। उसका सिर और भुजाहीन धड़ पृथ्वी पर नाचने लगा।

**सायक एक नाभि सर सोषा।**
**अपर लगे भुज सिर करि रोषा।।**
**लै सिर बाहु चले नाराचा।**
**सिर भुज हीन रुंड महि नाचा।।** 6/102/1-2

जिस समय रावण की पत्नी मंदोदरी के सामने उसके शीश और कटी हुई भुजाओं को रखकर सारे बाण श्रीरामजी के पास वापिस जाते हैं, उस समय देवगण दुंदुभी बजाकर हर्ष व्यक्त करते हैं -

**प्रबिसे सब निषंग महुं जाई।**
**देखि सुरन्ह दुंदुभी बजाई।।** 6/102/8

यहीं वर्णित एक छंद में भी दुंदुभी वादन का वर्णन है -

**सुर सुमन बरषहिं हरष संकुल बाज दुंदुभि गहगही।।6/102/छं.1से**

अग्नि द्वारा श्रीराम जी को माता सीता को समर्पित किया गया, उस समय गोस्वामी जी ने एक दोहे के माध्यम से संगीतमय दृश्य उपस्थित किया है -

**बरषहिं सुमन हरषि सुर, बाजहिं गगन निसान।**
**गावहिं किन्नर सुरबधू, नाचहिं चढ़ीं बिमान।।6/109/क**

इस कांड में गोस्वामी तुलसी दास जी ने संगीत का जहां हर्ष प्रकट करने के लिए उपयोग किया है वहीं जुगुप्सा (घृणा) के दृश्यों के लिए भी किया है।

इस प्रकार इस कांड में जहां राग मारू के गायन की चर्चा की है वहीं ताल, पखावज, वीणा, मृदंग, दुंदुभी, नगाड़े, ढोल, निसान, जूझाऊ ढोल, भेरि, नफीरी, पणव और डंका जैसे संगीत के वाद्यों के नामों का उल्लेख किया है। बाल काण्ड को छोड़कर इस कांड में संगीत-पक्ष की प्रबलता स्पष्ट दिखाई देती है।

सप्तम सोपान उत्तर काण्ड है। इसमें जब श्रीराम जी के अयोध्यापुरी लौटने का समाचार अयोध्यावासियों को मिलता है तो सब नगर की ओर दौड़ पड़ते हैं। स्वर्ण के थालों में स्वागत के लिए सामग्री रखकर सौभाग्यवती स्त्रियां गाती हुई चली आती हैं –

**भरि-भरि हेम थार भामिनी।**
**गावत चलिं सिंदूरगामिनी।।**7/2(ख)/6

स्त्रियां मीठे स्वरों में सुंदर मंगल गान करती हैं –

**देखि मधुर सुर हर्षित, करहिं सुमंगल गान।**7/3(ख)दूसरी पंक्ति

नगर में अनेकानेक प्रकार के सुंदर मंगल साज सजाए जाते हैं; डंके बजने लग जाते हैं –

**नाना भांति सुमंगल साजे।**
**हरषि नगर निसान बहु बाजे।।7/8(ख)/4**

सौभाग्यवती स्त्रियां आरती सजाकर मंगल गान कर रही हैं –

**कंचन थार आरतीं नाना।**
**जुबतीं सजें करहिं सुभ गाना।।7/8(ख)/6**

आकाश में नगाड़े बज रहे हैं –

**होंहिं सगुन सुभ बिबिध बिधि, बाजहिं गगन निसान।**7/9(ख)पहली पंक्ति

सिंहासनारूढ़ श्रीराम जी को देख देवगण दुंदुभी बजाते हैं –

**सिंघासन पर त्रिभुअन साईं।**
**देखि सुरन्ह दुंदुभीं बजाईं।।**7/11(ग)/8
**नभ दुंदुभीं बाजहिं बिपुल गंधर्ब किन्नर गावहीं।**
**नाचहिं अपछरा बृंद परमानंद सुर मुनि पावहीं।।**7/11(ग)/छं1 दूसरी पंक्ति

इसी में आगे काकभुशुंडि जी गरुण जी को साम, दान, दंड और भेद के विषय में बतलाते हुए कहते हैं कि –

**दंड जतिन्ह कर भेद जहं, नर्तक नृत्य समाज।**
**जीतहु मनहि सुनिअ अस, रामचंद्र कें राज।।7/22**

अर्थात् रामराज्य में दण्ड केवल सन्यासियों के हाथ में, भेद नृत्य समाज में या सुर – ताल के भेद के लिए और जीतना मन के अर्थ में लिया जाता था।

आगे जिस समय भगवान शिव माता गिरिजा से हनुमान जी के श्रीराम जी के प्रति अतुलनीय प्रेम का वर्णन करते हैं उसी समय नारद मुनि का श्रीराम जी के गुणगान करते हुए आगमन होता है –

**तेहि अवसर मुनि नारद आए करतल बीन।**
**गावन लागे राम कल कीरति सदा नबीन।।7/50**

सच तो यही है कि प्रभु श्रीराम जी एक नट की भांति अनेक वेष धारण कर लीला मात्र ही करते हैं –

**जथा अनेक वेष धरि, नृत्य करइ नट कोइ।**
**सोइ सोइ भाव देखावइ, आपुन होइ न सोइ।।**7/72(ख)

आगे काकभुशुण्डि जी पक्षीराज गरुण जी से कहते हैं कि –

**ललित अंक कुलिसादिक चारी।**
**नूपुर चारु मधुर रवकारी।**
**चारु पुरट मनि रचित बनाई।**
**कटि किंकिनि कल मुखर सुहाई।।**7/75(ख)7-8

अर्थात् (तलवे में) वज्र आदि (वज्र, अंकुश, ध्वजा और कमल) के चार सुंदर चिह्न हैं; चरणों में मधुर ध्वनि करने वाले नूपुर (घुंघरू) हैं; मणियों और रत्नों से जड़ी हुई सोने की बनी सुन्दर करधनी का शब्द सुहावना लग रहा है। ये सब मनोहारी ध्वनियां भी वातावरण को संगीतमय बना ही रही हैं। वाद्य – यंत्रों में मात्र दुंदुभी, बीन (वीणा), नूपुर (घुंघरू) आदि चंद वाद्यों की चर्चा तथा अप्सरा, गंधर्व और किन्नरों आदि के गायन का उल्लेख है।

कुल मिलाकर यदि देखा जाए तो मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम जी के अति मर्यादित चरित्र के लिए संगीत की अधिकता की कोई आवश्यकता भी नहीं थी।

सच तो यह है कि –

**रघुबंस भूषन चरित यह नर कहहिं सुनहिं जे गावहीं।**
**कलि मल मनोमल धोइ बिनु श्रम राम धाम सिधावहीं।।**

श्रीराम जी के परम् धाम प्राप्ति की अभिलाषा सभी सनातन धर्मावलंबियों की पूर्ण हो, ऐसी कामना के साथ ही आलेख को विराम देता हूं।

अन्त में कालजयी महाकाव्य श्रीरामचरितमानस और उसके रचनाकार कविकुल कमल दिवाकर गोस्वामी तुलसीदास जी के प्रति अपने भाव – प्रसून अर्पित करते हुए इतना ही कहना चाहूंगा कि –

**राम के चरित की स्वांतःसुखाय गाथा लिख,**
**जन-जन के हिय की हर बात कह गए तुलसी।**
**अवधी अरु ब्रज – भाषा कौ लैकै अवलंबन,**
**सब पुराणनिगमागम सार कह गए तुलसी।।**
**एक – एक चौपाई जन – जन गलहार बनी,**
**ऐसौ कछु जीवन कौ सार कह गए तुलसी।**
**हुलसी सुत तुलसी के मानस पर वारि जाउं,**
**जन – जन जीवन के उद्गार कह गए तुलसी।।**

लेखक-संगीतज्ञ/कवि/लेखक/संपादक, 'संगीत' पत्रिका
संस्थापक डॉ. राजेन्द्र कृष्ण संगीत महाविद्यालय एवं
शोध-संस्थान संगीत - सदन
महाविद्या कॉलोनी, फेज-2,मथुरा (उ.प्र.) 281 003
मो. 98972 47880 (व्हाट्सएप)

■

आलेख

# 'राम की अनकही व्यथा-कथा'

डॉ. कृष्णगोपाल मिश्र

बीसवीं शताब्दी की हिन्दी प्रबंध-काव्य-धारा में सीता के परित्याग पर आधारित महाकाव्यों, खंडकाव्यों और लंबी प्रबंध रचनाओं की समृद्ध परंपरा विकसित हुई है। इन रचनाओं में हरिऔध कृत 'वैदेही-वनवास', राजाराम शुक्ल कृत 'जानकी-जीवन', डॉ. रामकुमार वर्मा कृत 'उत्तरायण', नाथूलाल नम्र कृत 'वनस्थली', सोहनलाल रामरंग कृत 'उत्तरसाकेत', नागार्जुन कृत 'भूमिजा', रघुवीर शरण मित्र कृत 'भूमिजा', डॉ. चंद्रकांत वर्मा कृत 'सीता', राजदेव सिंह कौशल कृत 'सीतायन', नरेश मेहता कृत 'प्रवादपर्व', गोविंद अनिल कृत 'अयोध्या की एक शाम', उमाशंकर कृत 'सीता निर्वासन', रामस्वरुप टंडन कृत 'सीता-परित्याग' आदि प्रमुख हैं। इन प्रबन्ध-काव्यों में श्री राम के उत्तरचरित्र को रचनाकारों ने अपने-अपने विचारों के अनुरुप अंकित किया है। अधिकतर रचनाओं में उनके इस कार्य को लोकाराधन के लिए किए गए महान त्याग के रुप में प्रस्तुत किया गया है तो कुछ रचनाकारों ने इसे नारी पर हुए अत्याचार के रुप में अंकित किया है।

डॉ. शम्भूनाथ सिंह ने प्रबन्ध-काव्यों में चित्रित होने वाले नायक की अवधारणा पर अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है-''कवि, कलाकार और चिन्तक सदा से निर्दोष व्यक्तित्व की आदर्श के रूप में कल्पना करते आये हैं। अधिकतर महाकाव्यों में नायक ऐसे ही आदर्श व्यक्ति होते हैं, जो किसी उद्देश्य अथवा निष्ठा के निमित्त अपना सब कुछ बलिदान करने के लिए तत्पर रहते हैं।'' श्रीराम ऐसे ही नायक हैं। लोकाराधन के निमित्त उनके द्वारा सीता का त्याग ऐसे ही बलिदान की पराकाष्ठा है। उनका महनीय चरित्र अधिकतर प्रबन्ध-काव्यों में एक आदर्श राजा की भूमिका का सफल निर्वाह करता है। वे सीता-परित्याग के इतिवृत्त पर आधारित प्रबन्ध-काव्य रूपी मन्दिरों की पीठ पर आराध्यवत प्रतिष्ठित हैं।

समीक्ष्य-प्रबन्ध-काव्यों में राम के व्यक्तित्व के विविध-पक्ष प्रस्तुत हुए हैं। कभी वे नीति-ज्ञान-सम्पन्न, लोकरंजक आदर्श-नृपति के रूप में हमारे समक्ष प्रकट होते हैं, तो कभी असीम धैर्य से युक्त, अन्तर्द्वन्द-ग्रस्त, भावुक-हृदय, प्रणयी-पति के रूप में दृष्टिगत होते हैं। राम का व्यक्तित्व अत्यन्त आकर्षक है। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम प्रिय-दर्शन हैं. शील, सौजन्य व ज्ञान के आगार हैं, श्यामगात हैं, आजानुबाहु हैं और राजीव-नयन हैं। वे आत्मिक-सौन्दर्य के साथ-साथ दैहिक-सौन्दर्य से भी सम्पन्न हैं। उनमें मानसिक-विकास की ही पूर्णता लक्षित नहीं होती, अपितु शारीरिक सौन्दर्य का भी मंजुल-पर्यवसान उनमें उपलब्ध होता है। श्रीराम के नयनों का सौन्दर्य अद्वितीय है। राजा राम शुक्ल के अनुसार राम के नेत्र अत्यंत प्रभावशाली हैं-

**''नयन ये नयनागर राम के,**
**जननि के जन के हित में पगे।**
**शरद चन्द्र समानन-प्रान्त में,**
**चपल रंजन खंजन खेलते ।।''**

समीक्ष्य-प्रबन्ध-काव्यों में श्रीराम के रूप-गुण के निरूपण पर विशेषत: 'वाल्मीकि रामायण' का प्रभाव परिलक्षित होता है। जिस प्रकार वाल्मीकि के राम बड़े ही रूपवान, बली, ईर्ष्या द्वेष-रहित, मृदुभाषी, वाक्संयमी, जितेन्द्रिय, सत्यवक्ता, दया-सागर, पराक्रमी, शान्तचित्त, धर्मज्ञ, स्थिर-प्रज्ञ, कृतज्ञ और प्रजा-वत्सल हैं, उसी प्रकार 'वैदेही-वनवास' के राम भी सद्गुणों के रत्नाकर हैं, मृदुभाषी हैं और कटुता पर भी मृदुता से विजय पाने वाले हैं। वे धर्म-धुरंधर, लोकोत्तर-लोकाराधक, सदाचार-केतु और सत्य-व्रत सेतु हैं-

**''धर्म धुरंधरता है ध्रुव जैसी अटल ।**
**सदाचार सत्यव्रत के वे सेतु हैं।।**
**लोकोत्तर है उनकी लोकाराधना ।**
**उड़ते उनकी कलित-कीर्ति के केतु हैं।।''**

राम के व्यक्तित्व का निरूपण अधिकतर रचनाकारों ने संस्कृत-साहित्य में वर्णित उनके स्वरूप के आधार पर किया है। यद्यपि अधिकतर रचनाओं में राम की प्रतिष्ठा विष्णु के अवतार के रूप में न होकर मानवीय-धरातल पर हुई है, तथापि ''सीता परित्याग'' में टंडन जी ने उन्हें अवतार के रूप में स्वीकार कर आधार-ग्रन्थों में प्राप्त परम्परागत स्वरूप प्रदान किया है। वे राम को भू-भार-हरणार्थ और धर्म-संस्थापनार्थ अवतरित अलख अगोचर पूर्ण-ब्रह्म के रूप में ही स्वीकार करते हैं-

**''उस असुर दल का नाश कर भू-भार हरने के लिए।**
**अथवा कि सुर-नर-मुनि जनों का कार्य करने के लिए ।।**
**वह पूर्ण ब्रह्म अलख अगोचर मनुज का अवतार ले।**
**साकेत पुरवासी बना भवतरणि की पतवार ले ।।''**

वर्तमान युग के बौद्धिक परिवेश में अवतारवाद जैसी धारणा के लिए कोई स्थान नहीं है, अत: निरूप्य-प्रबन्ध-काव्यों में राम की प्रतिष्ठा आदर्श महापुरुष के रूप में की गयी है, अवतार के रूप में नहीं। उनमें आदर्श मानव के गुणों का चूडान्त निदर्शन है तथा उनका चरित्र आदर्श आर्य-चरित्र है, जिसमें मानवता की चरम अभिव्यक्ति निहित है।

डॉ. बलदेव उपाध्याय के अनुसार- ''राष्ट्र का केन्द्र है राजा । भारतीय राजा पाश्चात्य राजाओं के समान प्रजाओं की इच्छाओं का दमन करने वाला स्वेच्छाचारी नरपति नहीं होता, प्रत्युत वह प्रजाओं का रक्षक, प्रकृति-रंजक, उनका हित-चिन्तक तथा राष्ट्र का उन्नायक होता है।'' राम इसी आदर्श राजा के प्रतीक हैं। आदर्श राजा में जो गुण अपेक्षित हैं, श्रीराम उन समस्त गुणों के साक्षात् विग्रह हैं। लोकाराधन उनकी राजनीति का चरम उद्देश्य है। अनेक प्रबन्ध-काव्यों में उनका यह स्वरूप अंकित हुआ है। डॉ. चंद्रकांत वर्मा ने सीता-त्याग के अवसर पर उनके अंतर्द्वन्द्व को इस प्रकार अंकित किया है-

**''आत्माहुति हो सिद्धि न फिर पीछे हटूं**
**घटे बढ़े शशिकला, बढ़ूं मैं, क्यों घटूं ?**
**रामराज्य की नींव सदा चिर नेम की**
**चिंता मुझको एक प्रजा के क्षेम की ।''**

उमाशंकर नगायच के राम का जीवन प्रजा-हित के लिए अर्पित है-

**''नृप का निज का कोई अस्तित्व नहीं होता**
**वह समाविष्ट जनता के जीवन में सदैव ।**
**जनता के सुख-दुःख में रहता उसका सुख-दुःख**
**जनता के हित जीता है, उसके हित मरता ।।''**

'परित्यक्ता' खंडकाव्य में महेश सक्सेना के राम भी यही संकल्प व्यक्त करते हैं-

**''बन्धु ! राजेश्वर बनाया है मुझे तो**
**शेष जीवन राज्य को अर्पण करूंगा।**
**आर्य-संस्कृति पर न कोई आंच आये**
**हव्य दे, इतिहास का तर्पण करूंगा ।।''**

नागार्जुन के राम की प्रतिज्ञा है कि वे नारी सम्मान के लिए समर्पित रहेंगे-

**''नहीं करूंगा सपने में भी, अम्ब !**
**क्रय-क्रीत दासी का भी अपमान।''**

वस्तुतः राम का लोकाराधक स्वरूप लोक में सर्वथा प्रशंसनीय है।''उत्तररामचरितम्'' में श्रीराम लोकाराधन के लिए सर्वस्व त्यागने को भी तत्पर हैं-

**''स्नेह दयां च सौख्यं च अथवा जानकीमपि**
**आराधनाय लोकस्य मुंचतोनास्ति मे व्यथा ।''**

श्रीराम का यही लोकाराधक स्वरूप ''जानकी-जीवन'' में प्रस्तुत हुआ है-

**''याचना, प्यारी प्रजा की याचना,**
**जानकी की, या कि मेरी जान की।**
**राम निःसंकोच सौंपेगा सभी,**
**प्राप्त होगा हा ! न जाने क्या उन्हें।।''**

डॉ. मुकुन्द देव शर्मा ने राम के प्रजारंजक स्वरूप के विषय में लिखा है- ''राम के जीवन का चरम उद्देश्य लोक-रंजन है। वे लोकरक्षा के पक्षपाती हैं। वे व्यर्थ के रक्तपात में विश्वास नहीं करते, परन्तु अति अहिंसावादी भी नहीं हैं। वे दुष्टों का दमन आवश्यक समझते हैं। वे राजनीति में दुष्टों की उपेक्षा को हानिकारक समझते हैं।'' वस्तुतः राम महान् नीतिज्ञ हैं। सामनीति उन्हें अतिप्रिय है। अतः वे अधिक लाभ के लिए अल्प क्षति सहन करने को तत्पर हैं। देशहित, जो जनहित का ही प्रतिरूप है, उनके लिए सर्वोपरि है। 'वैदेही-वनवास' में उनका यही रुप प्रकट होता है-

**''जहाँ लाभप्रद अंश अधिक पाया जाता है।**
**थोड़ी क्षति का ध्यान वहाँ कब हो पाता है ।।**
**जहाँ देश-हित प्रश्न सामने आ जाता है।**
**लाखों शिर अर्पित हो कटता दिखलाता है।।**

समीक्ष्य-काव्य-कृतियों के राम कल्पना-जीवी नहीं हैं। वे वास्तविकता की भूमि पर विहार करने वाले हैं। उनके दृगों में मांगल्यमयी-मंजुल-काल्पनिक व्यवस्थाओं के स्वप्न अवश्य हैं, किन्तु उनके पग यथार्थ की कठोर भूमि पर टिके हैं। उनकी राजनीति का आधार सामनीति है। दाम, दण्ड और भेद की नीति पर उनकी निष्ठा नहीं है। वे त्याग द्वारा प्रजा की प्रीति पाने में विश्वास रखते हैं-

**''दमन है मुझे कदापि न इष्ट ।**
**क्योंकि वह है भयमूलक-नीति।।**
**चाह है लाभ करूं कर त्याग।**
**प्रजा की सच्ची प्रीति-प्रतीति ।।''**

श्रीराम का यह नीतिज्ञ स्वरूप ''वैदेही-वनवास'' में अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँचा है। प्रजा की इच्छा का पालन करना वे अपना धर्म और कर्त्व्य मानते हैं तथा इसी धर्म-पालन की वेदिका पर अपने दाम्पत्य-सुख का बलिदान कर देते हैं। समीक्ष्य-प्रबन्ध-काव्यों में राम का रूप ऐसे आदर्श नृप के रूप में अंकित है, जो अपनी प्रजा की इच्छा पर अपनी प्रिया का त्याग करता है, समष्टि के हित के लिए व्यष्टि के सुखों की बलि देता है, कर्तव्य की वेदी पर दाम्पत्य का दिव्य-प्रेम न्यौछावर करता है और राज-पद की मर्यादा के निर्वाह हेतु अपने व्यक्तिगत जीवन के सुखों का उत्सर्ग कर देता है।

यद्यपि अधिकतर रचनाकारों ने राम द्वारा सीता के त्याग को उनके दायित्व का निर्वाह मानते हुए प्रशंसनीय बताया है, तथापि रचनाकारों का एक वर्ग ऐसा भी है, जो राम द्वारा सीता के त्याग का कारण, उनका सत्ता के प्रति प्रबल मोह बताता है। कविवर राजदेव सिंह कौशल और छोटेलाल भारद्वाज ने अपनी रचनाओं में यह तथ्य निरूपित किया है। कौशल जी का मत है-''उन्होंने गंवारों के मूढ़ मत को मर्यादा का मापदण्ड मान लिया था। वे स्वयं उन अपवाद सर्जकों से डर गये कि कहीं जनमत उन्हें सत्ताच्युत न कर दे और सत्ता उन्हें प्रिय रही हो।'' कविवर छोटेलाल भारद्वाज की सीता का मत है कि राम ने सत्ता के मोह में पड़कर हृदय बेच दिया है और अपनी स्वार्थपरता को लोकाराधन की संज्ञा दी है-

**''मुझे दु:ख मेरे पराक्रमी पति की दीन दशा पर**
**हृदय बेचना पड़ा जिसे सत्ता के घर में जाकर।**
**और व्यथा उससे भी गहरी उस प्रवंचना-स्वर पर**
**लिप्सा आई छद्म-वेष जब लोक-वृत्ति का धर कर।।''**

इन कवियों का यह भी तर्क है कि जिस प्रकार सीता राम के साथ वन गयी थीं उसी प्रकार राम को भी सीता के साथ वन चला जाना चाहिए था। यदि राम के सम्पूर्ण जीवन-वृत्त पर दृष्टि डाली जाये तो यह स्वत: सिद्ध हो जाता है कि उन्हें राज्य का मोह कभी नहीं रहा। यदि वे सीता के साथ वन जाते तो यह निश्चय ही कर्तव्य से पलायन होता।

इस संदर्भ में सर्वाधिक विचारणीय है राम की वह आन्तरिक व्यथा जो सीता-निष्कासन के पश्चात् उन्होंने सहन की है। राम का जीवन सीता के त्याग के पश्चात् इतना अधिक एकाकी व नीरस रहा है कि उसमें सत्ता-सुख-भोग के लिए कोई स्थान नहीं है। वस्तुत: सीता का निर्वासन राम के स्वयं के समस्त सुखों का निर्वासन है। किसी राजा द्वारा लोकाराधनार्थ कृत ऐसा त्याग इतिहास में अन्यत्र अप्राप्य है। भगवती सीता के निर्वासन के पश्चात् राम का जो स्वरूप प्रबन्ध-काव्यकारों ने चित्रित किया है, वह एक ऐसे भावुक कोमल-हृदय पति का है, जो निरन्तर अपनी पली की मर्म-व्यथा से व्यथित है। अयोध्या की नभचुम्बी, मणिजटित अट्टालिकाओं के वासी राम की मनोव्यथा तपोवन-वासिनी सीता की व्यथा से रंचमात्र भी कम नहीं है। वे सुखों के कंटक-शयन पर विकल हैं। उनकी व्यथा-कथा अकथनीय है। महाकवि सोहनलाल रामरंग ने स्वयं राम के शब्दों में उनकी पीड़ा इस प्रकार अंकित की है-

**''पड़ा स्वांस बेड़ी पहिन राम बंदी,**
**खुला राज्य का दंड शिर खेलता है।**
**महाराज-राजा जिसे सब समझते,**
**न क्या यातना राम वह झेलता है ।।**
**कलेजा किसे चीर अपना दिखाऊँ**
**भरे हैं हरे घाव कितने गिनाऊँ**
**ध्वजा धर्म की सीय, कमनीय सी तिय,**
**तजी हेतु किसके, किसे हा ! बताऊँ! ''**

'जानकी-जीवन' में राम सीता के त्याग के पश्चात् एकाकी क्षणों में मूक रूदन करते हैं-

**''सो जाता जग शान्ति गोद में मोद से,**
**रो लेते घनश्याम राम एकान्त में ।**
**विद्युद्दाम समान वेदना बेधती,**
**हा-हा कार अपार गर्जना-तर्जना।।''**

डॉ. माया शबनम कृत 'अपराजिता सीता' प्रबंध-काव्य में श्री राम आदर्श लोकाराधक का यश पाकर भी दुखी हैं और अपने जीवन को धिक्कारते हुए लक्ष्मण से कहते हैं-

**''धिक् इस जीवन को प्रिय भ्राता !**
**संसार भले हो यश गाता।''**

राम के प्रेमी-पति रूप की सर्वोत्तम अभिव्यक्ति ''सीता-परित्याग'' में हुई है। सीता की भावी विपद् का अनुमान कर उनका शान्त हृदय-सागर शोक की उर्मियों से उद्वेलित हो उठता है और वे एक प्रणयी-पति के समान आर्त होकर विलाप कर उठते हैं-

**''हा कंज-नयने, चारू-वदने, हाय ! मम-प्राणेश्वरी !**
**रम्भोरुतन्वंगे प्रिये ! हा ! शशि-मुखे ! हृदयेश्वरी !**
**कोमल कली चुभती तुझे, कंटक झिले कैसे भला ?**
**हा! हँसिनी से जाय कैसे रवि प्रखरता में जला ?**

राजा के साथ-साथ उनमें आदर्श-पति का स्वरूप भी प्राप्त होता है। राजा के रूप में दायित्व की मर्यादाओं में आबद्ध यह भावुक प्रणयी-पति अपनी पत्नी के प्रति पूर्णत: विश्वासयुक्त और निष्ठावान है। बाह्य-रूप से उसका त्याग करके भी वह आन्तरिक-रूप से सतत उसके साथ है। राम के इस चारित्रिक वैशिष्ट्य को रेखांकित करते हुए 'वनस्थली' महाकाव्य में कवि ने लिखा है-

**''माना कि अवध से चली गयीं,**
**निश्चय ही मुझसे छली गयीं।**
**सम्बन्ध किन्तु है घटा नहीं,**
**अर्धांग किसी से हटा नहीं।।**
**अधिकार तुम्हारा संग प्रिये !**
**कह रहा तुम्हारा अंग प्रिये।।''**

अश्वमेघ यज्ञ के सम्यक् सम्पादनार्थ प्रतिष्ठित सीता की हिरण्यमयी प्रतिकृति राम के एक पत्नीव्रत और दिव्य-दाम्पत्य प्रेम का प्रबल प्रमाण है। राम के चरित्र में निरूपित उनका राजा और पति का स्वरूप उनके चरित्र का बाह्य कमनीय कलेवर है, किन्तु उसका प्राण-तत्त्व है- इन दोनों का अन्त:संघर्ष। लोकाराधक आदर्श नृप राम और एक पत्नीव्रतधारी आदर्श-प्रणयी-पति राम के मध्य छिड़े अन्त:संघर्ष की मार्मिक अभिव्यक्ति इन प्रबन्ध-काव्यों में पग-पग पर हुई है। कर्तव्य और प्रेम का यह द्वन्द राम के चरित्रदीप का वह दिव्यालोक है, जिसकी प्रभा से निरूप्य-प्रबन्ध-काव्यों की कथावस्तु आलोकित हो उठी है।

राम के एक ओर पत्नी के प्रति प्रेम का प्रबल आकर्षण है और दूसरी ओर धर्मपालन की सुदृढ़ श्रृंखलायें उनके चरणों को जकड़े हैं। दायित्व निर्वहण की कठोर-बेड़ियों में जकड़े राम के चरण दिव्य-दाम्पत्य प्रेम के सुखसज्जित शिखर पर चढ़ने में असमर्थ हैं। संघर्ष की इन विषादमयी घड़ियों में राम किंकर्तव्यविमूढ़ हो उठते हैं। 'सीता-परित्याग' की निम्नांकित पंक्तियाँ इस तथ्य की साक्षी हैं-

**''हा ! प्रेम खींच रहा इधर, उस ओर खींचे धर्म है।**
**यह देह भी तो हे प्रभो ! रक्तास्थि-संयुत चर्म है।।**
**किसकी सुनूँ, क्या-क्या करूँ किसको तजूँ किसको धरूँ ?**

**सदमार्ग का कर्तव्य क्या, किस भाँति मैं निर्णय करूँ ।।"**

''सीता'' महाकाव्य में राम का यह अन्त:संघर्ष कविवर डॉ. चंद्रकांत वर्मा ने उनके हाव-भाव से व्यक्त किया है-

**''राम शयन से उठे, बैठ, फिर उठ गये,**
**उन्हें लगे क्षण जीवन के बिल्कुल नये ।**
**एक विकलता थी जो उनमें व्याप्त थी,**
**असमय में ही सुख की कथा समाप्त थी।।''**

इस अन्त:संघर्ष के अन्त में राम का सरल कोमल पति रूप कर्तव्य के गुरुतर पाषाण तले पिस जाता है और वे इसे नियति का विधान मानकर सीता का त्याग कर देते हैं। निरूप्य प्रबन्ध-काव्यों में राम की अन्य चारित्रिक-विशेषतायें भी परिलक्षित होती हैं। उदाहरण के लिए ''वनस्थली'' के राम पक्षपात-हीन न्यायी-नृप हैं। अपराधी के लिए क्षमादान की व्यवस्था उनके शासन में नहीं है। सतत-सेवारत लक्ष्मण को भी वे राजाज्ञा का उल्लंघन करने पर सरयू में जल-समाधि लेने का कठोर दण्ड दे देते हैं-

**''मेरे सम्मुख पल मत ठहरो**
**सरयू में प्रायश्चित करो।''**

''वैदेही-वनवास'', ''जानकी-जीवन'' और ''उत्तर-साकेत'' के राम पतितोद्धारक हैं। वे शम्बूक को यथोचित गति देकर व्यवस्था और भक्ति-भाव दोनों का ही यथेष्ट सत्कार करते हैं। नागार्जुन जी की 'भूमिजा' के राम अपने हाथों से अहल्या की सेवा कर उसे नवजीवन प्रदान करते हैं। 'सीता-परित्याग' में राम का कुशल व्यवस्थापक के रूप में चित्रण हुआ है। अश्वमेघ यज्ञ के आयोजक राम स्वजनों, सुहृदों और महर्षियों के निमन्त्रण से लेकर यज्ञ की छोटी-छोटी व्यवस्थाओं तक के निर्देश स्वयं देते हैं।

नारी के प्रति सम्वेदनात्मक भावों के अतिरेक में अनेक प्रबन्धकारों ने राम के लोकाराधक स्वरूप की उपेक्षा कर उनके चरित्र को दुर्बलताओं से अतिरंजित किया है। रघुवीर शरण मित्र ने अपनी रचना 'भूमिजा' में उनके द्वारा आयोजित अश्वमेघ यज्ञ का अनुष्ठान प्रजातंत्र पर राजतंत्र के आक्रमण के रूप में दर्शाया है और राम को आक्रान्ता के रूप में प्रस्तुत किया है-

**''एक छत्र राजा बनने को रामचंद्र हुंकारे।**
**प्रजातंत्र पर राजतंत्र के फणिधारी फुंकारे ।।''**

कवि ने शासन-सम्मत भारतीय-संस्कृति के एकता-प्रयास-मूलक यज्ञ-विधान को साम्राज्यवादी-नीति का पर्याय मानकर और राम द्वारा महर्षि-आश्रम पर आक्रमण दर्शाकर तत्कालीन संस्कृति के प्रतिकूल चित्रण किया है और सीता के चरित्र को अधिक उभारने के लिए राम के आदर्श-कृत्य पर व्यर्थ ही पंक-प्रक्षेपण किया है। राजदेव सिंह कौशल ने 'सीतायन' में राम को सत्ता का लोलुप दर्शाया है और यही सीता के निर्वासन का हेतु निरूपित किया है। यह कवि की मौलिक सूझ है, जो तर्क के निकष पर खरी सिद्ध नहीं होती। कवि ने राम के भावुक-प्रणयी पति रूप की उपेक्षा करके उनके प्रति भारी अन्याय किया है। सीता के त्याग का एकमात्र हेतु लोकाराधन है, जो राम के द्वारा अपने राजपद की मर्यादा के निर्वाह और कुल-प्रतिष्ठा की रक्षा के निमित्त किया गया है। सीता के विरह की चटखती धूप में हिमखण्ड-सा बिन्दु-बिन्दु होकर गलता राम का व्यक्तित्व इसका साक्षी है। निर्दोष और पतिव्रता होने पर भी परित्यक्ता सीता के प्रति सबको सहानुभूति होना स्वाभाविक ही है, किन्तु इस सन्दर्भ में नि:सन्देह राम भी दया के पात्र हैं। उनकी मूक अन्तर्व्यथा अनकही कथा बनकर रह गयी है। अयोध्या के स्फटिक-सौध-शिखरों के मध्य राजपद की श्रृंखलाओं में जकड़े बंदी-सृदश विवश सीता-वियुक्त श्रीराम का एकाकी-जीवन पीड़ा की वह अलिखित कथा है, जिसे अयोध्या से लेकर ऋषि आश्रम तक किसी ने नहीं पढ़ा है। राम की पीड़ा का भार सीता की व्यथा से किसी प्रकार भी कम गुरुतर नहीं है। वनवासिनी सीता तपोवन में अपने शोक को प्रकट करने के लिए स्वतंत्र हैं, किन्तु राजा की मर्यादा से बँधे राम तो कराह भी नहीं सकते । सीता की तरह वे भी निर्दोष हैं, तथापि विरहातप में झुलसते हुए जलहीन जलाशय के शोभाहीन जलज के समान संतप्त होते हैं। सीता के विरह में घुट-घुट कर जीना, अश्रुओं के प्रबल-प्रवाह को नयनों के द्वार तक न आने देना, अन्तरतम के कोमल-भावों का कठोरतापूर्वक दमन कर शान्त-रूप में स्थिर रहना और राज-मर्यादा का पालन करना ही उनकी नियति है। अवध-पति राम और सीता-पति राम -- इन दोनों रूपों में उनकी समीक्षा किये बिना ही उन्हें सत्ता लोलुप, आक्रान्ता अथवा जनभीरू कह देना नितान्त अनुचित और सारहीन है। वे दोनों ही रूपों में स्तुत्य हैं। उनकी लोकाराधना अद्वितीय है । उनका त्याग वन्दनीय है। उनका एक पत्नी-व्रत सराहनीय है। उनका दिव्य दाम्पत्य-प्रेम सर्वथा श्लाघनीय है। वे मर्यादा पुरुषोत्तम हैं। अतएव उनके पवित्र-चरित्र में आदर्श-प्रजापालक राजा और आदर्श-प्रेमी-पति की मर्यादाओं का सुन्दर समन्वय हुआ है। उनका तप: पूत दिव्य-चरित्र आर्य-मानव के समुत्कर्ष का चूडान्त-निदर्शन और भारतीय पुरुष के आचरण का सनातन-श्रृंगार है। ''वैदेही वनवास'' की सीता के शब्दों में वे लोक के सर्वस्व, दिव्य-भूतियों के अद्भुत-आगार और वसुधा-तल के अनुपम श्रृंगार हैं-

**''तुम लोगों के पिता लोक-सर्वस्व हैं।**
**दिव्य-भूतियों के अद्भुत आगार हैं ।।**
**हैं रविकुल के रवि सम, वे हैं दिव्यतम।**
**वे वसुधातल के अनुपम श्रृंगार हैं ।।'**

निरूप्य-प्रबन्ध-काव्यों में उनके इसी दिव्य स्वरूप के दर्शन होते हैं। इसीलिए वे भारतीय सनातन परंपरा के आदर्श प्रजापालक नरेश और एक पत्नीव्रत के निर्वाहक आदर्श पति हैं। उनके त्याग पर पंक-प्रक्षेपण भारतीय संस्कृति पर अविचारित एवं अविवेकपूर्ण आक्षेप है जिसका प्रत्येक स्तर पर निरसन अपेक्षित है।

■

आलेख

# श्रीराम का जीवन आदर्श : वर्तमान समय में प्रासंगिक

डॉ. सरोज गुप्ता

**श्रीरामः शरणं समस्तजगतां, रामः बिना का गती। रामेण प्रतिहन्यते कलिमलं, रामाय कार्य नमः ।।**
**रामात् त्रस्यति कालभीमभुजगो, रामस्य सर्व वशे। रामे भक्तिरखण्डिता भवतु में, राम त्वमेवाश्रयः।।**
**चित्रकूटालयं राममिन्दिरानन्दमन्दिरम्। वन्दे व परमानन्दं भक्तानामभयप्रदम् ।।**
**ब्रहाविष्णुमहेशाद्या यस्यांशा लोकसाधकाः। नमामि देवं चिद्रूपं विशुद्धं परमं भजे ।।**

श्रीरामचन्द्रजी समस्त संसार को अपनी शरण देते हैं ऐसे श्रीराम के बिना दूसरा कौन है जो कलियुग के समस्त दोषों को नष्ट कर सके। श्रीराम से कालरूपी भयंकर सर्प भी डरता है। सम्पूर्ण संसार श्रीराम के वश में है। श्रीराम में मेरी अखण्ड भक्ति बनी रहे। श्रीराम सबके जगत आधार बने रहें। चित्रकूट में निवास करने वाले, भगवती लक्ष्मी (सीता) के आनन्दनिकेतन और भक्तों को अभय देने वाले परमानन्द स्वरूप भगवान् श्रीरामचन्द्रजी को कोटि-कोटि नमन् है। ब्रह्मा, विष्णु और महेश आदि देवता जिनके अभिन्न अंश मात्र है, ऐसे परम सचिदानन्द परमात्मदेव श्रीरामचन्द्रजी को कोटिशः नमन् ।

भारत देश में ज्ञान की भव्य व शाश्वत परम्परा प्राचीन काल से विद्यमान है। इस परम्परा को अक्षुण्ण बनाने का श्रेय हमारे देश के महापुरूषों, गुरूओं, आचार्यों को जाता है, जिनकी पारदर्शी दृष्टि गहनतम अन्धकार और दुर्लभ्य बाधाओं पर विजय प्राप्त कर मानव को विकास का ऐसा जगमगाता प्रवेश ज्योति द्वार प्रदान करती है, जिससे व्यक्ति का जीवन सार्थक एवं स्पृहणीय बन जाता है। साहित्य जगत के इतिहास में महर्षि वाल्मिकी एवं गोस्वामी तुलसीदास जी ने श्रीराम को ऐसे ही महामानव के रूप में प्रस्तुत किया है जिन्होंने अपने समय को सबसे अधिक प्रभावी बनाकर मानव जीवन में जनमानस को प्रेरित किया। मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम के सद्गुण, आदर्श व उन्नत चरित्र को आधार बनाकर प्रेम, संघर्ष और आत्मबल को प्रतिष्ठित किया। रामायण एवं रामचरित मानस को सामाजिक, नैतिक एवं शैक्षणिक उत्थान की आधारशिला बनाया। वर्तमान समय में रामचरित मानस देश के हर घर में पूजा जाने वाला ऐसा ग्रन्थ है जिसकी चौपाइयों, दोहे, कवित्त लोगों की नस-नस में दौड़ती है, तृप्ति प्रदान करती हैं, मार्गदर्शन देती हैं।

रामचरित मानस शिक्षा एवं चरित्र निर्माण का ऐसा दस्तावेज है जिसमें 'वसुधैव कुटुम्बकम्' एवं 'सर्वे भवन्तु सुखिनः का मूलमंत्र कूट कूट कर भरा है। रामचरित मानस गंगा के समान पावन व सबका हित करने वाला है। इसकी रचना का उद्देश्य गोस्वामी तुलसीदास जी बतलाते हैं –

**स्वान्त सुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा, भाषा निबन्ध मति मंजुल माप्नोति।**
**एवं**
**मंगल करनि कलि मल हरनि, तुलसी कथा रघुनाथ की।**

यह रामकथा कलयुग के पाप-ताप संताप को हरने वाली है। जन जन के लिए उपयोगी है। ऐसी आचार संहिता है जो जीवन जीना सिखाती है। विश्व की समस्त समस्याओं का समाधान इस अद्भुत रचना में है। यह ग्रन्थ एक साथ धर्मशास्त्र, नीतिशास्त्र, समाजशास्त्र, दर्शनशास्त्र, राजनीति, साहित्य और महाकाव्य तो है ही, जीवन की विविध भावनाओं का मनोविज्ञान भी है।

गोस्वामी तुलसीदास जी ऐसे स्वस्थ, समुन्नत, संस्कारशील समाज की रचना करना चाहते थे, जहाँ कोई दुखी व दरिद्र न हो. सभी सुखी हों। जहाँ गुणवान, पंडित, ज्ञानी, कृतज्ञ तथा श्रेष्ठ आचरण वाले व्यक्ति हो, क्योंकि चरित्रवान व्यक्ति ही महान बन सकता है। व्यक्ति की महानता का रहस्य उसके चरित्र बल में निहित है। एक प्रसिद्ध उक्ति है- ''धन गया, कुछ नहीं गया। स्वास्थ्य गया, कुछ गया। यदि चरित्र चला गया तो सब कुछ चला गया। चरित्रवान व्यक्ति साधनहीन होने पर भी सफलता के शिखर को प्राप्त करता है और दुश्चरित्र व्यक्ति सर्व साधन सम्पन्न होने पर भी सर्वनाश को आमंत्रित करता है। रामचरित मानस में वर्णित दो पात्र-राम और रावण इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं। राम-रावण युद्ध के दौरान विभाषण ने देखा कि मेरा भाई रावण आजन्म परद्रोही, दुराचारी, अत्याचारी युद्ध हेतु अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित हो, सोने के रथ पर आरूढ हो आ रहा है। दूसरी ओर श्री रामचन्द्र जी सदाचारी, सत्यव्रती, धर्मचारी, दीनबन्धु जिनके पास न रथ हैन सिर पर वस्त्र है और न ही पैरों में पनैया है। यह कैसा विराधानास है ? ऐसी विषम स्थिति में विभीषण को थोड़ा सन्देह हुआ कि श्री राम युद्ध कैसे जीत सकेंगे ? उन्होंने श्रीरामचन्द्र जी से पूछ ही लिया कि –

**नाथ न रथ न हि तन पद त्राना**
**केहि विधि जितव, वीर बलवाना।**

विभीषण की शंका का समाधान करते हुए श्री राम ने कहा कि विभीषण भौतिक वस्तुओं का संग्रह साधन नहीं होता, यदि मनुष्य के पास धर्म रूपी रथ है तो वह अवश्य ही विजयी होता है। इस धर्म रथ के 24

लक्षण या गुण है। व्यक्ति यदि इन चौबीस गुणों को अपने जीवन में उतार ले तो उसे कभी पराजय का सामना नहीं करना पड़ेगा। धर्म रथ के रूपक के माध्यम से श्री राम ने श्रेष्ठ मानव के चौबीस गुणों का निरूपण किया जिनको धारण करने वाला उदान्त चरित्र, उन्नत व्यक्तित्व वाला सदैव विजयी होता है। श्रीराम के शब्दों में देखिये –

**सौरज धीरज तेहि रथ चाका, सत्यशील दृढ ध्वजा पताका।**
**बल विवेक, दम परहित घोरे क्षमा, कृपा समता रजु जोरे।**
**ईश भजन सारथी सुजाना, विरति चर्म सन्तोष कृपाना।**
**दान परसु बुद्धि शक्ति प्रचण्डा, वर विज्ञान कठिन को दंडा।**
**अमल अचल मन ज्ञान समाना, सम जम नियम सिलीमुख नाना।**
**कवच अभेद विप्र गुरु पूजा, एहि सम विजय उपाय न दूजा।**

अर्थात – शौर्य और धैर्य इस धर्म रथ के पहिये हैं। सत्यशील की ध्वजा, पताका है जो सुरक्षा व विजय का चिह्न है। रथ के चार घोड़े बल, विवेक, इन्द्रिय दमन, परोपकार है। चारों घोड़ों की लगाम क्षमा, कृपा और समता की है। धर्म स्थ का सुजान सारथी ईश्वर भक्त है। अब जब जीवन का धर्म रथ विजय रथ है तो युद्ध के उपकरण भी आवश्यक है। काम रूपी शत्रु के दमन के लिए वैराग्य की ढाल तथा सन्तोष की तलवार चाहिए। लोभ को काटने के लिए बुद्धि रूपी प्रचण्ड शक्ति आवश्यक है। मोह रूपी अन्धकार के नाश के लिए वर– विज्ञान अर्थात् आत्मज्ञान रूपी धनुष तथा यम और नियम रूपी बाण जो मोह रूपी दश मौलि दस सिर वाले रावण पर विजय प्राप्त कर ले। अंहकार रहित दृढ सकल्प वान मन जो ब्राह्मण गुरू के चरणों का आश्रय पाता हो । ऐसा मनुष्य स्वयं के अन्दर बाहर के शत्रुओं का विनाश कर सकता है।

जिस मनुष्य के पास सदाचरण का ऐसा दृढ धर्म रथ है वही महा अजय संसार रूपी शत्रु पर विजय प्राप्त कर सकता है। रामचन्द्र जी विभीषण से कहते हैं। कि–

**महा अजय संसार रिपु, जीत सकै सो वीर।**
**जाके अस रथ होई दृढ सुनहु सखा मतिधीर।।**

**अर्थात** – इन चौबीस गुणों से सम्पन्न व्यक्ति को सृष्टि बदलने की आवश्यकता नहीं रहती. उसकी दृष्टि ही बदल जाती है। वह विश्व बन्धुत्व की उच्चतम अवस्था पर पहुँच जाता है। सर्वे भवन्तु सुखिन: तथा सियाराम मय सब जग जानी के भाव, समत्व बुद्धि. निर्वर स्थिति, अहिंसा की ऐसी उत्कृष्ट भावना, समदृष्टि होना मोहादि विकारों से रहित होकर मानवता के सम्पूर्ण विकास को प्राप्त कर सकता है। भारत देश के प्रत्येक व्यक्ति को रामचरित मानस पढ़ना चाहिए, चिन्तन, मनन करना चाहिए। इस विशाल देश के पास ऐसी विराट संस्कृति है जिसमें ज्ञान के विभिन्न विचारों का, भाव की विविध अनुभूतियों का और कर्म के अनेक कर्तव्यों का समन्वयात्मक स्वरूप विद्यमान है। इन्हीं भावों का समर्थन महादेवी वर्मा के शब्दों में 'संकीर्णता और अनुदारता को दूर रखने की परम्परा हमारी शिक्षा की आधार शिला रही है। आज भी हमारी शिक्षा का उद्देश्य अपने आपको सांस्कृतिक दृष्टि से अधिक स्वस्थ और पूर्ण मनुष्य बनाना होना चाहिए क्योंकि उसके अभाव में हम अपनी युग व्यापी विषमता से संघर्ष करने में असमर्थ रहेंगे। वर्तमान समय विसंगतियों से ओतप्रोत है यदि विद्यार्थी अपने परिश्रम से इस विकलांग संसार को सुन्दर रूप दे जावे तो ऐसे कठिन युग में उत्पन्न होना वरदान है। हमें देवदारू के वृक्ष बनना होगा जिनकी जड़ें पर्वत के कठिन नीरस पत्थरों से संघर्ष करके अपनी स्थिति बनाये रखती है जिनका मस्तक अताप और हिमताप झंझा और बज्रघात सब कुछ सहकर भी मुक्त आकाश में उन्नत रहता है। प्रकृति के ये जीवन्त उदाहरण हमें सत्कर्मों की प्रेरणा देते हैं। श्री रामजी महामानव पुरुषोत्तम हैं। विषमता और विसंगतियों के बीच रहकर उन्होंने बल, विवेक, शील, सौन्दर्य व उदारता का परिचय दिया। वे एक आदर्श पुत्र, शिष्य, बन्धु, मित्र व स्वामी है जिनके चरण चिन्हों पर चलकर मानव चरित्रवान व स्पृहणीय बन सकता है। वास्तव में रामायण व रामचरितमानस सामाजिक, नैतिक व शैक्षणिक उत्थान का सशक्त दस्तावेज है साथ ही श्रीराम का जीवन वर्तमान समय में प्रासंगिक भी है।

लेखिका वरिष्ठ साहित्यकार, अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
पं. दीनदयाल उपाध्याय शासकीय कला एवं
वाणिज्य महाविद्यालय, सागर

## कला समय का बैंक खाता विवरण

| | | | |
|---|---|---|---|
| 1. | **खाता का नाम** | : | कला समय |
| 2. | **खाता संख्या** | : | 09321011000775 (चालू खाता) |
| 3. | **बैंक शाखा** | : | पंजाब नैशनल बैंक की शाखा अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.) |
| 4. | **आईएफएस कोड** | : | PUNB0093210 |

**प्रबंध संपादक**

**आपका बहुमूल्य आर्थिक सहयोग पत्रिका के लिए संजीवनी होगा।**

उपन्यास - अंश

# राम वन प्रवास

अश्विनी कुमार दुबे

यह तय हो चुका था कि राम को चौदह वर्षों के लिए अयोध्या छोड़कर वनवास करना है। राम, पिता दशरथ एवं माता कैकेयी से वन जाने की अनुमति ले चुके थे। वे माता कौशल्या से भी अनुमति प्राप्त कर चुके थे। माता कौशल्या ने उन्हें वन जाने की बात पर भारी मन से कहा था, ''राम, मुझे विश्वास है कि तुम चौदह वर्ष हर्षपूर्वक वन में पूरे करके अयोध्या लौट आओगे परंतु मुझे अपने आप पर विश्वास नहीं है कि तुम्हारे वियोग को सहते हुए मैं इतने वर्ष जीवित रह पाऊंगी और अयोध्या लौटने पर तुम्हारा श्रीमुख देख पाऊंगी?'' कहते-कहते मां कौशल्या की आंखें डबडबा आई थीं।

राम ने मां के चरण स्पर्श करते हुए कहा था, ''आप ऐसा क्यों कहती हैं? अयोध्या लौटने के पश्चात् आप मेरा ही नहीं अपने पौत्र पौत्रियों का मुंह देखेंगी और उन्हें गोद में खिलाएंगी।''

राम की बात सुनकर जैसे शांत सागर में एक हल्की-सी लहर उठ आई हो, ऐसे ही उनके चेहरे पर हल्की मुस्कराहट उभर आई थी। उन्होंने आरती का थाल सजाया और अनंत मंगल कामनाओं के साथ अपने पुत्र की आरती उतारी तत्पश्चात् भारी मन से उसे विदा किया।

राम अब सीता के पास जाना चाहते थे। सीता को अभी यह मालूम ही नहीं था कि माता कैकेयी के हठ और विवश पिता की आज्ञा के कारण राम चौदह वर्षों के लिए वनगमन हेतु तैयारी कर चुके हैं। सीता तो अपने पति के राज्याभिषेक की कामना लिए बैठी थीं। राम समझ न पा रहे थे कि वे सीता को किस प्रकार इस नई परिस्थिति से परिचित कराएं। इस ऊहापोह के साथ उन्होंने सीता के कक्ष में प्रवेश किया।

सीता उनको अन्यमनस्क देख हतप्रभ हो उठी! उनके साथ न छत्र, न चंवर, न सेवकों की जय-जयकार । अयोध्या के भावी महाराज इस तरह अकेले और शांत । सीता तो प्रसन्नतापूर्वक उनकी आरती उतारने के लिए थाल सजाए बैठी थीं। उन्हें शांत और गंभीर देखकर सीता बोल पड़ी- ''आज आपका राज्याभिषेक है। मैं तो अपार प्रसन्नता अनुभव कर रही हूँ परंतु ये क्या? मैं देख रही हूँ आपके चेहरे पर कोई प्रफुल्लता नहीं है। आप शांत और गंभीर बने हुए हैं?''

राम ने सहज मुस्कराते हुए कहा - ''सीते, भविष्य के गर्भ में क्या छिपा हुआ है, कोई नहीं जानता। पूर्व काल में माता कैकेयी ने पिताश्री की शुक्राचार्य के साथ एक युद्ध में जान बचाई थी। पिताश्री ने प्रसन्न होकर उन्हें दो वरदान मांग लेने को कहा था। आज माता कैकेयी ने वे दो वरदान मांग लिए हैं, एक युवराज भरत को अयोध्या की राजगद्दी और दूसरा मेरे लिए चौदह वर्षों का वनवास । इस प्रकार पिता की आज्ञा का पालन करते हुए मुझे वनगमन के लिए तुमसे अनुमति चाहिए।'' इतना कहते हुए राम ने अपना मुंह दूसरी ओर कर लिया। वे सीता के चेहरे पर अपने कहे हुए की प्रतिक्रिया देखने की स्थिति में नहीं थे। वे अपने मन में सोच रहे थे कि सीता भी भाई लक्ष्मण की तरह क्रोधित होकर अपने अधिकार के लिए युद्ध करने की सलाह देगी। लक्ष्मण को जब कैकेयी के हठ और पिता की विवशता की बात मालूम हुई तो वह कैकेयी का वध करने के लिए उद्धत हो गया था। उसका कहना था भैया, हमारा जीवन दुष्टों का वध करने के लिए है। इसकी शुरुआत हम कैकेयी से ही करते हैं। कैकेयी ने आज अपनी दुष्टता का परिचय दे दिया है। अब हमें उसका वध करते हुए पिता को सुख प्रदान करना चाहिए और राजा के रूप में आपको अयोध्या के सिंहासन पर आसीन होकर अयोध्या की प्रजा का कल्याण करना चाहिए। मैंने ही उसे डांटते हुए समझाया था, ''लक्ष्मण, ऐसे कटु वचन तुम्हें नहीं बोलने चाहिए। अपने मन को अधीर मत होने दो। माता कैकेयी भले ही हठी हैं परंतु पिता रघुवंशियों की मर्यादा से बंधे हुए हैं। उन्होंने माता कैकेयी को जो वचन दिया है, उसे पूर्ण होना चाहिए, इसी में रघुवंश का गौरव है। हम कुल परंपरा का पालन करते हर्षपूर्वक वनगमन करेंगे।'' लक्ष्मण का क्रोध तो तब शांत हुआ जब उसने आग्रह किया कि मैं भी आपके साथ आपकी सेवा के लिए वन जाऊंगा, मैंने मान लिया था। पता नहीं सीता युद्ध के विकल्प में क्या आग्रह करेगी?

सीता को राम का इस प्रकार मुंह चुराना अच्छा नहीं लगा। वह सामने आकर विश्वासपूर्वक बोली- ''रघुवंशियों की मर्यादा का पालन अवश्य होना चाहिए। आप वनगमन करेंगे, इसमें मुझे कोई आपत्ति क्यों हो सकती है?''

राम का चेहरा प्रसन्नता से खिल गया। उन्होंने खुश होकर सीता से कहा- ''तुम सचमुच श्रेष्ठ हो। बहुत श्रेष्ठ । आज तुमने अपनी महानता के अनुकूल रघुवंशियों की नीति का समर्थन किया है। मैं तुम्हारे प्रतिउत्तर से बहुत खुश हूँ। अब ध्यान देकर मेरी एक बात और सुनो।'' इतना कहकर राम निकट के सिंहासन पर आराम से बैठ गए। उन्होंने सीता को भी सामने वाले सिंहासन पर बैठने के लिए कहा। फिर शांत और गंभीर वाणी में वे बोले- ''सीते, मेरे वनगमन के समय में तुम यहीं सुखपूर्वक रहना। अपनी तीनों सासों में किसी भी प्रकार का भेद न करते हुए उनकी

मन लगाकर सेवा करना। माता कैकेयी से कभी भी किसी प्रकार द्वेष मत रखना और महाराज भरत के हर आदेश का मेरी आज्ञा मानकर पालन करना। अपने पूज्य ससुर की मन लगाकर सेवा करना। तुम्हें यहां किसी प्रकार का कोई कष्ट नहीं होगा। मैं चौदह वर्ष वनवास में पूरे करके जल्द वापस आ जाऊंगा फिर आगे हम सुखपूर्वक जीवन बिताएंगे।''

''वाह! आप वन में रहेंगे और मुझे यहां किसी प्रकार का कोई कष्ट नहीं होगा! ऐसा आपने कैसे सोच लिया?'' सीता ने राम से प्रतिप्रश्न किया।

''वन का जीवन बहुत कष्टमय होता है। घने जंगलों, कंटीली झाड़ियों, दुर्गम मार्गों और ऊंचे पर्वतों से होकर गुजरना होता है। वहां हर वक्त हिंसक पशुओं और वनवासी राक्षसों के हमले की आशंका बनी रहती है। घास-फूस की कुटी बनाकर उसमें निवास करना पड़ता है। वर्षा, गर्मी और शीत के प्रकोप से अच्छी तरह शरीर की बचत नहीं हो पाती। सोने और ओढ़ने के लिए कुश के बिछौने होते हैं। खाने के लिए जंगल की वनस्पतियां, फलों और कंदमूल पर निर्भर रहना होता है। तुम सुकुमारी हो। बचपन से लेकर अब तक बहुत लाड़-प्यार और सुख-सुविधाओं में पली हो। मैं नहीं चाहता कि बिना किसी कारण के तुम्हें वनवास के ये कष्ट उठाने पड़ें। वनवास की आज्ञा मेरे लिए हुई है। तुम्हारे लिए नहीं। इसलिए तुम यहीं सुखपूर्वक रहो। मन हो तो कुछ समय के लिए अपने मायके जनकपुर चली जाना।'' राम ने अपनी तरफ से सीता को अच्छी तरह समझाया।

''आपने तो गुरुकुल में जाकर धर्म, नीति और विभिन्न विद्याओं की विधिवत शिक्षा प्राप्त की है। आप तो शास्त्रों के ज्ञाता हैं। मर्यादा पुरुषोत्तम हैं। मैंने इस प्रकार कहीं कोई शिक्षा ग्रहण नहीं की। मेरे माता-पिता ही मेरे गुरु हैं। उन्होंने बचपन से मुझे शिक्षा दी है, वह मैं आपसे कहती हूँ। मेरे पिता जिन्हें लोग विदेह कहते हैं, उनका कहना है कि जीवन सदा एक जैसा नहीं होता। इसमें उतार-चढ़ाव आते रहते हैं। हर स्थिति में शांत और स्थिर बने रहना आदमी का स्वभाव होना चाहिए। इसी प्रकार मेरी मां ने मुझे सिखाया है कि विवाह के उपरांत पति और पत्नी का अलग-अलग जीवन नहीं होता। वह एक साझा जीवन होता है, जिसमें दुख और सुख दोनों को मिल-बांटकर भोगने चाहिए। इस प्रकार अब आप ही बताइए कि आपके बिना मैं यहां अकेले सुखपूर्वक कैसे रह सकती हूँ?'' सीता ने दृढ़तापूर्वक अपने पति से पूछा।

सीता के इस प्रश्न का राम को कोई उत्तर न सूझा। वे बेचैन हो गए। वे वनवास के कष्टों को अच्छी तरह जानते हैं। गुरु विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा के लिए उन्हें वनगमन करना पड़ा था। उस समय उन्होंने लक्ष्मण के साथ मिलकर कई दुष्ट राक्षसों का संहार किया था। वन्य जीवन में हमेशा हिंसक पशुओं और दुष्ट राक्षसों के हमले का खतरा बना रहता है। दुर्गम पथों से गुजरना और भोजन आदि की अनिश्चितता सदा बनी रहती है। सीता सुकुमारी हैं। उन्होंने बचपन से लेकर आज तक किसी प्रकार के कोई कष्ट नहीं झेले, वे भला वन्य जीवन के कष्ट किस प्रकार उठा पाएंगी? राम इस प्रकार की चिंताओं में खोए हुए थे। उन्हें समझ में नहीं आ रहा था कि वे सीता को यहीं अयोध्या में रह जाने के लिए किस प्रकार मनाएं। सहसा उन्हें एक विचार सूझा, गुरु वशिष्ठ नीति और धर्म के परम ज्ञाता हैं, वे ही सीता को अयोध्या में रह जाने के लिए समझा सकते हैं। यह विचार आते ही उन्होंने सीता के सम्मुख यह प्रस्ताव रखा कि यदि गुरुदेव वशिष्ठ आपको मेरे साथ वनगमन की अनुमति प्रदान करते हैं तो उनकी आज्ञा का पालन करना मेरा धर्म होगा।

राम और सीता एक साथ गुरु वशिष्ठ के सम्मुख उपस्थित हुए। प्रणाम करने के पश्चात् सीता ने निवेदन किया- ''गुरुदेव, आप तो जानते ही हैं कि मेरे पति मेरे प्राण हैं। प्राणों के बिना ये शरीर जीवित कैसे रह सकता है? मेरे पति को वनगमन का आदेश हुआ है। वे मुझे अयोध्या में छोड़कर वनवास के लिए जाना चाहते हैं। आप तो जानते ही हैं कि उनके वनगमन के पश्चात् मेरी मृत्यु सुनिश्चित है। इसलिए मैं प्राणों की भिक्षा मांगने आपके पास आई हूँ। आज मुझे अपने पति के साथ वनगमन की आज्ञा प्रदान कर मेरे जीवन की रक्षा कीजिए।''

गुरु वशिष्ठ ने सीता को शुभाशीष देते हुए राम से कहा- ''राम, तुम मर्यादा पुरुषोत्तम हो । वनवास काल में सीता को अपने साथ रखना मर्यादानुकूल है। जीवन बाहर से जैसा दिखाई देता है, वैसा होता नहीं है। हर अवसर में कुछ निहितार्थ छिपा हुआ होता है। अभी यह लग रहा है कि तुम्हारा वनगमन एक दुखद घटना है, परंतु सिर्फ ऐसा ही नहीं है। इसमें कई निहितार्थ छिपे हुए हैं जो तुम्हें और अन्य लोगों को बाद में मालूम होंगे। तुम मेरी आज्ञा से सहर्ष सीता को अपने साथ लेकर वन के लिए प्रस्थान करो, इसमें सबका कल्याण है।''

यह कहकर गुरु वशिष्ठ ने दोनों को अपना आशीर्वाद देते हुए आश्रम से विदा किया।

मार्ग में राम ने सीता को बताया- ''मेरे वनगमन जाने का समाचार सुनकर लक्ष्मण बहुत उद्विग्न है। उसने तो युद्ध करने का निश्चय कर लिया था। कहता था कैकेयी का वध करके मुझे राजसिंहासन पर आरूढ़ करेगा और पिताश्री को सुख प्रदान करेगा। फिर मैंने ही उसे समझाया कि ऐसा करना रघुकुल की मर्यादा के विपरीत होगा। मेरे वनगमन में ही रघुकुल की प्रतिष्ठा है और पिताश्री का मान-सम्मान भी। इसलिए तुम ऐसा कुछ नहीं करोगे, जैसा सोचते हो। बहुत मुश्किल से मेरे समझाने के पश्चात् वह इस शर्त पर शांत हुआ कि उसे भी मैं अपने साथ वन चलने की अनुमति प्रदान करूं।''

''फिर आपने क्या किया?'' सीता ने पूछा।

''क्या करता ! अनुमति प्रदान करनी पड़ी। अब भ्राता लक्ष्मण भी हमारे साथ वनवास के लिए चलेंगे।'' राम ने कहा।

सीता को यह जानकर प्रसन्नता हुई। वे राम के प्रति उनके तीनों भाइयों का प्रेम जानती हैं। वे यह भी जानती हैं कि भले ही माता कैकेयी के हठ के कारण अयोध्या की राजगद्दी आज भरत को प्रदान की जा रही है परंतु भरत इसे हृदय से कभी स्वीकार नहीं करेंगे। उन्होंने अपने पति से कहा- ''भरत और शत्रुघ्न इन दिनों ननिहाल गए हुए हैं। वे यदि यहां होते तो माता कैकेयी और पिताश्री से विवाद करते और आपको उन्हें भी अपने साथ वनगमन की अनुमति देनी पड़ती।''

तुम ठीक कहती हो सीते! मेरे भाई मुझसे बहुत प्रेम करते हैं। आगे अपने वनगमन के निर्णय में कोई व्यवधान न हो इसलिए हमें शीघ्र ही वन के लिए प्रस्थान करना चाहिए। ''राम ने अपना निर्णय सुनाया।''

आप ठीक कहते हैं स्वामी! सीता ने स्वीकृति प्रदान की।

सीता के इस प्रकार सहर्ष वन जाने की तैयारी को देखकर राम के हृदय में उसके प्रति आदर और प्रेम की तरंगें हिलोरें लेने लगीं। वनवास का आदेश मेरे लिए हुआ था। सीता के लिए नहीं। सीता सुखपूर्वक अयोध्या में रह सकती है। अयोध्या में न रहना चाहे तो वह अपनी इच्छा से अपने मायके जनकपुर भी जा सकती है। परंतु उसने मेरे साथ वन में तरह-तरह की परेशानियों से भरा जीवनयापन का निर्णय लिया, यह उसके व्यक्तित्व की महानता है। सीते तुम सचमुच बहुत श्रेष्ठ हो। ऐसा सोचते हुए राम सीता के साथ राजमहल पहुंचे।

राजमहल में लक्ष्मण उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। लक्ष्मण को देखते ही राम ने कहा- लक्ष्मण, अब हमें शीघ्र ही वन के लिए प्रस्थान करना चाहिए इसके पूर्व तुम माता सुमित्रा और अपनी पत्नी से भेंट करके आओ।

भाई की आज्ञा का पालन करने के लिए लक्ष्मण तुरंत माता सुमित्रा के कक्ष में पहुंचे। माता को पहले ही अपने पुत्र लक्ष्मण का निर्णय मालूम हो चुका था। हृदय में भले ही उन्हें पुत्र से बिछोह का दुख रहा हो परंतु कर्तव्य उनके सामने सर्वोपरि है। वे प्रसन्न होकर बेटे को गले लगाकर बोलीं- ''बेटा, मुझे तुम पर गर्व है। तुम बिना कहे ही यह बात भलीभांति जानते हो कि बड़ा भाई पिता के समान होता है और भाभी माता के समान। राम और सीता के प्रति तुम्हारी भक्ति भावना को मैं जानती हूँ। वन में हमेशा मन लगाकर उनकी सेवा करना। तुम्हारे होते हुए उन्हें कभी कोई कष्ट नहीं होना चाहिए। मेरा आशीर्वाद सदा तुम्हारे साथ है।''

मां के चरण स्पर्श कर लक्ष्मण सीधे उर्मिला के कक्ष में गए और बोले- ''उर्मिले, मेरे वनगमन के निर्णय से तुम्हें दुख जरूर हुआ होगा, जिसके लिए मैं क्षमाप्रार्थी हूँ, परंतु तुम मेरे कर्तव्य को हृदय से स्वीकृति प्रदान कर सको तो मुझे बहुत प्रसन्नता होगी।'' इतना कहकर लक्ष्मण उर्मिला से आंखें चुराने लगे।

उर्मिला ने अपने आंसुओं की बाढ़ को भीतर बांधने की बहुत कोशिश की परंतु उसकी आंखें नम हो गईं। वह नहीं चाहती थी कि उसके आंसू उसके पति के संकल्प को कमजोर करें। उसने प्रयास करके अपने आप को प्रसन्न किया और बोली- ''आपने ये कैसे सोच लिया कि मैं आपके कर्तव्य पथ में बाधा उत्पन्न करूंगी? मैं आपके हर निर्णय में आपके साथ हूँ। बस एक वादा मुझसे करके जाओ।''

''जरूर। मैं तुम्हारे हर वादे को पूरा करूंगा।'' लक्ष्मण ने उत्साहपूर्वक कहा।

''चौदह वर्षों बाद इसी तरह सकुशल वापस लौट आना। मैं बेसब्री से आपकी प्रतीक्षा करूंगी।''उर्मिला ने मुंह छिपाते हुए कहा।

''उर्मिले, मैं तुम्हारा हूँ। सदा तुम्हारा रहूँगा। मेरे रक्षक, मेरे बड़े भैया मेरे साथ हैं। मेरा बाल-बांका नहीं होगा। तुम विश्वास रखो मैं इसी प्रकार सकुशल तुम्हारे पास वापस आऊंगा।'' इतना कहकर लक्ष्मण जाने को हुए।

उर्मिला ने उनकी आरती उतारी। अपने आंचल से उनका माथा पोंछा, जहां पसीने की बूंदें उभर आई थीं। तत्पश्चात् भरसक उसने अपने आंसुओं को रोका और भारी मन से अपने पति को वनगमन के लिए विदा किया।

लक्ष्मण अब गमन के लिए पूरी तरह तैयार थे। सहसा उन्हें याद आया कि सीता स्वयंवर के समय महात्मा वरुण ने दोनों भाइयों के लिए दो अभेद्य कवच, दो दिव्य धनुष और अक्षय बाणों से भरे हुए दो तरकस दिए थे। ये आयुध गुरुदेव वशिष्ठ के आश्रम में सुरक्षित रखे हुए हैं। वनगमन के पूर्व इन्हें अपने साथ में रखना उपयुक्त होगा, वहां इनकी जरूरत पड़ सकती है। यह सोचकर अपने आयुध लेने के लिए लक्ष्मण गुरुदेव वशिष्ठ के आश्रम की ओर चल दिए।

लक्ष्मण को दिव्य आयुधों से सुसज्जित देखकर राम बहुत खुश हुए। उन्होंने लक्ष्मण और सीता से कहा- ''अब हमें चौदह वर्षों तक वन में निवास करना है इसलिए यहां हमारे उपयोग की जो-जो वस्तुएं हैं, उनका हमें दान कर देना चाहिए। गुरुकुल में विद्यार्थियों को बहुत चीजों की जरूरत होती है इसलिए हम गुरुपुत्र सुयज्ञ को बुलाकर अपने उपयोग की सारी चीजें दान में दे दें और हमारे पास जो भी थोड़ी-सी धन-संपदा है, उसे भी हमें गुरुकुल के लिए दान में दे देना चाहिए।''

लक्ष्मण और सीता को राम का प्रस्ताव बहुत पसंद आया। उन्होंने तुरंत गुरुकुल से सुयज्ञ को बुलवाकर अपने पास की समस्त धन-संपदा और गुरुकुल के विद्यार्थियों के उपयोग की बहुत सारी सामग्री उन्हें दानस्वरूप प्रदान कर विदा किया। तीनों ने राजसी भेष और वस्त्र त्यागकर बल्कल वसन धारण कर पिता और माता से पुनः विदा लेकर वन की ओर प्रस्थान किया। कैकेयी और मंथरा को छोड़कर विदाई के ये क्षण राजमहल के सभी निवासियों पर बहुत भारी थे। लोगों की रुलाई फूट-फूट पड़ रही थी परंतु कोई कुछ कह नहीं सकता था।

राजमहल से निकलने के पश्चात् राम, सीता और लक्ष्मण के पीछे एक विशाल जनसमूह हो लिया। अयोध्या की सीमा समाप्त होने के पश्चात् भी इस जनसमूह से कोई भी लौटने को तैयार न था, तब राम ने अयोध्यावासियों को संबोधित कर कहा- ''मुझे दण्डकारण्य वन की ओर जाना है। वह स्थान बहुत दूर है। आप लोग यहां तक मेरे साथ आए, यह आप सबका मेरे प्रति प्रेम है परंतु अयोध्या में आपके महाराज दशरथ हैं। अब आप लोगों को वहीं रहना चाहिए। कृपाकर आप लोग लौट जाइए और सुखपूर्वक अयोध्या में निवास करिए । आप लोगों के ऐसा करने से मुझे बहुत सुख-शांति मिलेगी और मैं निश्चित अपने गंतव्य की ओर प्रस्थान कर सकूंगा।

राम, सीता और लक्ष्मण ने सबसे हाथ जोड़कर लौट जाने की प्रार्थना की। समूह में अधिकांश लोग रो रहे थे। कोई अपने प्रिय राजकुमारों और जानकी सीता को छोड़कर लौटना न चाहता था परंतु बार-बार उन तीनों के आग्रह करने के पश्चात् वे लोग भारी मन से अयोध्या की ओर लौटने लगे।

लेखक वरिष्ठ साहित्यकार हैं। संपर्क- 326 बी/आ महालक्ष्मी नगर, इंदौर-452010 (म.प्र.), मो. 9425167003

# शब्द रंग : कलाओं की आवाजाही

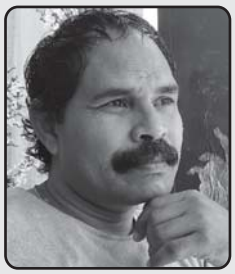

चेतन औदिच्य

अपवादों को छोड़ दें तो आम दृश्य यह है कि किसी चित्रकार से पूछा जाए कि राग भूप कैसी लगती है ? तो वह सकपका जाएगा और कहेगा कि मैं पेंटिंग के बारे में बता सकता हूँ, संगीत की जानकारी मुझे नहीं है। किसी कवि से किसी चित्रकार की पेंटिंग के बारे में बात करने को कहेंगे तो वह शायद नहीं करे।

ज्यादातर ऐसा होता है कि चित्रकार चित्रकला के आयोजन में तो शामिल होते हैं किंतु संगीत के कार्यक्रम अथवा नाटक प्रदर्शन में ज्यादा रुचि नहीं रखते। ऐसे ही संगीतकार कला प्रदर्शनियों में बहुत कम उपस्थित होते हैं । साहित्यकार भी संगीत और चित्रकला से ज्यादा निकटता नहीं रखते । इसका बहुत बड़ा कारण तो यह है कि हमने कलाओं के अंत:अनुशासन तथा उनकी आंतरिक संबद्धता पर ज्यादा बात नहीं की है । ना ही सामाजिक और संस्थानिक स्तर पर इस तरह के बड़े अवसर उत्पन्न किए, कि एक विधा का कलाकार दूसरी विधा को आत्मसात कर सके। कलाकारों के बड़े समुदाय तक यही बात है। असल में तो हमारी शिक्षा व्यवस्था में भी इस तरह का कोई गंभीर प्रयास नहीं हुआ कि विद्यार्थी बचपन से ही विविध कलाओं को आत्मसात करना सीखे। इसका परिणाम यह हुआ कि कलाओं के गंभीर स्वरूप के प्रति आम जन ने दूरी बना ली। साथ ही कृति अथवा प्रस्तुति की उत्कृष्टता में भी कमी आई।

सामान्यत: यह देखा गया है कि विश्व की महान कृतियां को रचने वाले कलाकार, साहित्यकार, संगीतकार अक्सर दूसरी विधा को गहरे से आत्मसात करने वाले रहे हैं। भारत के महान चित्रकार रविन्द्र नाथ टैगोर तो चित्र, कविता और संगीत की त्रिवेणी ही रहे हैं। अमूर्त चित्रकार रामकुमार का उत्कृष्ट लेखन हमारे सामने हैं। गुलाम मोहम्मद शेख चित्र बनाते हैं, तो कविता में भी रमते हैं। प्रभाकर बर्वे के चित्रों की तरह उनका गद्य भी गहरी सलिला जैसा है। जगदीश स्वामीनाथन की कविताएं तो जैसे हमारी अमूल्य निधि ही है। प्रसिद्ध चित्रकार कनु पटेल जितने बड़े चित्रकार हैं उतने ही उत्कृष्ट रंगकर्मी हैं। कला आलोचक ज्योतिष जोशी द्वारा कनु पटेल के कला अवदान पर लिखी गई पुस्तक 'बहुव्रीहि' में कनु पटेल कहते हैं, ...यानी कलाएं एक दूसरे में शामिल होकर अधिक अर्थवान बनती है । उनमें अधिक समृद्धि आती है और उसे हम बड़े दृश्य या शब्द विचार में डाल पाते हैं। जो कलाकार कलाओं के आपसी सहकार से हो पाने वाले इन विपुल अनुभव से अनजान रहते हैं, वे अपना तथा अपनी कला दोनों का नुकसान करते हैं।

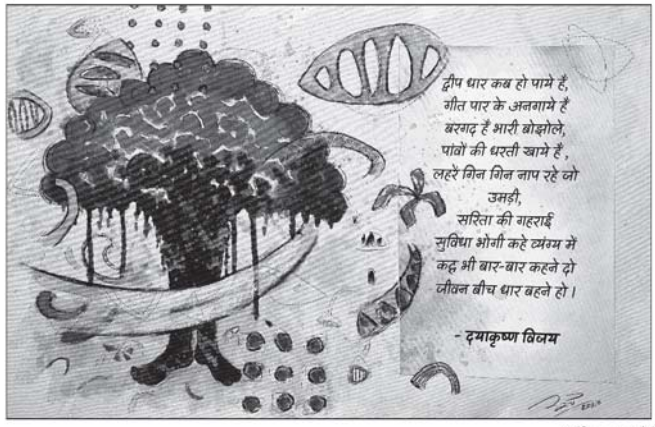


आर्टिस्ट : सूरज सोनी

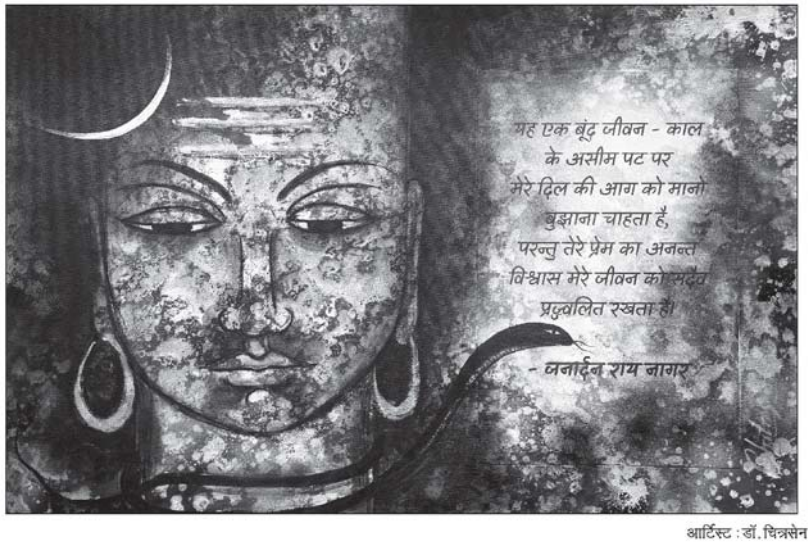


आर्टिस्ट : डॉ. चित्रसेन

कलाओं के अंत:अनुशासन को देंखे तो पिकासो की लिखी हुई बहुत सारी कविताएं हमारे सामने हैं । गगन गिल द्वारा अनुवाद की गई पिकासो की एक कविता को विनोद भारद्वाज ने अपने कलाकोश में इस तरह दर्ज किया है–

**अपने एकांत में**
**चुप रहो कहो नहीं कुछ भी**
**कि कैसे सड़क भरी है सितारों से**
**और क़ैदी खाते हैं कबूतर**
**और कबूतर खाते हैं पनीर**
**और पनीर खाता है शब्द**

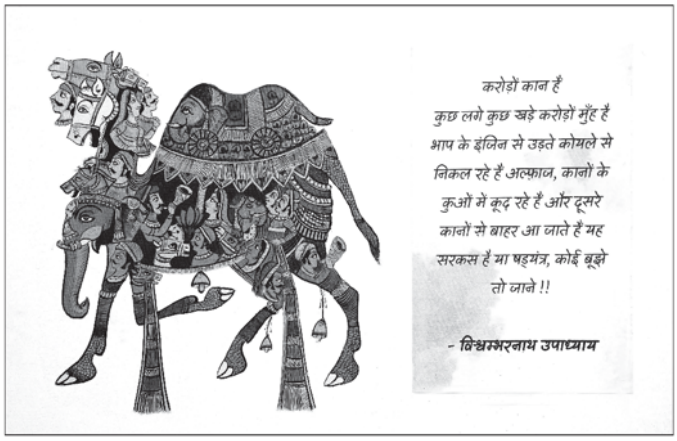


आर्टिस्ट : अमित सोलंकी

**और शब्द खाते हैं पुल**
**और पुल खाते हैं निगाहें**
**और निगाहें कटोरे चुंबनों से भरे हुए**
**कैसे हर चीज छिप जाती है अपने पंखों में तितली रात**
**पिछली गर्मियों में बार्सिलोना के एक कैफे में ।**–पिकासो

लिओनार्दो दा विंची अभियांत्रिकी की नायाब छवि–कल्पनाएं और महानतम सांगीतिक रचनाएं हमें सौंप गए हैं । वान गोग द्वारा अपने भाई को लिखे गए पत्र यदि आपने पढ़े हैं तो मेरी इस बात से सहमत होंगे कि एक–एक पत्र करुणा का अप्रतिम दस्तावेज है। संवेदनाओं से सिक्त ऐसे पत्र कला जगत की सार्वकालिक संपदा है।...इस तरह और भी ऐसे हजारों हजार कलाकार हुए हैं जिन्होंने अपनी विधा के अलावा कलाओं के दूसरे स्वरूपों के साथ आत्मीयता रखी है।

कलाओं के आपसी तादात्म्य को समझते हुए तथा उनके अंत:संबंध की डोर को जानते हुए 'शब्द रंग' नाम से एक आयोजन राजस्थान साहित्य अकादमी के अध्यक्ष डॉ. दुलाराम सहाराण की पहल पर किया गया। इसमें राजस्थान के युवा चित्रकारों के समक्ष कुछ कविताएं रखी गई । चित्रकारों ने उनमें से अपनी पसंद की कविता का चुनाव किया तथा उसके भावबोध से आप्लावित होते हुए अपनी पेंटिंग बनाई । 25 कलाकार अलग–अलग कविताओं से गुजरे तथा उनमें से जिस कविता ने उन्हें प्रभावित किया उस कविता पर उनकी रचनात्मक अभिव्यक्ति पेंटिंग के रूप में सामने आई। कलाकारों में हेमन्त जोशी, रवीन्द्र दाहिमा, जगदीश कुमावत, चित्रसेन, नीलोफर मुनीर, अनिल मोहनपुरिया, दीपिका माली, इति कच्छावा, प्रेषिका द्विवेदी, दीपक सालवी, सुरेन्द्र सिंह चुंडावत, सुनील नीमावत, नवल सिंह चौहान, सूरज सोनी, शहनाज मंसूरी, कुमुदिनी भरावा, अमित सोलंकी, मुकेश औदिच्य, सोनम फुलवारिया, नक्षत्रा चौबीसा, प्राथी सिकलीगर आदि ने पेंटिंग्स रची। इन कलाकारों में प्राथी सिकलीगर जैसी उदीयमान कलाकार और कला विद्यार्थी, तो डॉ जगदीश कुमावत जैसे वरिष्ठ कलाकार भी शामिल रहे।

अमूर्त कला के महत्वपूर्ण कलाकार अनिल मोहनपुरिया ने सवाई सिंह शेखावत की प्रसिद्ध कविता को अपने रंगों में उतारा–

**मैं फिर कहता हूं**
**मिट्टी में नुक्स नहीं है**
**खिल सकते हैं अब भी आत्मा के फूल**
**बशर्ते हम बोयें दिलों में मैत्री के बीज**
**सुनें दरवाजे तक आती**
**जीवन पदचाप को**
**लहू में घुल शहद और नमक से**
**जोड़ रिश्तों की डोर पिघलती बर्फ में**
**और जगाए रखें**
**सृजन की उम्मीद को** –सवाई सिंह शेखावत

कलाकार डॉ सुरेन्द्र सिंह चूंडावत ने नंद। चतुर्वेदी की कविता पर रंग बिखरे। सोनम फुलवारिया ने ज्ञान भारिल्ल की कविता ––जगजीवन की शून्य सृष्टि पर प्रिया वसंत उतरो उतरो.. पर बहुत ही मोहनीय पेंटिंग बनाई जिसे देखकर लगता है कि बसंत सामने आ गया है। चंद्र प्रकाश देवल की– उम्र की धूप छांव में / झुलसते संभालते / तुम जिधर बढ़ते हो /हर बार आगे/ वह मिले ही / नहीं कहा जा सकता।

कविता पर सुनील निमावत ने श्वेत श्याम चित्र बनाया। अमित सोलंकी ने अपनी ही शैली का चित्र विश्वंभर नाथ उपाध्याय की कविता पर रचा, कविता देखिए –

**करोड़ काम है**
**कुछ लगे**
**कुछ खड़े**
**करोड़ मुंह है**
**भाप के इंजन से उड़ते कोयले से**
**निकल रहे हैं अल्फाज**
**कानों के कुओं में कूद रहे हैं**
**और दूसरे कानों से बाहर आ जाते हैं**
**यह सर्कस है या षड्यंत्र**
**कोई बूझे तो जाने !!**

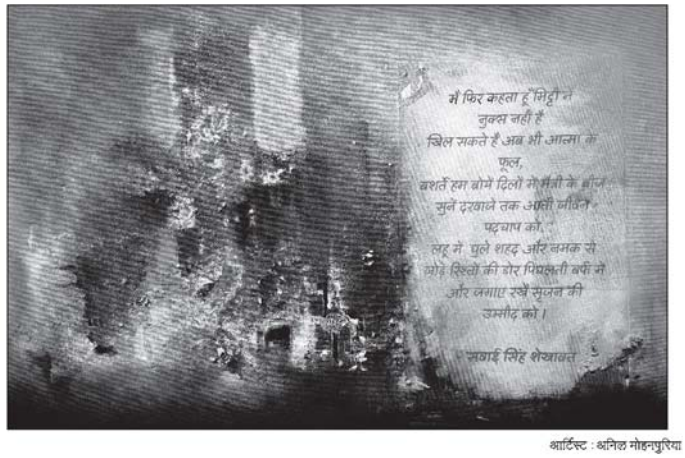


आर्टिस्ट : अनिल मोहनपुरिया

आर्टिस्ट : डॉ.सुरेन्द्र सिंह चूंडावत

डॉक्टर दीपिका माली ने कन्हैयालाल सेठिया तो इति कच्छावा ने डॉ रामगोपाल शर्मा दिनेश की कविता पर चित्र बनाएं। नीलोफर मुनीर , नवल सिंह चौहान,कुमुदिनी भरावा,नक्षत्रा चौबीसा,सूरज सोनी,प्रेषिका द्विवेदी ने भी अपनी पसंद की कविताएं चुन कर पेंटिंग बनाई। कलाकार मुकेश औदिच्य ने जुग मंदिर तायल की कविता –

कहीं से कोई एक अर्थ आता है
पुराने शब्दों के चेहरे चमक जाता हैं
धूप भरे
नए-नए बिंब
मन दर्पण में उतर जाता है ...

को अपने चित्र में अभिव्यक्ति दी। प्रार्थी सिकलीगर ने नंदकिशोर आचार्य की--आओ/ ना सही मेह सी/ रेत सी ही सही... कविता पर चित्र बनाया।

हेमंत जोशी ने मथुरेश नंदन कुलश्रेष्ठ की कविता-- मेरे चारों ओर की वस्तुएं जब आकार छोड़कर बन जाती है सिर्फ अहसास.. कविता को तो, डॉ दीपक सालवी ने गोविंद माथुर की प्रसिद्ध कविता को चित्र में रचा –

**ठहरता नहीं कोई पल**
**ठहरता नहीं बहता हुआ जल**
**ठहरे रहते हैं शहर**
**शहरों में ठहरे रहती है इमारतें**
**इमारतों में ठहरी रहती है स्मृतियां**
**स्मृतियों में ठहरी रहती है उम्र**
**उम्र में ठहरा रहता है प्रेम।** – गोविंद माथुर

कलाकार चित्रसेन ने जनार्दन राय नागर की कविता पर चित्र बनाया तो जगदीश कुमावत ने विजेंद्र की कविता पर । विद्यालय में पढ़ने वाले कबीर, बंटी, योगेश, यजुष, हर्ष आदि ने भी कविताओं के अनुकूल अपनी पेंटिंग इस आयोजन में बनाई ।

यह कलात्मक प्रयोग इस दृष्टि से भी महत्वपूर्ण रहा की चित्र रचना का स्थल साहित्य से संपन्न एक ऐसे पुस्तकालय को रखा गया जहां अनेक साहित्यकारों की उपस्थिति आंखों के सामने थी। कला तथा साहित्य के अनेक संवाद इस आयोजन में रखे गए जिससे कलाओं की आवाजाही अपने से इतर विधाओं के साथ हुई। किंतु यह कहना भी जरूरी है कि ऐसे सामासिक कला आयोजनों की दरकार बनी रहेगी।

स्तंभकार लेखक – वरिष्ठ चित्रकार और कवि हैं।
संपर्क -49-सी, जनता मार्ग,
सूरजपोल अंदर, उदयपुर-313001 (राज.),
मो.: 9602015389

कला समय

**अब वेबसाइट पर**
**देश की सर्व श्रेष्ठ एक मात्र सांस्कृतिक पत्रिका**
**'कला समय' अब वेबसाइट पर पाठकों के लिए सुलभ है।**
**सुधी पाठक**
**www.kalasamaymagazine.com**
**के माध्यम से**
**इस सुविधा का लाभ उठा सकते हैं।**

**सुखद सूचना !!**

Page Visit counters keep track of how often a website is accessed, and usually display the number of page visits at the bottom of the homepage. We have successfully crossed 100000 page visits.

पेज विज़िट काउंटर इस बात पर नज़र रखते हैं कि किसी वेबसाइट को कितनी बार एक्सेस किया गया है, और आमतौर पर होमपेज के नीचे पेज विज़िट की संख्या प्रदर्शित करते हैं। हमने सफलतापूर्वक 100000 पेज विजिट का आंकड़ा पार कर लिया है।

वक्तव्य

'छोटे मुँह छोटी सी बात' के लोकार्पण अवसर पर प्रख्यात साहित्यकार एवं
पूर्व आई.ए.एस. अधिकारी श्री मनोज श्रीवास्तव का वक्तव्य

# छोटी-सी, गागर में सागर भरने की कला में तिवारी दक्ष हैं

- मनोज श्रीवास्तव

**पुस्तक विवरण-**

| | | |
|---|---|---|
| कृति | : | 'छोटे मुँह छोटी सी बात' |
| लेखक | : | संतोष तिवारी |
| प्रकाशक | : | कला समय प्रकाशन, भोपाल (म. प्र.) |
| मूल्य | : | ₹450/- |
| प्रकाशन वर्ष | : | प्रथम संस्करण : 2023 |

संतोष तिवारी जी ने अपनी सहज विनम्रता में इस पुस्तक का नाम छोटे मुँह छोटी सी बात रखा है पर प्रशासन में रहे लोग जानते हैं कि 'बड़ा मुँह फाड़ने' का वहाँ क्या अर्थ होता है। यहाँ विजयशंकर मेहता जी बैठे हैं और उनका जीवन तो हनुमानमय रहा है, वे समझ सकते हैं कि सुरसा के समान बड़ा मुँह फैलाने पर भी अति लघुरूप हनुमान उससे निकलकर आ ही जाते हैं। इसलिए छोटे होने में संकोच की क्या आवश्यकता? वो कहते हैं न कि-

**न जाने निकले बड़े लोग हैं कहाँ की तरफ़**
**ज़मीं की बात है और आँख आसमाँ की तरफ़**

साथियों, मंच संचालन प्राय: एक रूढ़ और पारंपरिक-सी चीज़ है क्योंकि हमारे कार्यक्रमों का भी एक पूर्वस्थापित-सा फार्मेट या टेम्पलेट बन गया है। उसमें वही दीप प्रज्ज्वलन है, सरस्वती माँ या सम्बन्धित स्मृति-व्यक्तित्व को माल्यार्पण है और 'हे शारदे मां, अज्ञानता से हमें तार दे माँ' जैसे मुहावरे की तरह प्रचलित गीत का गायन है जिसमें 'अज्ञानता' शब्द ही मुझे अज्ञान के प्रमाण की तरह लगता है, अतिथियों का माल्यार्पण के जरिए स्वागत है - और कई जगह तो इस मालार्पण का इतना शौक है- मसलन मालवा में- जहाँ मेरी बहुत-सी फ़ील्ड पोस्टिंग्स रहीं कि मालवा का नाम मैंने मालावा रख दिया था और आजसे करीब तीस वर्ष पहले मैंने बुके नहीं बुक दें का सूत्र दिया था, बहरहाल उस स्वागत के बाद शाब्दिक स्वागत है, फिर कार्यक्रम की प्रयोजन-सिद्धि के अनुक्रम, अंत में आभार और कार्यक्रम के समापन की औपचारिक घोषणा। सब कुछ इतना बँधा बँधाया और तयशुदा और predictable है कि इससे ज़रा से विचलन पर शिकायत होती है - तब ऐसे में मंच संचालक की व्यक्तिगत प्रतिभा ही है जो कार्यक्रमों की ठठरी में प्राण फूँकती है, उसे स्फूर्त और स्पन्दित करती है। और यह कार्य तो ईश्वर-सरीखा है, तब मुझे वह संस्कृत परंपरा बहुत अर्थवती लगती है जिसमें ईश्वर का एक नाम सूत्रधार है। यानी ऑल द वर्ल्ड इज़ अ स्टेज के शेक्सपीरियन कथन से बहुत पहले संसार को रंगमंच, जीवन को नाट्य, मनुष्य या जीव को अभिनेता कहने वाली इस संस्कृति में मंच संचालन के सूत्र सँभालने वाला ईश्वर है। इसलिए संतोष तिवारी जी 'छोटे मुँह छोटी सी बात' शीर्षक से अपने मंच-संचालन की स्मृतियों को अपनी पूरी विनम्रता में यदि शेयर कर रहे हैं तो इससे उनके काम के महत्त्व को कम करके नहीं देखना चाहिए।

संतोष तिवारी जी ने इस पुस्तक के अपने इकबालिया बयान में इसे दर्ज किया भी है और काफ़ी convoluted तरह से किया है कि 'इस संचालन सृष्टि का सृष्टा संचालक भी सृष्टि- सृष्टा की तरह ही होता है- निरूप इसलिए सर्वरूप, आयोजनानुसार रूपधारी।'

जो लोग मंच संचालक को कंपेयरर जैसे अंग्रेजी नाम से जानते

हैं, वे उसे उस नीची स्थिति में लाना चाहते हैं जहां वह आयोजकों के सर्वेन्ट की तरह, उनके भाड़ा-भृत्य की तरह है। (हालाँकि इसी से बचने के लिए तिवारी जी ने हमेशा शौक़िया तौर पर मंच संचालन किया), वे हमारे देश की धरोहर से परिचित होते तो पाते कि वहां तो उसे सूत्रभृत, सूत्री और सूत्रीकृत कहा गया, वहां उसे शिल्पी कहा गया, 'भाव' कहा गया, नांदी कहा गया, उपदेष्टा कहा गया। अब जब भोजपुर शिवमंदिर की अनुरक्षण और विकास योजना के शुभारंभ अवसर पर तिवारी जी कहते हैं: 'शुभ को तो सभी अंगीकार करते हैं, पर अशुभ कहाँ जाये, सौंदर्य को तो सभी स्वीकार करते हैं पर असौंदर्य कहाँ जाए, अमृत की चाहत तो सभी को है मगर हलाहल को कौन अपनाये ? तिरस्कृत को पुरस्कृत करने वाले, जिनसे सबको गिला है, उन्हें गले लगाने वाले, दूषण को भूषण बनाने वाले महादेव शंकर हमारे आध्यात्मिक ही नहीं, सांस्कृतिक देव भी हैं।' अब बताइये, राष्ट्रपति शंकर दयाल शर्मा जी के वक्तव्य के ठीक पहले यह बोल-बचन जिसके मुख से निकलें, उसे उपदेष्टा न कहें तो क्या कहें, जो इसी कार्यक्रम में भोजपुर के शिवमंदिर से शंकर और शंकरदयाल शर्मा जी के संयोग को इतने मीठे तरह से प्रस्तुत करे, उसे शिल्पी- शब्द शिल्पी-न कहें तो क्या कहें।

आज जबकि कल्चरल नेशनलिज़्म शब्द से ही कुछ लोग बौखला जाते हैं, तब संतोष तिवारी जी 04 नवंबर 1995 के आयुर्वेद संस्थान 8 धन्वन्तरि परिसर), भोपाल के शुभारंभ पर यह कहने की संचालकीय बेबाकी रखते थे कि 'सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की विचारधारा का एक अंग चिकित्सकीय राष्ट्रवाद भी था।' यह एक वाक्य नहीं था, एक सूत्र था। और ऐसे सूत्र उनके संचालन में जब तब मिलते जाते थे। स्वास्थ्य का कार्यक्रम है। आभार के लिए बुलाना है और संतोष तिवारी जी कहते हैं: यदि हम रोगी हैं तो जिन्दगी भार है और अगर निरोगी हैं तो ज़िन्दगी आभार है। अब यह भी सूत्र तो है ही किन्तु यह कार्यक्रम के संयोजन क्रम से भिन्न अपनी विशिष्ट बुद्धिमत्ता दिखाने के हिसाब से कोई अप्रासंगिक या प्रसंगेतर तरह से नहीं आया। Comperer को भारत में सूत्रधार या सूत्रभृत् या सूत्री कहने की जो संस्कृति थी यह उसी की सिद्धि का उदाहरण है और कैसे एक मंच-संचालक भी अपनी अपनी शैली के आधुनिक ब्रह्मसूत्र रच सकता है, कि जैसे पतंजलि योगसूत्र दे गये थे और बौद्ध साहित्य तो सुत्तनिकाय, सुत्तपिटक से भरा पड़ा है, कि जैसे स्मार्त सूत्र प्राचीन काल में होते थे, वैसे ही श्री तिवारी के मंच संचालन में स्मार्ट सूत्र मिलते हैं: 'पर्यावरण का मतलब पूरा वरण, पूरे का वरण। हम खंड का, आधे का वरण करते हैं,' यह बात पर्यावरण उद्यान के भूमि पूजन के अवसर पर तिवारी जी ने कही। अगस्त 1991। या 'यदि उद्देश्य पवित्र हो तो निर्माण एक यज्ञ हो जाता है'। और ऐसे स्मार्ट सूत्रों के दर्जनों उदाहरण उनके संचालन में मिलते हैं। शायद यह सामासिक शैली, यह condensation उनकी मजबूरी का भी नतीज़ा था। संचालक को सावधानी रखनी पड़ती है, सारी फुटेज वो ही खा गया तो कार्यक्रम के मुख्य अतिथि, अध्यक्ष और वक्ता नाराज़ हो जाएंगे। संचालक का एक अलिखित नियम यह है कि वह कभी मंच- मास्टर्स को आउटशाइन न करे। उन्हें हमेशा comfortably superior feel करवाए। आप अपनी gift of the gab का, अपनी वाग्मिता और प्रतिभा का प्रदर्शन करके उन्हें insecure न महसूस कराए। तो उसे वन लाइनर ही गढ़ने हैं। उसकी ब्रीफ यही है कि उसे ब्रीफ ही रहना है। देखन में छोटे लगें घाव करें गंभीर वाली अदा। बस एक पंचलाइन। वो कहते हैं न:ब्रेविटी इज़ द सोल ऑफ विट । तो अपनी इस aphoristic sensibility के कारण संतोष तिवारी जी की मंच संचालन के इतिहास में एक विशिष्ट स्मृति बनी रहेगी।

'छोटे मुँह छोटी बात' शीर्षक जो इस पुस्तक का है, वह इसी 'देखन में छोटे लगें' के अर्थ में लिया जाना बेहतर होगा। कोरोना के अनुभव से गुज़र चुकी हमारी पीढ़ी अब छोटे को हल्के में लेने की ग़लती नहीं करेगी। और छोटे मुँह की स्पष्टोक्ति उस स्थिति से बहुत बेहतर है जब नाम बड़े और दर्शन छोटे की शिकायत हो। छोटी छोटी गैया छोटे छोटे ग्वाल वाली एक लिलिपुट विधा या जॉनर जो संतोष तिवारीजी ने विकसित कर दिखाया है और इतने व्यवस्थित तरह से उसे पुस्तक का आकार दे दिया है, उससे उम्मीद बँधती है कि साहित्य में इसका भी नोट लिये जाने का आरंभ होगा। वे मंच संचालन में जो मौलिकता लाये, उससे उन्हें इस विधा को साहित्य की विधा बना देने का श्रेय रहेगा और इस अर्थ में वे इस विधा के पितृ-पुरुष की तरह पहचाने जायेंगे। शूमाखर ने 'स्माल इज़ ब्यूटिफुल' का सिद्धांत इसी शीर्षक की अपनी पुस्तक में दिया था, पर उसे साहित्य में सत्य सिद्ध करने का काम तिवारी जी ने कर दिखाया है। जीवन में कभी कभी छोटी छोटी बातें ही याद आती है। 'न जाने क्यों होता है ये जिंदगी के साथ/अचानक ये मन किसी के जाने के बाद/करे फिर उसकी याद। छोटी छोटी-सी बात'। अब जैसे कार्यक्रमों में आभार प्रदर्शन कितनी छोटी-सी बात है। बहुत औपचारिक। बल्कि उस वक़्त तक तो लोग उठने लगते हैं। पर उसी वक्त संतोष तिवारी जी कार्यक्रम की स्पिरिट से जोड़ते हुए कुछ ऐसा बोलते हैं और इतनी बार इतने अलग अलग तरह से बोलते हैं कि तब पता लगता है कि 'लघु न दीजिये डारि' का संदेश इसीलिए दिया गया होगा कि तिवारी जी ऐसी पंक्तियां कभी ड्राप करने आयेंगे: 'धन्यवाद और आभार ऐसे सिक्के हैं जिनसे हम अपने सामाजिक होने का मूल्य चुकाते हैं, ''या एक दूसरे अवसर पर यद्यपि आज का कार्यक्रम न्यायपालिका से सम्बद्ध है पर माहौल आज वाद का, विवाद का या प्रतिवाद का न होकर केवल धन्यवाद का है।'' या 'प्रदर्शन आंदोलनों का एक अभिन्न अंग होता है। आज भी संघ प्रदर्शन से तो जुड़ना चाहता बात पर। है मगर आभार प्रदर्शन के माध्यम से।' इसलिए मैं कहता हूँ कि छोटी-सी, गागर में सागर भरने की कला में तिवारी जी दक्ष हैं।

एक दूसरी ऐसी ही गतानुगतिकता दीप प्रज्वलन की बन गई है। थोड़ी ceremonious। थोड़ी रिचुअलिस्टिक, लेकिन तिवारी जी उसमें भाव की जो मार्मिक-सी दीप्ति भरते हैं और उसे कार्यक्रम की contextuality से जोड़कर जो आभा पैदा करते हैं, वह असाधारण है। एक दृश्य देखें। राष्ट्रीय फिल्म महोत्सव का कार्यक्रम है। वहां वे यह कहते हैं: creation is light and shadow both, or else no picture is possible. छाया प्रकाश का विरोध

नहीं, गतिरोध नहीं, प्रतिरोध नहीं, अभाव भी नहीं बल्कि उसके प्रभाव और सहयोग से निर्मित प्रकाश की अनुगामिनी सत्ता और साम्राज्य है। शायद इसीलिए लूमियर ब्रदर्स का पहला फिल्म प्रदर्शन देखकर गोर्की हठात् कह उठे – Last night I was in the kingdom of Shadows। लब्बोलुआब यह कि हम छायाओं के साम्राज्य में प्रवेश करें, उसके लिए प्रकाश का आव्हान जरूरी है। तब संतोष जी के शब्द स्वयं ही दीप की तरह नज़र आते हैं:

**हर इक हर्फ सितारा हर एक लफ्ज़ चराग़**
**मैं नूर नूर हुआ उसके हर जवाब के साथ**

और उनके बारे में क्यों न सोचें –

**छोटी छोटी बातों में कितनी सोचें भर भरआती हैं**
**या तो वे बिल्कुल पागल हैं या थोड़े जज्बाती हैं**

भाव हैं उनमें पर उन्हें यह श्रेय भी है कि अपनी कंपीयरिंग में वे कभी नर्वस नहीं दिखे, न अपने होने की क्षमायाचना करते हुए। न कभी सस्ते जोक्स का सहारा लेते हुए। हर कार्यक्रम से पहले उनका स्वयं का शोधकार्य हुआ लगता है। श्रोता– वर्ग कौन रहेगा? कार्यक्रम की टोन और की–मैसेजिंग की पूरी जानकारी ले लेना। वे यह सब इकट्ठा करते हैं और निश्चित रूप से वे बहुत सुसंगठित और व्यवस्थित किस्म के व्यक्ति रहे हैं। तभी तो इतने वर्षों पुराने कंपेयरिंग के अभिलेख उन्होंने सुरक्षित रखे हैं। अन्यथा मेरी तो कई छपी हुई पुस्तकों तक की आखिरी प्रति तक भी मैं गँवा चुका हूँ। कई अखबारों में छपे मेरे लेख तक आज मेरे पास नहीं है, जबकि तिवारी जी ने इतनी पुरानी स्मृतियां भी इतने मेथाडिकली और आर्डरली सहेज के और सँजो के रखे हैं। उन्हें इस पुस्तक के लिए मेरी हार्दिक बधाइयाँ।

–वक्ता अक्षरा पत्रिका के संपादक है।


# कला समय प्रकाशन

● सुरूचिपूर्ण फोर कलर प्रिंटिंग ● आकर्षक गेटअप ●
● नयनाभिराम पेपरबैक में...

- कला समय प्रकाशन द्वारा कला, साहित्य और संस्कृति पर केन्द्रित उत्कृष्ट पुस्तकों का प्रकाशन किया जाता है। हम प्रकाशन के लिए अच्छी पुस्तकों की पांडुलिपियाँ आंमत्रित करते है। चयनित पांडुलिपियों का प्रकाशन लेखक और प्रकाशक की परस्पर सहमति से तय शर्तो के अनुसार किया जायेगा।
- जिन रचनाकारों को अपनी मौलिक अनुदित, संपादित रचनाओं को पुस्तक रूप में प्रकाशन करवाना है। वे कम्प्यूटर पर साफ–साफ अक्षरों में कागज की एक ओर टाइप की हुई पांडुलिपि की सॉफ्ट कॉपी के साथ कला समय प्रकाशन, भोपाल से संपर्क करें।

## विशेष सुविधा

- पुस्तक के लोकार्पण और साहित्यिक मंच पर संवाद, चर्चा आदि की व्यवस्था है।
- प्रकाशित पुस्तक की समीक्षा सुविधा भी उपलब्ध है।
- पुस्तक चयनित ई–पोर्टल (अमेज़न, फ्लिपकार्ट, कला समय ऑनलाईन आदि) पर भी विक्रय के लिये प्रदर्शन की व्यवस्था है।

**आप स्वयं पधारे या संपर्क करें....**

कला समय के गौरवपूर्ण प्रकाशन

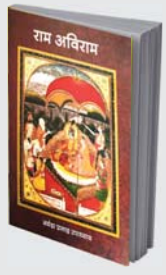


राम अविराम
मूल्य: ₹400

थमे नहीं चरण
मूल्य: ₹400

छोटे मुँह छोटी सी बात
मूल्य: ₹450

0755-2562294, 9425678058
kalasamayprakashan@gmail.com
कार्यालय: जे-191, मंगल भवन, ई-6
महावीर नगर, अरेरा कॉलोनी, भोपाल - 462016 (म.प्र.)

पुस्तक समीक्षा

# 'काव्य समग्र- गीत' के बहाने सृजन में चिति तत्व पर बात

– सोमदत्त शर्मा

**पुस्तक विवरण-**

| | | |
|---|---|---|
| कृति | : | 'काव्य समग्र-गीत' |
| लेखक | : | बी.एल. गौड़ |
| प्रकाशक | : | हंस प्रकाशन, नई दिल्ली |
| मूल्य | : | ₹795/- |
| प्रकाशन वर्ष | : | प्रथम संस्करण : 2023 |

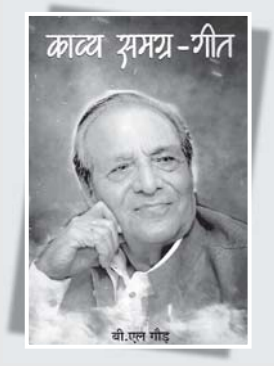


बी.एल.गौड ने कविता, कहानी, नाटक, लेख आदि विभिन्न साहित्यिक विधाओं में लेखन किया है। लेकिन गीत उनकी अपने मन की विधा है। 'काव्य समग्र-गीत' उनका सद्य: प्रकाशित गीत संग्रह है। इसमें खडी बोली के गीतों के अतिरिक्त ब्रज भाषा के भी गीत संकलित किये गये हैं। दोनों तरह के गीतों में गीतकार का मन पूरी तरह खुलता हुआ नज़र आता है। परिस्थिति और परिवेश उनकी सम्वेदना के आश्रय में प्रकट होते हैं।

'गीत' के बारे में कहा जाता है कि उसमें गीतकार की व्यक्तिगत अनुभूतियों का सघन रूप प्रकट होता है। सत्य तो यह है कि सृजन का कोई भी रूप सर्जक की व्यक्तिगत अनुभूतियों की ही अभिव्यक्ति होता है। लेकिन इतना भर ही होता है तो कवि को घोर स्वार्थी व्यक्ति ही माना जाना चाहिये और गीतकार को तो विशेष रूप से क्योंकि गीत में तो इन व्यक्तिगत अनुभूतियों का सघनतम रूप ही सामने आता है पर ऐसा होता नहीं है। परिवेश और परिस्थिति कवि की सम्वेदनाओं को उत्तेजित करते हैं तभी गीत 'व्यक्तिगत' होकर भी सार्वभौमिक विस्तार पाता है।

संग्रह में बी.एल.गौड का एक गीत है जिसमें वे सरस्वती माता से वर मांगते हुए लिखते हैं-

**जब कागज़ पर कलम चलाऊं / तेरा चित्र बना में पाऊं /**
**मुखरित हो ममता, मानवता / जब जब में तेरे गुण गाऊं /**
**झंकृत हो जन जन की पीडा /वीणा में ऐसा स्वर भर दे**

(काव्य समग्र- गीत, पृष्ठ 27)

इन पंक्तियों में कवि को व्यक्तिगत रूप से कुछ नहीं चाहिये। वह सरस्वती मातासे प्रार्थना करते समय यही मांगता है कि उसे ऐसी शक्ति दो जो जन-जन की पीडा को व्यक्त कर सके।

महत्वपूर्ण बात यह है जिस पर विचार किया जाना चाहिये कि कोई सर्जक जैसा रच रहा है वह वैसा ही क्यों रच रहा है ? इसका उत्तर यह है कि सृजन का कोई भी रूप हो उसमें सर्जक के अपने समाज की 'सामूहिक चेतना' ही अभिव्यक्ति पाती है । इसी में सर्जक और सृजन दोनों की सार्थकता मानी जाती है। भारतीय चिंतन में 'सर्व भूत हिते रत:' या 'वसुधैव कुटुम्बकम' जैसे महावाक्य भारतीय समाज के सामूहिक मन के स्वरूप को ही उद्घाटित करते हैं। इस सामूहिक मन या चेतना के लिये संस्कृत भाषा में 'चिति' कहा गया है। हिंदी साहित्य के उद्भट विद्वान और आलोचक डाक्टर कृष्णदत्त पालीवाल 'चिति' को 'साइके' के समरूप मानते हैं। ब्रह्मांड पुराण में 'अगस्त्य-हयग्रीव सम्वाद' में श्री ललिता के सहस्र नामों की चर्चा की गयी है। उनमें श्रीललिता का एक नाम 'चिति' भी बताया गया है। डाक्टर ई. इलुवुलूरि ने अपने 'श्रीसंहिता' नामक ग्रंथ में चिति शब्द की व्याख्या करते हुए इसकी उत्पत्ति 'चि' धातु से बताते हुए उसके मानना ,स्वीकार करना आदि अनेक अर्थ बताये हैं। दुर्गा सप्तशती में भी देवी के स्वरूप का वर्णन करते हुए-

या देवी सर्व भूतेषु चिति रूपेण संस्थिता:- कहा गया है। इसके अनुसार देवी सभी भूतों में चेतना रूप में विद्यमान है,ऐसा विश्वास प्रकट किया गया है। लेकिन इस देवी का स्वरूप सर्वभूतहित की भावना से परिपूर्ण देवताओं द्वारा दी गयी अपनी शक्तियों के दान से विकसित हुआ है। इस प्रकार देवी सभी दैवीय शक्तियों के पुंजीभूत रूप से प्रकट होती है और आसुरी शक्तियों का विनाश करती हैं। गीतकार की भाव सम्वेदना क्या भारतीय समाज के इस सामूहिक मन को ही अभिव्यक्त नहीं कर रही है।

एक और उदाहरण । भारतीय दार्शनिक परम्परा में – मन एव मनुष्याणाम कारणम बंध्य मोक्षयो:–

कह कर मन को ही बंधन और मोक्ष का कारण माना गया है । हमारे सभी अच्छे–बुरे कर्मों के लिये मन को ही जिम्मेदार माना गया है। पतंजलि योग दर्शन के अनुसार मन की स्थिति संकल्प–विकल्पमय होती है। याने कभी ये, कभी वो ?। उपनिषदकार की इस महत्वपूर्ण खोज को भारतीय समाज का साधारण से साधारण व्यक्ति भी मानता है। बात बात में हम उसे यह कहते हुए पाते हैं कि 'इस मन का क्या करें, यही हम सब को नचाये रखता है । मन की स्थिति की इतनी गहरी खोज भारतीय मनीषा की सबसे महत्वपूर्ण खोजों में से एक है। गीतकार इसी मन:स्थिति का सरलीकृत रूप अपने गीत –'मन तू इतना पागल क्यों' है – में व्यक्त करता है–

**मन तू इतना पागल क्यों है / पल पल रंग बदलता क्यों है /**
**देख कोई आभासी छाया / छूने उसे मचलता क्यों है /**

( काव्य समग्र– गीत ,पृष्ठ 40 )

आदि काल से भारत के संत इस ' मन' को साधने की कीबात करते आ रहे हैं । मन को साधने के तमाम उपाय बताते हुए उसे अच्छी आकांक्षाओं के निर्माण की ओर लगा देने की सलाह भी देते रहे हैं।

'चलो मन अब तुम ऐसे देश' शीर्षक गीत में भी बी. एल.गौड इसी भाव विचार को व्यक्त करते हुए लिखते हैं–

**चलो मन अब तुम ऐसे देश / जहां पर नैनन बरसे नेह /**
**जहां पर सीता सी हो नारि / जहां के नर हों सभी विदेह/**

**जहां पर हो निरमल सा नीर / जहां पर हो मुरली की तान /**
**जाहां पर हो राजा का न्याय /**
**जहां हो गंगा जल सा प्यार / जहां हो लक्ष्मण जैसा भ्रात /**

(वही, पृष्ठ 41)

शब्द सीमा के कारण अधिक उदाहरण देना सम्भव नहीं है लेकिन ऐसे अनेक उदाहरण प्रस्तुत किये जा सकते हैं जिनमें गीतकार ने इच्छा प्रकट की है कि

**राम तुम्हारा रूप निहारूं/ या सरयू का तीर /**
**बिना तुम्हारी कृपा दृष्टि के / घटे न मन की पीर /**

(वही, कैसे बनूं कबीर , पृष्ठ 43)

हम सब जानते हैं कि सृजन का कोई भी रूप हो उसमें सृजनकार या तो आदर्श रचता है या फिर या फिर संसार की पुंनर्सृष्टि करता है। राम और कृष्ण तथा कबीर आदि हमारे आदर्श पुरुष हैं तो सांसारिक जीवन में प्रकट होने वाली आशा, निराशा, प्रेम, अवसाद, लौकिक या भौतिक आकांक्षायें भी इन गीतों में प्रकट हुई हैं।'सूरज अब तू अपने घर जा' संग्रह का ऐसा ही गीत है जिसमें गीत कार सूरज से कहता है कि 'सूरज तेरे घोडे अब थकने लगे हैं। तू अब अपने घर जा क्योंकि मैं भी अब अपने घर जाना चाहता हूं जहां–

**'घर पर बाट जोहते होंगे/ कुछ मेरे अपने'** ( वही ,पृष्ठ 44)

गीत हो या कविता , डाक्टर नगेंद्र के अनुसार, वह बिम्बों से ही प्रभावी बनती है। ये बिम्ब हमारे सामुहिक जीवन और अनुभवों की देन होते हैं । इसी तरह प्रतीकों का विकास भी हमारी सामूहिक चेतना के स्वीकरण का ही परिणाम होता है। बी. एल. गौड के गीत भी इससे अछूते नहीं हैं । 'मन', मंदिर,जगत, ईश्वर, वृन्दावन, कृष्ण, राम, मुरली, गाय, गोवर्धन और दीपक जैसे प्रतीक उसी लोकदृष्टि का परिणाम हैं । लोक ने जिस रूप उनका अर्थ ग्रहण किया है वैसा ही अर्थ कवि भी स्वीकारता है ।'आज कहीं चलने का मन है' (पृष्ठ 36) जैसे अनेक गीत इसके उदाहरण हैं ।

आदि जगद्गुरु शंकराचार्य जगत को मन की सृष्टि मानते हैं और इसीलिये जगत को मिथ्या मानते हैं । इसीलिये उनके वेदान्त दर्शन में 'ब्रह्म सत्यम जगत्मिथ्या' स्वयं में एक महावाक्य है। गीतकार जाने–अनजाने में मन के उसी रूप को स्वीकार करता है। वह बार–बार मन की भूमिका को रेखांकित करता है और लिखता है–

**पारे से भी कहीं अधिक है चंचल अपना मन ।'** (वही , पृष्ठ 64)

जैसे पारा पकडने में नहीं आता वैसे ही मन भी किसी के पकड़ने में नहीं आता। ऐसे अनुभवजन्य अनेक बिम्ब गौड साहब के गीतों में जगह जगह मिलते हैं। मेघों की चादर, बूंदों की झालर (सुनो सिंधु तुम बात हमारी, पृष्ठ 50) यद्यपि इन बिम्बों में मौलिकता का अभाव दिखाई देता है फिर भी इन बिम्बों से गीतों की अर्थवत्ता में विस्तार ही हुआ है।

बी .एल . गौड के गीतों में संसार, संसार की छलनायें, संसार का मिथ्यात्व और इस सबसे ऊपर उठकर उस सत्य को प्राप्त करने की आकांक्षा सर्वत्र दिखायी देती है जिसे भारतीय दर्शनशास्त्र मान्यता देता है।

ऐसा नहीं है कि गीतकार ने अपने गीतों में केवल संसार के मिथ्यात्व को ही गाया है । उसमें अपने संसार के साथ रहने की जिजीविषा अभी भी बरकरार है–

**जाने कैसा वशीकरण है / इन वसंत की रातों में /**
**सारी रात निकल जाती है / भूली बिसरी बातों में /**

(वही, जाने कैसा वशीकरण है , पृष्ठ 51) या

**घर मैं ऐसा एक बनाऊं/**
**बाहर जिसका द्वार खुले /**
**खिड़की एक लगी हो ऐसी /**
**जो नदिया के पार खुले** (वही ,घर मैं ऐसा एक बनाऊं , पृष्ठ 54 )

इनके अतिरिक्त भी कई गीत हैं जिनमें जीवन के प्रति एक रागात्मकता दिखाई देती है। क्यों आती हैं रोज़ हिचकियां , हमने जिसे पुकारा अब तक, तथा भीतर से कुछ टूट गया है आदि ऐसे ही गीत हैं

जिनमें जीवन के राग-विराग, प्रेम-प्रीत, करुणा, अवसाद जैसे भाव अपने सहज रूप में आये हैं। ऐसा ही एक गीत है-

**मुझको भी छूकर धीरे से /कह गयी बात नई /** (वही, पृष्ठ,82)

**'काश कभी लौटे वह संध्या', ( पृष्ठ 88 ) / 'नर्म हथेली'** (पृष्ठ 90)- आदि ऐसे ही गीतों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

संग्रह में एक गीत ऐसा भी है जिसमें जगद्गुरु शंकराचार्य के -ब्रह्म सत्यम जगत्मिथ्या- के सिद्धांत पर कवि ने प्रश्नचिन्ह लगा दिया है। वह कहताहै-

**ब्रह्म से जनमा जगत / जब है नहीं सत्यम /**
**तो भला फिर ब्रह्म भी / कैसे हुआ सत्यम /** (वही ,पृष्ठ 98)

सरलता और सहजता गीत के अन्यतम गुण हैं । गुण इसलिये कि उन्हीं के कारणगीतों की भाषा की गढन ऐसी बन पाती है कि कवि के अंतर्मन के भावों को पाठक तक पहुंचा सके । पाठक की सम्वेदंनशीलता का समानरूप से उभरना गीत के रसास्वादन में सहायक होता है । बी. एल .गौड के गीत इस अर्थ में प्रभावी हैं । उनके गीतों की भाषा लोक जीवन से आती है। आस पास की घटनायें, महाप्राण निराला जैसे व्यक्तित्व तथा आदि शंकराचार्य की दार्शनिकता उनके गीतों के विषय बनते हैं। प्रेम तो सदाबहार विषय है ही।

उनके ब्रज भाषा के गीत भी इससे पृथक नहीं हैं। हां ,बी.एल. गौड स्वयं ब्रजभाषी हैं। उनके पूरे व्यक्तित्व में ब्रज का 'लोक' किस कदर कूट कूट कर भरा है यह उनकी हाल में प्रकाशित आत्मकथा- जो बीता सो अनबीता है- को पढ़कर पता चलता है। इसलिये उनके ब्रजभाषा के गीतों में भी स्थानीय संस्कृति, स्थानीय बिम्ब और स्थानीय प्रतीक अपनी पूरी गरिमा के साथ आये हैं। स्थानीय सम्वेदना को प्रकट करता एक गीत देखें-

**ए बदरा तुम देख रहे जो**
**हमरे लम्बे केस**
**ये हमरे साजन की थाती**
**जो बैठे परदेस**
**कितने सावन बीत गये पर**
**कबहु न भेजी पाती**
**यहां तुम्हारी राधा जा नित**
**मंदिर खैर मनाती**
**हमकू लहतौ कोई रुकमिनी**
**प्रियतम तुमकू भाई**
**गोद बिठाकर तुम सुलझाते**
**वाके लम्बे केस**
**या जीवन कौ कौन भरोसौ**
**का दिन आंख लगै**
**जे शरीर तौ माती कौ प्रिय**
**माटी जाय मिलै**
**हमरी तौ इच्छा बस इतनी**
**सुन लै बंसी बारे**
**जर जर जावें अंग हमारे**
**पर न जरें ये केस ।**

इस गीत में, एक स्त्री का पति परदेस गया हुआ है। बाहर जाकर उसने अभी तक कोई चिट्ठी नहीं भेजी है। उसे आशंका है कि कहीं पति किसी दूसरी स्त्री के चक्कर में तो नहीं पड गया। वह मनौती मागने मंदिर जाती है। भगवान श्रीकृष्ण से पति के सकुशल वापसी की प्रार्थना करती है। इस गीत में वह अपनी सौत के लिये सौत शब्द का उपयोग नहीं करती बल्कि 'रुकमिनी'शब्द का उपयोग करती है । यह ब्रज की अपनी संस्कृति के प्रतीक हैं जो वहां के लोक और संस्कृति से आते हैं। ब्रज की संस्कृति में राधा-कृष्ण-रुक्मिनी आदि शब्द वहां के कण-कण में बसते हैं। कोई भी ब्रज भाषा का कवि इनकी उपेक्षा नहीं कर सकता। बी. एल. गौड ने अपने ब्रजभाषा गीतों में स्थानीय लोक संस्कृति को पूरा सम्मान दिया है । इस छोटे से समीक्षात्मक लेख में गौड साहब के ब्रज भाषा के गीतों के वैशिष्ट्य को समाहित कर पाना सम्भव नहीं है । उस पर अलग से लेख की जरूरत होगी ।

सम्पर्क- आई -94, गोविंद्पुरम,
गाज़ियाबाद (उ. प्र.) पिन -201013
मो. 8377003475

## पुस्तक - समीक्षा

'कला समय' पत्रिका में कला, संस्कृति, साहित्य, इतिहास पुरातत्व, लोक साहित्य, पर्यटन, गीत, ग़ज़ल, कविता एवं समसामयिक इत्यादि विषयों पर प्रकाशित पुस्तकों की समीक्षा प्रकाशित की जाती है। प्रकाशनार्थ समीक्षा के साथ पुस्तक की एक प्रति भेजना आवश्यक है। साथ ही समीक्षा दो पृष्ठों से अधिक की नहीं होना चाहिए।

**- संपादक**

पुस्तक समीक्षा

# घोटुल से बिग बॉस तक का सफर

– डॉ. अरूण कुमार वर्मा

**पुस्तक विवरण–**

| | | |
|---|---|---|
| कृति | : | 'बिग बॉस एक नया घोटुल' |
| लेखक | : | अरूण कुमार सिन्हा |
| प्रकाशक | : | रुद्रा पब्लिकेशन बिलासपुर (छ.ग.) |
| मूल्य | : | ₹200/– |
| प्रकाशन वर्ष | : | प्रथम संस्करण : 2020 |

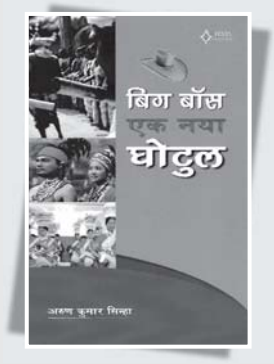


'बिग बॉस एक नया घोटुल' श्री अरुण कुमार सिन्हा जी की पुस्तक जिसका प्रथम संस्करण 2020 में रूद्रा पब्लिकेशन, विलासपुर से प्रकाशित हुआ है। लेखक इलेक्ट्रिकल इंजीजियर होने के साथ कामगारों के बीच रहते हुए सेवानिवृत्ति के उपरांत सात सालों तक सेवा विस्तार के बाद साहित्य की सेवा में स्वयं को समर्पित कर तीन पुस्तकों की रचना की हैं। लेखक का अध्ययन विस्तीर्ण है। उन्होंने भारतीय परंपराओं का अध्ययन कर वर्तमान से जोड़ने का सराहनीय कार्य किया है। उसी परिणामों का प्रतिफल प्रस्तुत पुस्तक है। 'घोटुल' संथाल जनजातियों की एक प्राचीन परंपरा है, लेखक वहाँ से 'बिग बॉस' के रास्ते इंग्लैंड में 'बिग ब्रदर', अमेरिका में 'हाउस आफ अमेरिका', स्विटजरलैंड में 'स्विस सुशी' के 'स्पिलिट विला' की पड़ताल के साथ आधुनिकता के नशे में आत्मकेन्द्रित होते मानव की उद्देश्यहीन दौड़ को रेखांकित किया है। यह पुस्तक ऐसे समय में आई है जब जनजातीय परंपराएं अंतिम सांसे गिन रही हैं और हम आधुनिकता का दावा करते हुए उन्हीं परंपराओं को नए बोतल में स्वीकार करते हुए खूब वाहवाही लूट रहे हैं जिसे समाप्त करने के लिए बहुत सारे अभियान और योजनाएं उस दौर में चला रहे थे। यह तो उसी तरह से है जैसे मोटा आनाज खाने के कारण ग्रामीण पिछड़े कहलाते थे आज वही 'पॉपकान' बन के हमारी शानोशौकत का प्रतीक बन गया है। पुस्तक पुरानी परंपरा बनाम नई जगमगाती रोशनी के बीच हमारे अस्तित्व की लड़ाई लड़ रही है। यहाँ नये, पुराने का टकराव नहीं है बल्कि दोनों के बीच की साम्यता का बहुत ही बारीकी से मूल्यांकन किया गया है। पुस्तक न कहीं पुरानी मान्यताओं का आग्रह करती नजर आती है और न ही नये के प्रति कोई झुंझलाहट है। यह पाठक को दोनों को समझने का अवसर प्रदान करती है।

घोटुल से बिग बॉस तक का सफर आलेख के माध्यम से 'बिग बॉस एक नया घोटुल' पुस्तक के कथ्य को समझने और उसकी विशेषताओं को प्रकाश में लाने का एक प्रयास है। लेखक संस्मरणात्म शैली में अपने बारह–तेरह वर्ष के आयु की स्मृति को वर्तमान के साथ जोड़ने का प्रयास है। आज 'घोटुल' लगभग समाप्ति की कगार पर है। कम ही लोग उस परंपरा को जानते हैं। यह पुस्तक जहाँ एक ओर 'घोटुल' जैसी प्राचीन परंपरा से हमारा परिचय करती है वहीं दूसरी ओर आधुनिकता के दंभ में मस्त नया होने की घोषणा के तार को प्राचीन परंपरा से जोड़कर उसके महत्व को बढाने का कार्य करती है। संथाल परगना और 1855 के संथाल विद्रोह के विषय में हम अक्सर सुना और पढ़ा करते हैं। संथाल का मुख्यालय दुमका है और इस इकाई में झारखंड के छः जिले हैं–गोड्डा, देवघर, दुमका, जामताड़ा, साहिबगंज और पाकुड़ शामिल है। विवेच्य पुस्तक संथाल की 'घोटुल' परंपरा से हमारा परिचय कराती है और वर्तमान में भारत में 'बिग बॉस' इंग्लैंड में 'बिग ब्रदर', अमेरिका में 'हाउस आफ अमेरिका', स्विटजरलैंड में 'स्विस सुशी' जैसे पापुलर क्लबों को उसका स्रोत बताते हुए उनसे महत्वपूर्ण बताया गया है। लेखक लिखता है– ''बिग बॉस के घर और घोटुल के कमरे में फर्क क्या है? फर्क है तो प्रेम का। सच्चाई और ईमानदारी का। जहाँ घोटुल के निवासियों के बीच प्रेम भाव और सामंजस्य बढ़ता है वहाँ बिग बॉस के लोग आपस में कुत्ते–बिल्लियों की तरह एक दूसरे से लड़ते हैं।'' (बिग बॉस एक नया घोटुल–पृष्ठ 20)

विवेच्य पुस्तक 'घोटुल' से हमारा परिचय कराती है। जनसंचार क्रांति के युग में इलेक्ट्रॉनिक्स मीडिया बाजारवाद को ही प्राश्रय दे रहा है लेकिन प्रिंट मीडिया वर्तमान में भी संतुलित रहते हुए परंपरा और नवीनता के बीच सामांजस्य स्थापित किए हुए है। इस परंपरा को प्रकाश में लाने में यह पुस्तक बहुत ही उपयोगी साबित होगी। लेखक लिखता है– 'यह बहुत पुरानी परंपरा है। यहाँ पंद्रह से बीस साल ही लड़कियाँ आती हैं और अट्ठारह से पच्चीस साल के लड़के। हर किसी को यह अवसर दो बार मिलता है। चार–चार महीने के लिए। हो सकता है कि यह उम्र की सीमा पहले और कम रही हो। एक बहुत बड़ा कमरा होता है। इसमें सभी लड़के और लड़कियाँ एक साथ रहते हैं, वर्जनामुक्त। दरसल घोटुल का यही पहला उद्देश्य है कि वे लोग वैवाहिक जीवन के लिए तैयार हों, एक दूसरे के शरीर के रहस्यों को समझ सकें। इसे आप 'यूथ डोरमेटरी' कह सकते हैं। दो तीन बूढ़े आदमी 'घोटुल' की देखभाल करते हैं। इसे आप एक तरह से 'टीचिंग इंस्टीच्यूट' कह सकते हैं। यह उन्हें अपनी सभ्यता और संस्कृति को समझने तथा उससे सामंजस्य स्थापित करने के लिए तैयार करते हैं।'' (बिग बॉस एक नया घोटुल–पृष्ठ 17) ये रही 'घोटुल' की दुनिया। लेखक इस परंपरा की और जानकारियों के साथ–साथ वहाँ के मेले और मेले में समूह नृत्य का दृश्य, वहाँ के देवता एवं उस परंपरा से जुड़ी शब्दावली

और बहुत सारी जानकारियों से परिचय पुस्तक से कराता है।

लेखक 'बिग बॉस' और 'घोटुल' की तुलना करते हुए लिखता है कि जहाँ %बिग बॉस% में सिर्फ पैसे का खेल है, जीवन की रंगीनियत और आरामदेय व्यवस्था है वहीं 'घोटुल' में पूँजी का कोई समावेश नहीं है। जनजातीय अर्थव्यवस्था एक उत्पादन उपयोग आर्थिकी होती है। इसमें अधिशेष अर्थ का कोई स्थान नहीं होता। संचय इसका चरित्र नहीं है। यही हमारी प्राचीन परंपरा है। जिस जीवन शैली की ओर हम बढ़ते जा रहे हैं, वह कहने और सुनने के लिए ऐशोआराम का जीवन है सच्चाई तो यह है कि वह हमें दु:ख के सागर की ओर ले जा रहा है। जीवन में सिर्फ संत्रास ही संत्रास है पूर्णता का कोई नामों निशान नहीं है। पुस्तक में वर्णित है- ''काश लोग देख पाते कि 'बिग बॉस' की जगमगाती जागती एल.ई.डी. लाइटों के पीछे कितना अंधेरा बिखरा हुआ है। 'घोटुल' के कमरे के अंधेरे को भी शर्मिन्दा करता हुआ। जंगल दुनिया और घोटुल कल्पनातीत है।'' (बिग बॉस एक नया घोटुल-पृष्ठ 20)

आदिवासी संस्कृति प्रकृति के बहुत करीब है। आदिमानव का मतलब हमारा प्राचीनतम मानव । परंतु आज उलट इसकी परिभाषा है। इसे हम जनजातीय संस्कृति कह कर इससे अपने को अलग करते हैं। सिर्फ अलग ही नहीं अपने को सभ्य और आधुनिक भी करार देते हैं। आधुनिकता की इसी होड़ ने हमारे आदिम जीवन मूल्यों को नष्ट किया है। प्राचीन काल में हम प्रकृति के जितने करीब थे आज उतने ही दूर होते जा रहे हैं। जंगल के स्थान पर उग रहे हैं कंकरीट के जंगल। लेखक भी इस बात को लेकर चिंतित है। वह लिखता है- पेड़ों के जंगल कंकरीट कि जंगल बन गए हैं। कंकरीट के ये जंगल जहाँ दिन हो या रात बिना अनुमति के रोशनी की हल्की भी किरणें प्रवेश नहीं कर सकतीं। इनकी दीवारें जंगल के पेड़ों और पत्तियों की तरह पारदर्शी नहीं होती, सारे गुनाहों, अनाचारों और चीख पुकारों को अपने अंदर जब्त कर लेती हैं। जंगल के हिंसक पशुओं से ज्यादा खूंखार इंसान अकेले या पूरा गिरोह बनाकर इसमें निश्चिंत होकर घूमते और शिकार करते हैं। सच कहा जाय तो इंसानों की तुलना जानवरों से करना जानवारों का अपमान है।'' (बिग बॉस एक नया घोटुल पृष्ठ 27) संथाल परगना की माटी में जन्मी कवयित्री %निर्मला पुतुल विलुप्त होती संस्थाली संस्कृति पर चिंचित हैं। वे लिखती हैं-

**''उठो कि अपने अंधेरे के खिलाफ उठो**
**उठो अपने पीछे चल रही साजिश के खिलाफ**
**उठो कि तुम जहाँ हो वहाँ से उठो**
**जैसे तूफान से बवंडर उठता है**
**उठती है जैसे राख से दबी चिंगारी।**
**देखो अपनी बस्ती के सीमांत पर**
**जहाँ धराशायी हो रहे हैं पेड़**
**रोज नंगी होती बस्तियाँ**
**एक रोज मांगेंगी तुमसे**
**तुम्हारी खामोशी का जवाब।''**

लेखक विवेच्य पुस्तक में 'घोटुल' के साथ-साथ सभ्य लोगों के 'घोटुल' के विषय में भी जानकारी देता है। यह सब जगह रूप बदल कर मौजूद है। किसी को असभ्य कह कर नकार दिया जाता है तो कहीं सभ्य समाज का खेल मानकर स्वीकार कर लिया जाता है। लेखक ड्राइवर के द्वारा सभ्य समाज के 'घोटुल' को भी इस पुस्तक में स्थान दिया है। संतान प्राप्ति के लिए सभ्य स्त्रियों का मंदिर में जाना भी लेखक ने 'घोटुल' ही माना है- ''घोटुल हर जगह मौजूद है। बस अपना रूप बदलकर, नये-नये मेकअप में। क्या आप को मालुम नहीं पितृसत्ता समाज में पुरुष के नि:संतान होने पर उसे नामर्द कहते हैं। यह कितनी बड़ी विभीषिका है। और इस समाज में केवल पुरुष ही अपमानित नहीं होता स्त्री भी उससे कई गुना अपमानित होने को अभिशप्त है.....संतान प्राप्ति के लिए अपनी सीमा में रहकर दोनों कई धार्मिक स्थानों पर जाकर पूजा अर्पण करते हैं। लेकिन संतान की प्राप्ति नहीं होती है। यह बात सभी धर्मों में सत्य है। कोई तीर्थयात्रा करता है। कोई मजार जाकर चादर चढ़ाता है। फिर पुत्र प्राप्ति के लिए ऐसे ही प्रयत्न और अनुष्ठान कराते हैं जहाँ उन्हें संतान प्राप्ति के लिए अन्य विकल्पों को भी अपनाना पड़ता है।'' (बिग बॉस एक नया घोटुल-पृष्ठ 46) लेखक ने इसे भी घोटुल का एक रूप माना है।

लेखक ने साठ साल की घटना को वर्तमान से जोड़ने में सफलता तो पाई है साथ ही उसने महाशक्ति अमेरिका की जीवन और संस्कृति से पाठकों का परिचय भी कराया है। वहाँ के होटल की रंगीनियत, देह व्यापार की परंपरा, एकाकी जीवन के साथ-साथ जुए की परंपरा का भी वर्णन किया है। आदिवासी मेले में लेखक के साथ का कर्मचारी पैसा लगाया था और अमेरिका में खुद लेखक ने पैसा लगाया और दोनों जगह हार मिली। वहाँ के होटलों की रौनक के संदर्भ में लेखक लिखता है- ''रात का बाजारे हुश्न दिन को कब्रिस्तान की सी खामोशी में बदल जाता है।'' सुविधा के नाम पर वहाँ अभाव है। सैलून, पब्लिक ट्रांसपोर्ट की कमी है। टेलर नहीं होते। सारा काम मशीन के हवाले है। अमेरिका के होटल की दासतां लेखक की जबानी सुनिए- ''अमेरिका के होटलों को देखकर हमें अपनी हास्पीटलटी सेक्टर और होटलों पर बहुत गर्व होगा। वहाँ प्रवेश करने पर कोई सलाम होंठकर दरवाजा खोलने वाला नहीं है। कोई सामान उठाने वाला नहीं है।... विदेशों की सारी रंगीनियों की कहानियाँ झूठी हैं। सारे जहाँ से अच्छा हिन्दुस्तां हमारा।'' (बिग बॉस एक नया घोटुल-पृष्ठ 34)

निष्कर्षत: सिन्हा जी ने 'बिग बॉस एक नया घोटुल' पुस्तक के द्वारा प्राचीन भारतीय संस्कृति के अनछुए पहलुओं को उकेरने का कार्य किया है। किस तरह से प्राचीनता का हम खंडन करते हुए नये रूपों में उसी को अच्छा बताने का ढोंग रच रहे हैं लेखक इसका भी भंडाफोड़ करता है। यह सिर्फ भारत की ही नहीं हर देशों की कहानी है। लेखक ने 'घोटुल' परंपरा के माध्यम से यह भी सिद्ध करने का प्रयास किया है कि परंपराएं घूम फिरकर फिर वहीं आ जाती हैं जहाँ से हम चलना शुरू करते हैं। इस पुस्तक में नये का स्वागत है तो पुराने के जाने का गम भी है। अतीत, वर्तमान, देश और विदेश सभी के चित्रण में लेखक को सफलता मिली है। इसका प्रमुख कारण है शब्दों का चयन और उसका प्रवाह। कथा की गतिशीतला में कहीं भी ठहराव नहीं है। इस पुस्तक के माध्यम से लेखक वर्तमान के मुहाने पर खड़ा होकर अतीत के सामाजिक, सांस्कृतिक और मानवीय मूल्यों की महत्ता को ही नहीं बताता बल्कि भविष्य के लिए उसे संजोने का कार्य भी किया है। पुस्तक छोटे और बेहतरीन कलेवर में जनजातीय चित्रों के आकर्षण से पाठकों को अपनी ओर आकर्षित कर रही है। यह पुस्तक लोगों में चिंतनशीलता को बढाने के साथ ज्ञान और आनंद के संचार में सहायक सिद्ध हेगी ऐसा मेरा विश्वास है।

बेलहरामऊ, राजाबाजार-जौनपुर (यू.पी.)-222125
प्रवक्ता (हिन्दी) जवाहर नवोदय विद्यालय पदमी,
मंडला (म.प्र.)-481661
संपर्क -9754128757

पुस्तक समीक्षा

# अशोक अंजुम की गजलों में जीवन की तल्ख सच्चाइयाँ झाँकती है

– अनिरुद्ध सिन्हा

**पुस्तक विवरण–**

| | | |
|---|---|---|
| कृति | : | ग़ज़लकार अशोक 'अंजुम' |
| लेखक | : | बालस्वरूप 'राही' |
| प्रकाशक | : | सागर प्रकाशन, शाहदरा, दिल्ली |
| मूल्य | : | ₹300/– |
| प्रकाशन वर्ष | : | प्रथम संस्करण : 2023 |

अशोक अंजुम मन की गहरी परतों को उघारने वाले ग़ज़लकार हैं। संगीतात्मकता और यथार्थ का संवेदनशील वर्णन इनकी लेखन-शैली की विशेषता है। गज़लों में व्यंजना भरने की अपनी शैली है जिनमें रोचकता भी है और पठनीयता भी। यही कारण है कि इनकी ग़ज़लें संवेदना की सूक्ष्मता और पारदर्शिता के लिए जानी जाती हैं। कथन स्पष्ट होते हैं। कलात्मकता की अपेक्षा अपनी बात को साफ-साफ कहने की प्रवृति अधिक है। सामान्य जीवन के सरस चित्र मिलते हैं। इनके यथार्थ वर्णन की मार्मिकता का आधार भोगे हुए जीवन में हृदय की अनेक प्रकार की वृत्तियों का स्वाभाविक चित्रण है। सिने लेखक मनोज मुंतशिर भी लिखते हैं अशोक अंजुम को पढ़ना, एक आम इंसान के माथे पर बनती-बिगड़ती सिलवटों को पढ़ने जैसा है। वो कुछ ऐसा नहीं लिखते, जो अलौकिक हो, गैर-दुनियायवी हो, इसी धूल-मिट्टी से जन्मा, इसी में लिपटा और इसी कि बू-बास लिए हुए है। पुस्तक गजलकार अशोक अंजुम के सम्पादक बालस्वरूप राही स्वयं एक समर्थ गजलकार और गीतकार हैं। ग़ज़लों का चयन उन्होंने काफी सूझ-बूझ के साथ किया है। अपने संपादकीय में उन्होंने लिखा भी है अशोक जी ग़ज़ल कहने वाले कवियों में एक ऐसे सम्मोहक ग़ज़लकार हैं, जिनके शेर गजलप्रेमियों का तकियाकलाम बन चुके हैं। उनकी ग़ज़लों में मनमोहक सहजता, सरलता और सम्मोहन है। अशोक जी की सबसे बड़ी उपलब्धि ताज़गी और सादगी है।

राही जी की बातों से शत-प्रतिशत सहमत हुआ जा सकता और उनको केंद्र में रखकर बहस भी की जा सकती है। ग़ज़लों के कथ्य के हिसाब से उनके कथ्य गंभीर काल-चिंतन और काव्य-चिंतन को उद्भासित करते हैं। पुस्तक की पहली गज़ल अशोक अंजुम की सृजनात्मक कल्पना और स्वस्थ भावबोध का परिचय करनेवाली है। यह ग़ज़ल आशावाद का उदाहरण है जिसमें अंजुम की मान्यता है कि समर्पण में स्वस्थ अभिव्यक्ति हमें ज़िंदा रखती है–

हर एक सम्त है तेरा ही रंगो-बू मौला बता कहाँ पे करूँ जाके जुस्तजू मौला

यहाँ पर मौला रदीफ के रूप में आया है। इसे प्रतीक माना जाए, प्रार्थना नहीं। संग्रह की सारी ग़ज़ले मानवीय मूल्यों की रक्षा के लिए आत्मविकास का मार्ग तथा प्रकाश वीथी पर चलने के लिए प्रेरित करती हैं। इस पुस्तक की ग़ज़लों का सौंदर्य दो बातों में है। पहला शिल्प और दूसरा कहन का उनका एक अपना अंदाज़। गज़ल के शेरों के भीतर व्यंग्य और करुण लय की एक गहन अंतर्धारा का प्रवाह हम महसूस करते हैं। ग़ज़लों में एक बायुक्त रूपक तो उपस्थित होता है लेकिन कहीं-कहीं पर विरोध का खुला संकेत भी महसूस होता है। इससे प्रतीत होता है अशोक अंजुम ग़ज़ल की आत्मा तो बचाते ही हैं, आज की विसंगत यथार्थवादिता का विरोध भी अपनी सांकेतिकता से करते हैं।

**थाम कर रक्खो जिगर को, हौसला न टूट जाए ज़िन्दगी का ज़िन्दगी से वास्ता न टूट जाए**

**रोशनी, धूप, हवाओं का असर होता है पत्थरों पे भी सदाओं का असर होता है**

**खुशबुओं की बारिश है, बंदगी के टुकड़े हैं ये गजल के शेर हैं के रोशनी के टुकड़े हैं**

खाना-पीना, हँसी-ठिठोली, सारा कारोबार अलग जाने क्या-क्या कर देती है आँगन की दीवार अलग अशोक अंजुम ने अपना गुज़ल-लेखन अन्तर्मन की अनुभूतियों और सूक्ष्म कल्पनाओं का सामाजिक जीवन परिवेश से प्रेरित होकर किया है। जहाँ प्रेम के साथ विरोच भी देखने को मिलता है। ऐसे भी लेखन में सूक्ष्म अनुभूतियों और कल्पनाओं का महत्व सभी वादों में स्वीकार किया गया है।

इस पुस्तक की एक बड़ी विशेषता इसमें सात कोरोना काल की गज़लों का होना भी है, जो इन्हें मानवीय बनाती हैं। ये ग़ज़लें पुस्तक के एक अलग खंड में हैं। अशोक अंजुम की सामाजिक चिंता स्पष्ट है, वह चिंता ग़ज़लों में बहुत साफ शब्दों में व्यक्त हुई है, पूरे सथाव और कलात्मकता के साथ। हम कह सकते हैं पुस्तक की गुजले आज की सच्चाइयों को बहुत तीखेपन के साथ हमारे समक्ष रखती तो है, मगर प्रेम का दामन भी पकड़े रखती है।

समीक्षक : अनिरुद्ध सिन्हा गुलजार पोखर, मुंगेर (बिहार) 811201
मोबाइल-7488542351

आयोजन

अंतराष्ट्रीय विश्व रंग महोत्सव की गतिविधियों के अंतर्गत एवं
जी.पी. बिड़ला संग्रहालय भोपाल ( म.प्र. )के तत्वाधान में ....

# कला समय के 27 वर्ष एक अवलोकन प्रदर्शनी एवं पुस्तक लोकार्पण

## मनुष्यता को बचाने के लिए विज्ञान नहीं, कला साहित्य-संस्कृति से समाज को जोड़ना होगा : संतोष चौबे

साहित्य, कला और संस्कृति का संवर्धन-संरक्षण करना समाज का दायित्व है, सरकार का नहीं। मनुष्यता को बचाने के लिए विज्ञान नहीं, कला साहित्य और संस्कृति से समाज को जोडना होगा। विज्ञान में तकनीक का प्रयोग कर जीवन में आगे बढना आवश्यक है, लेकिन यही अंतिम ध्येय नहीं होना चाहिए। यह बात वरिष्ठ कवि-कथाकार संतोष चौबे ने कही। वे बिरला संग्रहालय सभागार में आयोजित 'कला समय' पत्रिका के 'अरुण तिवारी विशेषांक' एवं पुस्तक 'सृजन यात्री : अरुण तिवारी' (संपादक बलराम गुमास्ता)के लोकार्पण अवसर पर बोल रहे थे। मुख्य अतिथि वरिष्ठ कथाकार, संपादक मुकेश वर्मा ने इस विशेषांक को साहित्य के लिए महत्वपूर्ण अवदान बताया संचालन घनश्याम मैथिल अमृत ने किया। कला समय के संपादक भंवरलाल श्रीवास ने कला समय पत्रिका की सृजन यात्रा पर प्रकाश डाला और अतिथियों का पुष्पगुच्छ भेंट कर स्वागत किया। सारस्वत अतिथि वरिष्ठ कवि और पत्रिका तथा पुस्तक के संपादन से जुड़े बलराम गुमास्ता ने पुस्तक और पत्रिका से जुड़े रोचक अनुभव प्रस्तुत किए। कला समीक्षक विनय उपाध्याय ने भी अपने संपादन अनुभव साझा किए। इस अवसर पर वरिष्ठ साहित्यकार व 'प्रेरणा' पत्रिका के संपादक अरुण तिवारी ने पत्रिका की पृष्ठभूमि और उसके समय-समय पर निकाले गये चर्चित विशेषांक को एवं पत्रिका द्वारा उठाये गये महत्वपूर्ण मुद्दों के बारे में संक्षेप में बताया। कार्यक्रम के साथ ही संग्रहालय में चल रही कला समय की प्रदर्शनी का भी इसी के साथ समापन हो गया। इस अवसर पर संग्रहालय के क्यूरेटर बालकृष्ण लोखंडे ने सभी का आभार प्रकट किया। कला और साहित्य प्रेमी बड़ी संख्या में उपस्थित थे।

कला संस्कृति साहित्य एवं समसामयिक पर यह पत्रिका 29 जनवरी वर्ष 1998 से ''शब्द से शब्द तक कलाओं का कृतिकर्म'' जिसके रेखाचित्र श्री देवीलाल पाटीदार जी और आवरण चित्र सुप्रसिद्ध कलाकार जनगढ़सिंह श्याम द्वारा रूप से लेकर धरोहर के संग्राहक और शिल्पकार पर केन्द्रित अंक फरवरी-मार्च तक दिया गया तदनंतर अपने में नवीन शोधपरक गतिविधियों के लिए चिर-परिचित अंदाज में प्रकाशमान हैं। इसमें निरंतरता के आयामों में अपनी कला जगत में वैशिष्ठ पैठ से परिपूर्ण विदूषियों ने आलेखों से सिंचित करने में योगदान दिया है इसके लगभग 124 अंक विमर्श शोध की ज्ञान पिपासा में महत्वपूर्ण योगदान को इस विधा में फलीफूलित किया है। ऐसे आवरणों को एक माला में पिरोकर सहेजने और संवारने में संपादक श्री भँवरलाल श्रीवास जी अविरल सहज सरलता से सतत निष्काम भाव से आपका समर्पण दृष्टव्यता का

द्योतक हैं इसके लिए इस जगत से जुड़े सभी विद्वतजन आपके इस योगदान के लिए नमन करते हैं। कला समय को जी पी बिड़ला संग्रहालय की प्रदर्शनी दीर्घा में लाकर अपने को गौरवान्वित महसूस कर रहा है जिसमें अपनी कला संस्कृति के विभिन्न आयामों को अपने यहाँ दर्शकों और शोधकर्ताओं के लिए संजीवनी का कार्य करने में सहायक रहने, बहुतेरे विषयों पर प्रकाशनों के साथ-साथ पुरातात्विक विधा से संबंध कई अंकों में सारगर्भित जानकारियाँ समेटे रही है इन अमूल्य विषयों पर देश के आलेखकों, हुनर विधियों, समय की धरोहरों, संस्मरणों, कविताओं, नाटकों, अद्वैत विमर्शों, सांस्कृतिक विरासतों, चित्रकलाओं, सामाजिक और सांस्कृतिक तानोंबानों तक ही सीमित न रहकर कई रहस्यों के पर्दाफाश तथ्यों से परिपूर्ण इन पत्रिका को अपने संग्रहालय की ग्रंथालय दीर्घा में स्थान देकर अपने आप में अभिभूत है। कला समय के 124 अंक अपनी अपनी सानी रखते हैं इन सभी में अपनी छाप को कैसे अपने आंचल में सहेजकर विदूषियों के लिए आंगन तैयार करूं मंथन में आ जाता है। जिसे समय ही बता सकेगा कि कब कब विषयपरक व्याख्याओं पर केन्द्रित होया जाय। वर्तमान में समस्त अंकों में धारित विशेषज्ञों से विनम्र विनती से क्षमा चाहते हुए यह शुरुआत, काष्ठशिल्प, चित्राकलाओं, अनुपयुक्त घरेलू सामग्रियों से निर्मित प्रतिबिंबों, वाद्ययंत्रों, मुद्रांकों पर विषय सामग्रियों को लेकर चित्रों के माध्यम से इस पत्रिका को जनसामान्य में रखा गया है।

**सांस्कृतिक पत्रिका कला समय के 27 वर्ष की निरंतरता पर पत्रिकाओं के अवलोकन/प्रदर्शनी कार्यक्रम**

जी पी बिडला संग्रहालय मे अंतरराष्ट्रीय विश्व रंग महोत्सव की गतिविधियों मे सांस्कृतिक पत्रिका कला समय के 27वर्ष की निरंतरता पर पत्रिकाओं के अवलोकन/प्रदर्शनी कार्यक्रम का शुभारंभ हुआ इस शुभारंभ के दीपप्रज्वलन श्री बलराम जी गुमास्ता, डॉ. लक्ष्मी नारायण पयोधि, अरूण तिवारी जी, डॉ. नारायण व्यास, श्रीराम माहेश्वरी जी, श्री शशिकांत लिमये, संतोष तिवारी जी, डॉ. पूजा सक्सेना, श्रीमती साधना व्यास अरूण सक्सेना, कुशवाहा, अनामिका के साथ पत्रिका संपादक श्री भंवरलाल श्रीवास जी ने के रहते हुआ। पत्रिका मे समाहित प्रकाशित संदर्भ आलेखों चित्रकलाओं आदि पर ध्यानाकर्षण के तहत शुभारंभ पर दिनांक 22-23 को 17 वी शती से 19वी शती तक प्रचलित लघुचित्रों की छायाप्रतियों के साथ उनकी बारीकियों के आलेख विभिन्न शैलियों तथा झालावाड़ शैली, गीतगोविंद के मंगल चरण, केशव दास के रसिक प्रिया, मेवाड़ शैली, बसोहली शैली बीकानेर शैली आदिको संग्रहालय में प्रदर्शित किया गया है। 40चित्रों की श्रृंखला है। आयोजन के आगामी चरणों मे 24-25 को शिल्प कला मे भगवान श्रीराम श्रीकृष्ण से लेकर बौद्ध धर्म, सिख धर्म ,इसाई धर्म, मुस्लिम धर्म जैन धर्म आदि पर कला की अनुकृतियाँ और चित्र भी प्रदर्शित किया गया। कार्यक्रम की अवधारणा संग्रहालय के कंसल्टेंट बी. के लोखंडे द्वारा की गई और सहभागिता मे विकास दुबे, अजय पाण्डे और अमित ने निभाई।

रपट - बालकृष्ण लोखंडे
कंस्लटेंट बिड़ला संग्रहालय, भोपाल

पुण्य - स्मरण

# विनम्र श्रद्धांजलि

पिछले दिनों में हिन्दी साहित्य, कला जगत, पत्रकार एवं फोटोग्राफर की बड़ी विभूतियाँ हमसे बिछड़ गई। कला समय परिवार इन सभी को अपने-अपने क्षेत्र में अतुलनीय अवदान को श्रद्धापूर्वक स्मरण करते हुए अपनी विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं।

**- सम्पादक**

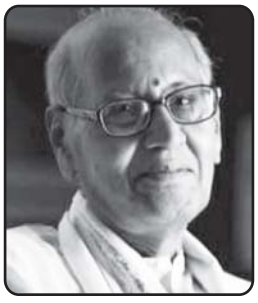

**कमलेश दत्त त्रिपाठी**
वरिष्ठ साहित्यकार, संस्कृतविद्

**प्रभा अत्रे**
वरिष्ठ शास्त्रीय गायिका

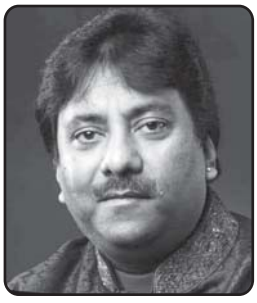

**उस्ताद राशिद खान**
वरिष्ठ शास्त्रीय गायक

**डॉ. धनंजय वर्मा**
वरिष्ठ साहित्यकार एवं आलोचक

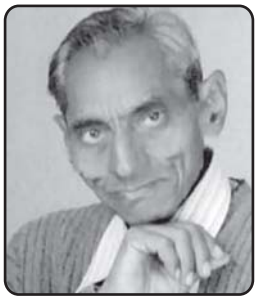

**राधेलाल बिजघावने**
वरिष्ठ साहित्यकार, कवि, समीक्षक

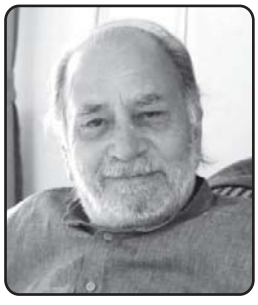

**कृष्ण बख़्शी**
वरिष्ठ गीतकार एवं ग़ज़लकार

**डॉ. मलय**
वरिष्ठ साहित्यकार

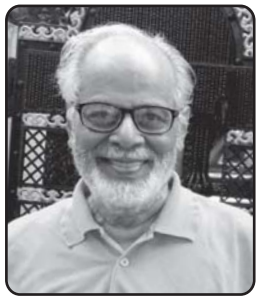

**अरविन्द चतुर्वेदी**
पूर्व वरिष्ठ अधिकारी
जनसंपर्क संचालनालय म.प्र

**कमाल खान कमाल**
वरिष्ठ पत्रकार, कवि

**जीवन सिंह ठाकुर**
वरिष्ठ साहित्यकार, इतिहासकार

**नवल जायसवाल**
वरिष्ठ छायाकार, साहित्यकार

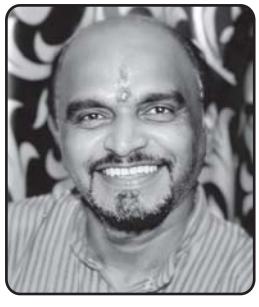

**बृज किशोर वर्मा**
वरिष्ठ प्रेस फोटोग्राफर

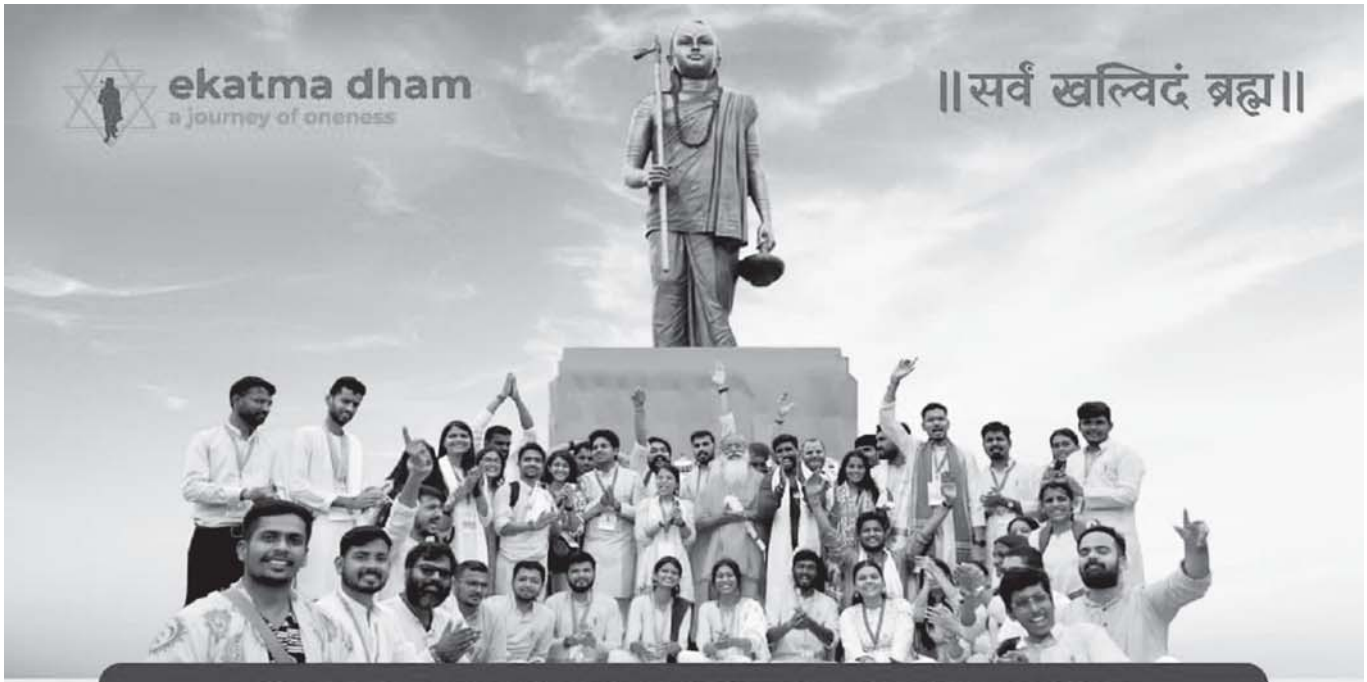

ekatma dham
a journey of oneness
॥सर्वं खल्विदं ब्रह्म॥
ADVAITA AWAKENING YOUTH RETREAT 2024
22 FEB - 02 MARCH HINDI
Sonipat, HR Tattvabodha
Swamini Anandamurti Guruma
05 - 14 JULY HINDI
Veliyanad, KL Sadhana Panchakam
Swami Swatmananda Saraswati
11 - 20 MARCH HINDI
Rajkot, GJ Tattvabodha
Swami Paramatmananda Saraswati
01 - 10 AUGUST HINDI
Rishikesh, UK Tattvabodha
Swami Paramatmananda Saraswati
03 - 12 APRIL ENGLISH
Coimbatore, TN Drig Drishya Vivek
Swamini Vimalananda Saraswati
08 - 17 SEPTEMBER HINDI
Coimbatore, TN Aparokshanubhuti
Swamini Vimalananda Saraswati
18 - 27 MAY ENGLISH
Veliyanad, KL Tattvabodha
Swami Avyayananda Saraswati
06 - 15 OCTOBER HINDI
Pune, MH Atmabodha
Swami Advaitananda Saraswati
21 - 30 JUNE ENGLISH
Chennai, TN Ratnamalika
Swami Mitrananda Saraswati
21 - 30 NOVEMBER ENGLISH
Chennai, TN Bhaja Govindam
Swami Mitrananda Saraswati
/ekatmadham | Register Here oneness.org.in

# कला समय

**27 वर्षों के महत्वपूर्ण विशेषांक...** **सांस्कृतिक धड़कनों का जीवंत दस्तावेज**

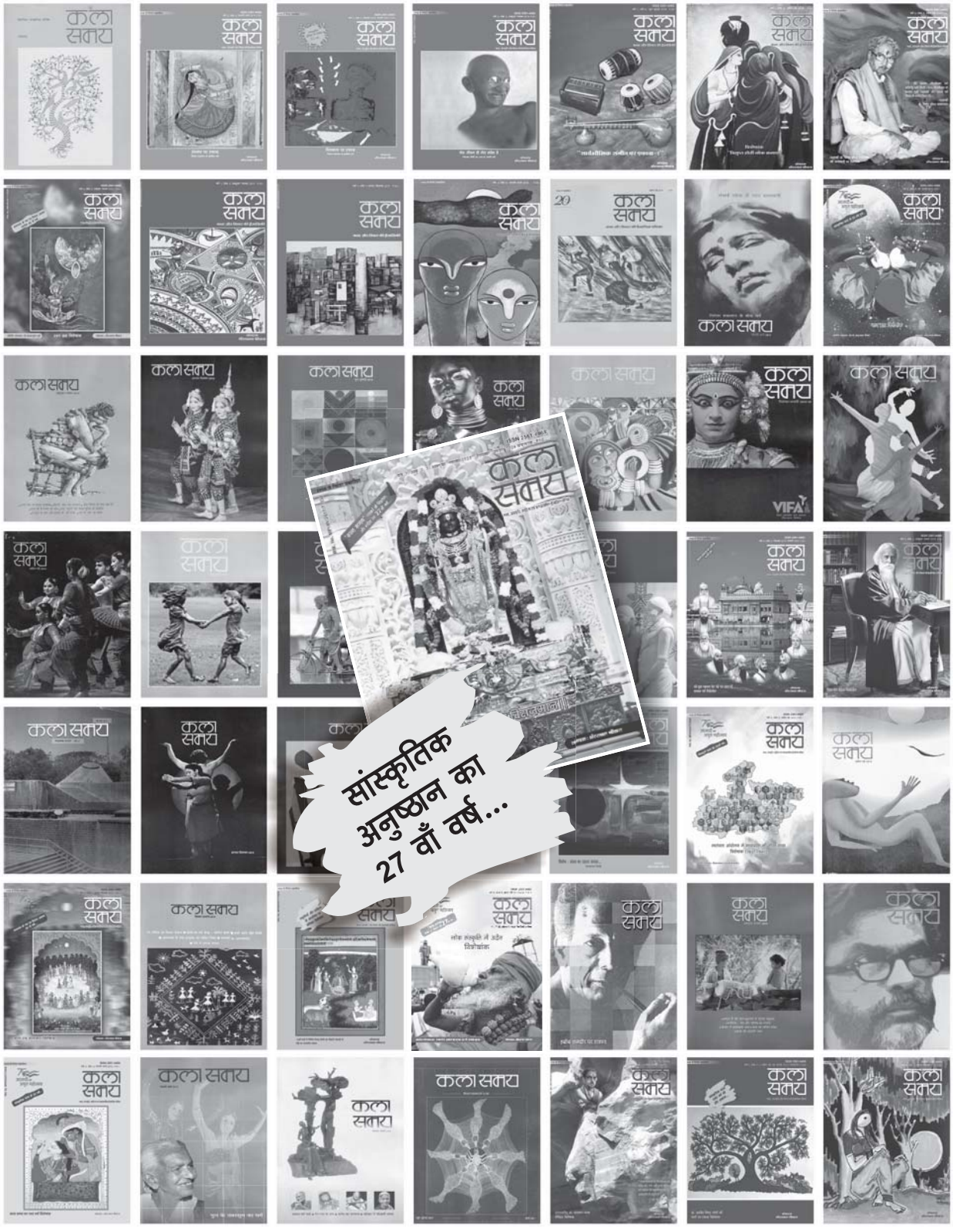

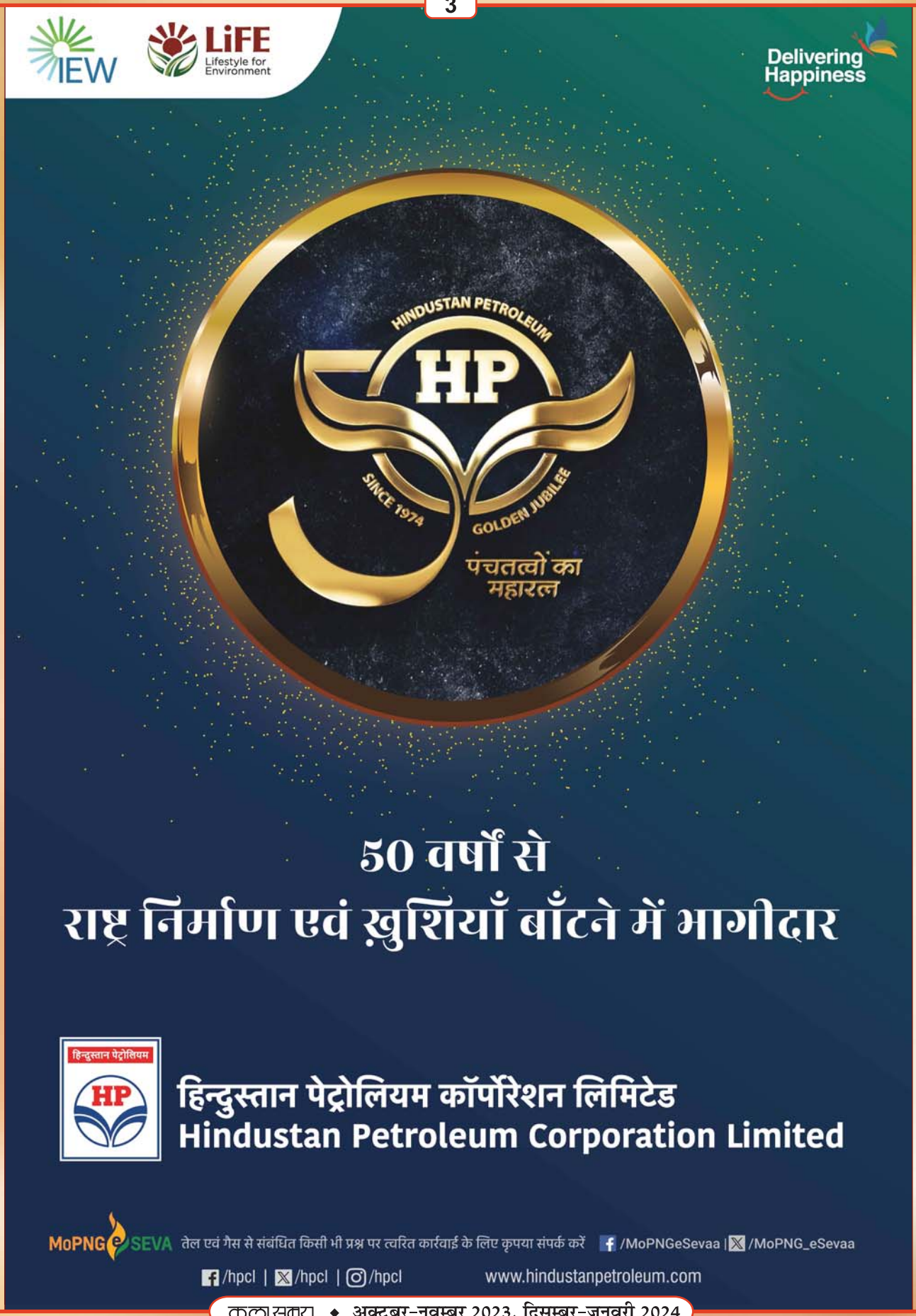
IEW
LiFE
Lifestyle for Environment
Delivering Happiness
HINDUSTAN PETROLEUM
HP
SINCE 1974
GOLDEN JUBILEE
पंचतत्वों का महारत्न
50 वर्षों से
राष्ट्र निर्माण एवं ख़ुशियाँ बाँटने में भागीदार
हिन्दुस्तान पेट्रोलियम
HP
हिन्दुस्तान पेट्रोलियम कॉर्पोरेशन लिमिटेड
Hindustan Petroleum Corporation Limited
MoPNG eSEVA
तेल एवं गैस से संबंधित किसी भी प्रश्न पर त्वरित कार्रवाई के लिए कृपया संपर्क करें
/MoPNGeSevaa | /MoPNG_eSevaa
/hpcl | /hpcl | /hpcl
www.hindustanpetroleum.com

श्री राम का नवनिर्मित मंदिर, अयोध्या धाम

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वत्वाधिकारी भँवरलाल श्रीवास द्वारा गणेश ग्राफिक्स, 26 बी, देशबन्धु भवन, प्रेस कॉम्प्लेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल, म.प्र. से मुद्रित एवं जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कालोनी, भोपाल ( म.प्र. )- 462016 से प्रकाशित। संपादक - भँवरलाल श्रीवास